Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

RAM SANDESH G.K.V.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

112396

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राम-सन्देश

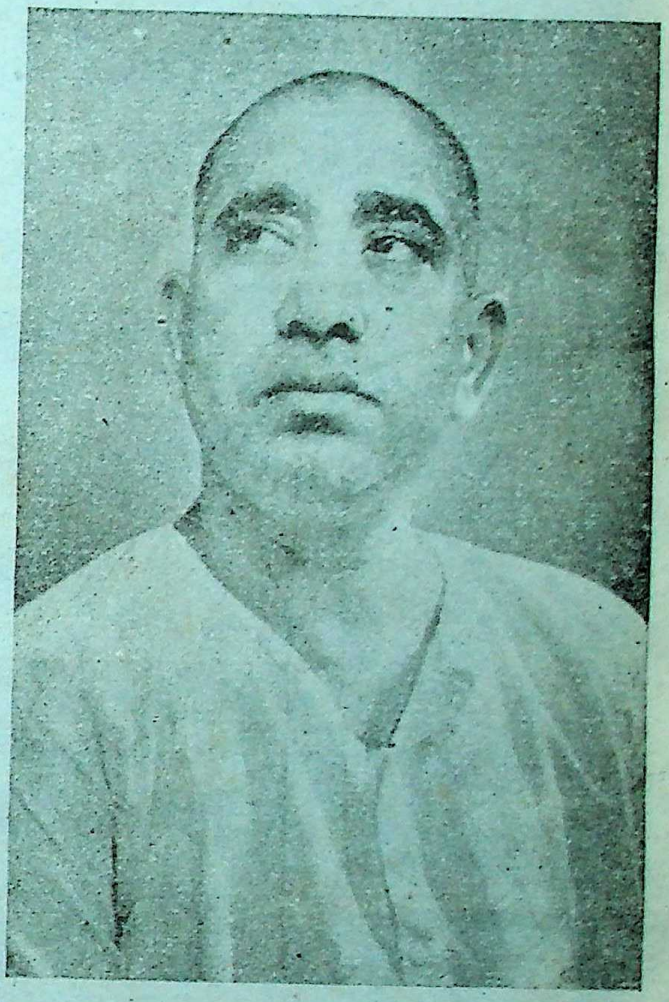

गुरुकुल कांगड़ी
13/3/78

आजीवन सदस्यता शुल्क : भारत में - १००/-, विदेश में —५००/-

—संस्थापक—

ब्रह्मलीन स्वामी हरिॐ जी महाराज

—व्यवस्थापक—

उपाध्याय अमर मुनि जी महाराज

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विषय - सूची

कहीं ऐसा न हो	—	१
सम्पादकीय	—	२
व्यावहारिक वेदान्त	—	५
ज्ञान किसको कहते हैं	—	७
बस यही प्रार्थना मेरी	—	१०
गीत	—	११
ज्ञान फुलवाड़ी	—	१२
चुनाव	—	१३
प्रवचन	—	१४
स्वामी राम के प्रति	—	१६
कृपया ध्यान दें	—	२०

Action With Satisfaction	—	21
Letter from Japan (Tokyo)	—	24
आश्रम समाचार	—	२५

मुख्य सम्पादक—
स्वामी हंस प्रकाश वेदान्ताचार्य, एम०ए० (दर्शन)

सह सम्पादक—
"निर्द्वन्द्व"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'राष्ट्र के हित के लिए प्रयत्न करना ही विश्व की शक्तियों अर्थात् देवताओं की आराधना है'
—स्वामी राम

वेदान्त, अध्यात्म, संस्कृति, धर्म एवं भक्ति का सजग सन्देशवाहक तथा
स्वामी राम के आदर्शों का उपस्थापक एकमात्र लोकप्रिय मासिक—

राम-सन्देश

वेदोपनिषदां तत्त्वम् सत्यं नित्यं सनातनम् ।
तत्सर्वं "रामसन्देशे" पत्रेऽस्मिन्नवलोक्यताम् ।।

वर्ष २७
अंक ३

वार्षिक शुल्क : १० रु०,
एक प्रति-८५ पै०,

कहीं ऐसा न हो

क्या तुम्हें अभी भी नहीं दिखाई दे रहा कि मैं थक गया हूँ
लड़ते लड़ते
इस आस की डोर से और उससे जिसे मैं लाना चाहता हूँ आसमान से
पृथ्वी पर ? १
जब-२ मैंने यह सोचकर कि मैं सफल रहा उसे धरती के पास लाने में,
मैंने थोड़ा सुस्ताना चाहा
और लम्बी साँस लेकर आंखें मूंदी तो पाया आखों के खुलने पर कि ६
वह आसमान में उससे भी ऊँची चल गई जितनी थी वो पहले
और मैं .....।
तुम देख नहीं रहे ? इस लड़ाई ने थका दिया है मेरे बाजुओं को
सारा तन कांप उठा है, पैर उखड़ना चाहते हैं, अभी थोड़ी देर बाद ७
शायद मैं बोल भी न पाऊंगा अपनी बात क्योंकि तन में जल तक शेष
न रहने के कारण ओंठ भी तो तर नहीं कर सकता,
हर समय यही लगता है कि आस की डोर छूट कर मुझे कहीं यह न ८
कह दे कि तेरा उड़ने आसमान पर उडने वाली, वस्तु को धरती पर
लाने का प्रयास निरर्थक है
और मुझे भीं मानना पड़े हृदय से उस बात को ।

मा र्च

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सम्पादकीय

लाइफ इज ए प्रोब्लम सोल्व इट' यह भी जीवन की एक परिभाषा है। इसमें भी बताया गया है कि जीवन क्या है। यद्यपि इसका अर्थ 'सोल्व इट' से अलग हटकर ही सामान्य, साधारण लोगों द्वारा किया जाता है। हर आदमी, जिसने विचार नहीं किया है इस पर, सीधा कह देता है 'जीवन एक समस्या है'। और तो और साथ ही 'अनसुलझी' और लगा देता है उससे पहले और आशा को छोड़कर कह देता है कि जीवन एक 'अनसुलझी समस्या है। लेकिन यह धारणा उसके साथ अन्याय है जिसने इसे अपनी अनुभूति से, चेतना से जीवन को समझने की कोशिश की और उसे, उस अनुभव को अभिव्यक्त किया शब्दों में और कहा लाइफ इज ए प्रोब्लम सोल्व इट 'जीवन एक समस्या है इसे सुलझाओ' समस्या जीवन का एक पहलू है और उसका दूसरा पहलू है समाधान।

समस्या ऐसी स्थिति की नहीं होती जिसके विषय में हम जानते न हों, और न ही ऐसी स्थिति में कही जा सकती है जिसे हम पूर्णतः जान चुके हैं। मनोवैज्ञानिकों के अनुसार समस्या है वह स्थिति जिसमें कर्त्ता अपने निश्चित लक्ष्य तक पहुंचने में अपने को असफल पाता है, लक्ष्य स्पष्ट है पर कैसे पहुंचे वहाँ तक इसके बारे में अभी साफ २ नहीं जाना गया है ऐसी स्थिति ही समस्या है। यहां लक्ष्य तो सिद्ध होता ही है और साथ ही यह भी पता चलता है कि कर्त्ता पाना भी चाहता है पर कैसे, किस साधन से प्राप्त करे लक्ष्य को, कैसे पहुंचे वहाँ तक यह नहीं समझ पा रहा है। इसी समस्यापूर्ण स्थिति में वह क्रियाएं करता है दोषपूर्ण, त्रुटिपूर्ण। गल्तियाँ हैं, करता है इसलिए कि वह प्राप्त करे उसे जो उसका लक्ष्य है। संक्षेप में जीवन में जीवन का उद्देश्य है लक्ष्य प्राप्त करना तभी दोष रहित होता है, तभी समस्याओं से छुट पाता है। और इसी को, 'सोल्व इट' को सुलझाओ इसे, को ही आचार्य शंकर ने भी जीवन कहा है। वे कहते हैं जीवन वह है जो निर्दोष है। जिसमें दोष नींह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

112396
Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है वहीं है जीवन। दोष तब तक है जब तक समस्याएं बनी हुई हैं। समस्याओं के रहते जीवन कभी भी दोष-मुक्त नहीं हो सकता क्योंकि अज्ञान गलतियाँ कराता ही रहेगा।

समस्या क्योंकि अज्ञान की दशा का संकेत करती है इसलिए समस्या बताती है कि उसे भगाने का, समाप्त करने का एक ही मार्ग है ज्ञान, जानकारी क्या, क्यों और कैसे की। उस ज्ञान की जिससे जीवन का रहस्य, जिसने समस्या सी बनाई हुई है, जाना जाये। ऋषियों ने "ऋतेज्ञानान्नमुक्ति" समस्यापूर्ण जीवन से मुक्त होने का मात्र ज्ञान को कारण बताया है, साधन बताया है। उपनिषद् के ऋषि तो जानने योग्य केवल 'ब्रह्म' को, जो सृष्टि का, जगत का मूल है, मानते है, सौम्य! वह ब्रह्म ही जगत का मूल कारण है, जानन योग्य है उसे जानो क्योंकि उसे जानने के बाद कुछ भी जानने योग्य नहीं रह जायेगा। सब कुछ जाना जाता है उसके द्वारा जो उस ब्रह्म को जान लेता है।

इस प्रकार जीवन को समझने के लिए आवश्यक है समस्या पूर्ण जीवन से अलग हटकर या उसी में से उस जीवन को भी देखने की कोशिश की जाये जो जीवन है समाधान रूप में। दोषमय जीवन से अतिरिक्त दोषरहित जीवन भी हमारे द्वारा जाना जाना चाहिए। और उस तरफ यदि दृष्टिपात करती है तो वह है वह दृष्टि जिसे अध्यात्म-दृष्टि कहते हैं। उसको सिखाती है वह विद्या जिसे अध्यात्म विद्या कहा जाता है। यही कारण है कि स्वामी विवेकानन्द से विदेश में यह पूछे जाने पर कि वह समस्त, राजनैतिक, सामाजिक, और राष्ट्रीय प्रश्नों का उत्तर कैसे दे देते हैं उन्होंने उत्तर दिया था 'मैं समस्त प्रश्नों का उत्तर इसलिए दे सकता हूँ क्योंकि मैंने इन क्या हूँ? वह क्या है? और यह क्या है प्रश्नों का समाधान प्राप्त कर लिया है। ईश्वर क्या है? जगत क्या है? और जीव क्या है इन तीनों प्रश्नों का समाधान जीवन के हर प्रश्न का समाधान दे सकता है। ये ही तीनों प्रश्न मौलिक है। इन्हीं तीनों प्रश्नों का विस्तार ही हैं जीवन के अन्य प्रश्न। और इनके समाधान से ही समस्त समाधानों की प्राप्ति होती है। यही कारण है कि व्यावहारिक वेदान्त का प्रतिपादन करने वाले आचार्यों ने प्रकृति के सिद्धान्तों के आधार पर ही, जिन्हें आज भौतिक विज्ञान के सिद्धान्त कहा जाता हैं, धर्म की व्याख्या की।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अन्त में यहां इतना ही कहना पर्याप्त है कि जीवन केवल समस्या ही नहीं है, समाधान भी है, जीवन केवल युद्ध ही नहीं हैं विजय भी है, जीवन केवल जीना ही नहीं मृत्यु भी है, जीवन केवल रहस्य ही नहीं हैं इसके मूल में कोई कारण भी है। केवल इन परिभाषाओं से अर्द्धांशों को लेकर जीवन में निराश होकर बैठ जाना मात्र कायरता है। वीरता इस बात में है कि हम जीवन की समस्याओं का समाधान प्राप्तकर अपने जीवन को दोषरहित बनाकर सच्चा, समाधान का, विजय का जीवन जीयें।

- आज हमारे बीच न रहे -

परमहंस स्वामी रामतीर्थ जी महाराज के कनिष्ठ सुपुत्र श्री ब्रह्मानन्द जी गोस्वामी का जयपुर में अपने निवास-स्थल पर ३ फरवरी को देहावसान हो गया, वे कुछ समय से रुग्ण थे। जयपुर राज्य में उच्च-पदों पर रहने के बाद उन्होंने अवकाश प्राप्त किया और अधिकतर एकान्तवास में ही रहे, कहते हैं कि उनकी आकृति स्वामी राम से बहुत मिलती थी और सहारनपुर में उन्होंने जिस प्रकार ॐ का उच्चारण किया उससे स्वामी राम की स्मृति ताजा होती थी।

रामदरबार उनकी धर्मपत्नी श्रीमति लक्ष्मी देवी गोस्वामी, सुपुत्री श्रीमति पुष्पा देवी जामाता श्री सन्तोष सिंह, भतीजे श्री लोकनाथ गोस्वामी आदि पारिवारिक सदस्यों के प्रति शोक व्यक्त करता हुआ स्वर्गीय गोस्वामी जी की पुण्यात्मा के लिए शाश्वत शान्ति के लिए कामना करता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गतांक से आगे:—

जनवरी १९०२ में भारत-धर्म-महामण्डल भवन मथुरा में स्वामी राम का व्याख्यान, श्रीनारायण स्वामी द्वारा लिखित नोटों से—

व्यावहारिक वेदान्त

कर्म

यदि मनुष्य की दृष्टि से अर्थात् व्यष्टि रूप से विचार किया जाय, तो मालूम होगा कि इनमें एक ऐसा अंश है, जिसको स्वतंत्र या स्वाधीन कर्म के नाम से अभिहित करते हैं, और एक ऐसा है, जिसको पराधीन, परतंत्र या प्रारब्ध (भाग्य) के नाम से प्रसिद्ध करते हैं। जैसे रेशम के कीड़े का हाल है कि जब तक उसने अपने भीतर से रेशम नहीं निकाला, तब तक वह स्वतंत्र है और तभीं तक वह स्वाधीन व स्वेच्छाचारी कहा जाता है; मगर जब रेशम निकाल चुकता है, तो फंस जाता है, अर्थात् परतंत्र कहलाता है। इसी तरह जो कर्म मनुष्य से हो चुका है, उसके कारण वह उसके फल भोगने के लिए परतंत्र या पराधीन है; मगर जो कर्म अभी तक किया ही नहीं, उसके कारण वह स्वाधीन है, और उसके करने का अधिकार रखने के कारण स्वतंत्र तथा स्वेच्छाचारी कहा जाता है। जैसे मकड़ी जाला बनाने बाद परतंत्र या पराधीन है और उससे पहले स्वतंत्र या स्वाधीन थी, या रेलगाड़ी, जब तक सड़क नहीं बनी हर ओर चलने के लिए स्वाधीन हैं, और जब सड़क बन गयी, तो उस पर चलने के लिए विवश है—अर्थात् सड़क पर चलने के बाद रेलगाड़ी उस पर चलने के बन्धन में आ जाती है—इसी तरह मनुष्य भी एक कर्म के करने से पहले उसके फल आदि से स्वतंत्र है, और कर्म के पश्चात् उसके फल भोगने में परतंत्र है। अतः मनुष्य में इन दो वर्तमान अंशों का नाम स्वतंत्रता और परतंत्रता या कर्म (पुरुषार्थ) और प्रारब्ध (भाग्य) है। यद्यपि कुछ लोग कर्म और भाग्य को एक ही गिरोह में गिनते हैं, अर्थात् इन दोनों के एक ही अर्थ करते हैं, मगर वेदान्त में भाग्य से तात्पर्य है परतंत्र, पराधीन अथवा जकड़ा हुआ—अर्थात् मनुष्य में वह अंश जो कर्मों के फल भोगने में परतंत्र वा विवश है—और कर्म से तात्पर्य है स्वतंत्र वा स्वाधीन, अर्थात् मनुष्य में वह अंश जो अभी फल आदि के बन्धन से मुक्त है, और स्वतंत्र वा स्वच्छाधीन है। अंग्रेजी में एक कहावत है कि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'मनुष्य अपनी प्रारब्ध बनाने का स्वयं अधिकार रखता है', अर्थात् 'मनुष्य अपना भाग्य अपने हाथों बनाता है। इसमें हमारे शास्त्र का भी यही सिद्धान्त है कि 'जैसा करोगे, वैसा भरोगे।' इसके अर्थ यही है कि 'जैसे कर्म या कामना करोगे, वैसे उनके फल दूसरे जन्म में या इसी जन्म में भाग्य के रूप में प्रकट हो जायेंगे।

लोग इस बात पर दिन रात रोते रहते हैं —"हाय! हमारी कामनाएं पूरी नहीं होती।" मगर वेदान्त इसमें यों कहता है— "प्यारो! अगर आपको रोना ही स्वीकार है, तो धाड़ मारकर रोओ इस बात पर कि आप की कामनाएं अपना फल दिए बिना नहीं रहेंगी।" यह सुनकर हरएक अनजान के मन में यह शंका उठती है कि यदि मान भी लिया जाय कि हमारी सारी कामनाएं पूरी होती हैं, तो ये क्यों पूरी होती है? इसके उत्तर में वेदान्त यह बताता है कि मन जिसमें संकल्प अर्थात् कामनायें उठती हैं, उसका मूल केवल आत्मदेव है, जो सत्यकाम और सत्यसंकल्प है, अर्थात् इसका प्रत्येक विचार और कामना सच्ची हुए बिना नहीं रहती। इस (आत्मदेव) को ही शक्ति या ईश्वर के नाम से अभिहित करते हैं। इसलिए यह आवश्यक है कि इसकी सारी कामनायें पूरी हों, जब कि वह अपना मूल सत्यकाम और सत्यसंकल्प रखता है।

शङ्का—अब यह प्रश्न उत्पन्न होता है कि वेदान्त का जब यह सिद्धान्त है कि मन की कामनाएं पूरी होती हैं, तो वे पूरी होती हुई दिखाई क्यों नही देतीं? क्योंकि किसी को भी अपनी कामनाएं हर समय पूरी होती दिखाई नहीं देती हैं। अतएव उपर्युक्त शास्त्र का सिद्धान्त बिलकुल मिथ्या और अशुद्ध है।

उत्तर—वेदांत इसका कारण यों बताता है कि जैसे बड़ी अदालत (chief court) और छोटी अदालत (small cause court) दो अलग-अलग अदालतें होती हैं। बड़ी अदालत में तो मुकदमें अति लम्बे-लम्बे और अधिक होते हैं, इसलिए उनकी पेशी की तारीख ६ वर्ष या उससे कुछ न्यूनाधिक रक्खी जाती है। इतने समय में संभव है कि मुद्दई मर जाय या जज साहब ही बदल जाय या वकील साहब आदि न रहें; मगर मुकदमें की पेशी अवश्य होती है। और किसी न किसी तरह का फैसला भी अवश्य होता है। चाहे चार या पांच पेशियों के बाद—अर्थात् यदि बहुत शीघ्र प्रयत्न किया जाय, तो १० या १५ वर्षों में निर्णय होता है, और दूसरी अदालत खलीफा के मुकदमें छोटे-छोटे और बहुत थोड़े होते हैं, इसलिए पेशी की तारीख भी उसी दिन या एक-दो दिन के बाद रक्खी जाती है और पहिले तो वह मुकदना कच्ची पेशी ही में तय हो जाता है।

—क्रमशः

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

★ "ज्ञान" किसको कहते हैं

गोपाल शरण शास्त्री

रूप को हमारे यहाँ रूप ही कहा गया है। मनुष्य बहुरूपधारी है, अतः उसके जो रूप हैं, वे कई रंग बदलते हैं। उन रंगो में जो एक रूपी रंग है, वह जब आयेगा, तभी मनुष्य का कल्याण होने वाला है। उसी के लिए जीवन में अभ्यास की आवश्यकता है। वह अभ्यास सत्संग के द्वारा ज्ञान ही दे सकता है। क्योंकि बदलते रूपों में आप भी खुद नहीं पहचान सकता है। उसमें तीनों गुण मौजूद हैं। वे गुण उसके अन्तर से निकल बाहरी वातावरण में मिलकर उसे नचाते रहते हैं। उन्हीं के वशीभूत प्राणी कभी कभी आत्महत्या तक कर डालता है या किसी अन्य की हत्या भी कर सकता है। यह जो उसके मनोभाव हैं, इनकी हरकतें प्रायः प्रत्येक मानव में निहित हैं।

मनुष्य को पता हीं नहीं चलता है कि उसका वास्तविक रूप है क्या। वह उन भावों में इतना तन्मय रहता है कि जीवन ही हाथ से निकल जाता है।

जीवन हाथ से न निकले और जीवन ज्योति से परिचय हो जाए उसके लिए संसार की महिमा पर भी हमारे शास्त्रों व पुराणों ने जोर दिया है। साथ हीं यह भी बताया है कि ऐसे संसार रूपी कीचड़ से बाहार निकलो।

शास्त्रों में वेदों में ज्ञान की बहुत बड़ी महिमा है-वही ज्ञान जिसके अन्तर्गत यह सारा विश्व प्रकाशमान है, क्योंकि विश्व ज्ञान पर आधारित है।

यदि ज्ञान नहीं तो कुछ भी नहीं।

एक आदमी के पास मणी हीरा से युक्त हार हो और किसी प्रकार की विपत्ति आ जाये तथा उस हार के गुण से वह अपरिचित भी हो, एवं उसे उसके सहीं मूल्य का ज्ञान न हो तो वह हजारों रुपयों वाला उस हार को पहनकर कंगाल ही बना रहता है। उसकी कंगाली दूर हो इसके लिये उसे उस हार का ज्ञान होना आवश्यक है। वह ज्ञान उसे कहीं से लाना नहीं पड़ेगा, केवल किसी नजर वाले का संग मिलना चाहिए, जो उसे बता सके कि यह जो तुमने हार पहना है यह रुपयों की खान ही है। यदि तू चाहे तो इससे विपत्ति टल सकती है। यह है ज्ञान का चमत्कार जिसके जानने पर उसे यह विश्वास हो जाता है कि उसका हार भी एक कीमती चीज है। यही अपने आप में घटाईये मन और आत्मा की पहचान ज्ञान ही कराता है। यह है ज्ञान की महिमा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अतः कोई भी क्षेत्र हो ज्ञान सर्वोपरि है। ज्ञान बिना-हीरे-जवाहरात पत्थरों के भाव बिक जाते हैं।

इसी तरह से यह मनुष्य-जन्म भी एक नायाव हस्ती है, पर इसे साधारण प्राणी साग-सब्जी के बदले बेच रहा है, उसे यह ज्ञान नहीं है कि मेरी गठरी में क्या है। तभी तो वह इस संसार में झोंकों की तरह झूल रहा है। कभी दुखी हो रहा है तो कभी सुखी, कभी एक को छोड़ दूसरे को पकड़ता है, कभी उसे भी छोड़ तीसरे को। पर सही रास्ता उसे नहीं मिल रहा—जिसके माध्यम से गन्तव्य स्थल प्राप्त कर स्वलक्ष्य की प्राप्ति करे। इसलिए इस संसार में ज्ञानवान का ही संसार में जीवन है, बाकी तो दिन ही पूरे कर रहे हैं।

ज्ञान के वृक्ष की जो महिमा है, उसके लिए जीवन में गोता मारना पड़ता है। एक गोताखोर समुद्र में से रत्न निकालता है, उसे यह भी मालूम हो रहा है कि समुद्र में बड़े-बड़े भयंकर जन्तु हैं। फिर भी वह जान को हाथ पर लेकर गोता लगाता है एवं रत्नों की प्राप्ति यथेच्छ करता है।

इस प्रकार मनुष्य का शरीर भी एक प्रकार का समुद्र है जिसमें रत्न भरे हैं। पर उन रत्नों की प्राप्ति के लिए बहुत कुछ करना अपेक्षित है। तथा रत्नों के अधिकारी वे ही हो सकते हैं जो जान को हथेली पर रखकर ज्ञान के समुद्र में छलांग लगाते हैं।

ज्ञान सर्वत्र मान्य है उससे बुझे दीपक जल उठते हैं। अज्ञान से जले हुए दिये शीघ्र ही बुझ जाते हैं। जीवन जिस ज्ञान के अन्तर्गत जलता है, वह भी ज्ञान का एक आश्रय है, आखिर संसार के सम्पूर्ण जीव ज्ञान के माध्यम में ही जी रहे हैं। ज्ञान तो प्रकाश है—प्रकाश रूप से सब जगह उसकी पूजा होगी।

यह ज्ञानवालों की विद्या है—सब से अन्तिम-विद्या है इसके पश्चात् कोई कर्म शेष नहीं रहता—यह विद्या गुरु से प्राप्त होती है गुरु तो दुनियां में बहुत मिल जाते हैं, पर उन गुरुओं की पहचान करने में ज्ञान की सर्व प्रथम सहायता चाहिए।

इसी प्रकार दुनिया का कोई भी ऐसा प्राणी नहीं है जो ज्ञानार्जन की दिशा में न लगा हो। पर ज्ञान का तात्पर्य उस भिक्षा से है जिसके बाद कुछ मांगना बाकी न बचे। यह लेने वाले से बड़ी उस देने वाले की तौहीन है जिसके पास आने के पश्चात वह पुनः अन्यत्र जगह जाकर झोली फैलाये। उसका झोली फैलाना उस देने वाले का घोर अपमान है जिसे दुबारा ऐसा करने के लिए बाध्य होना पड़े।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

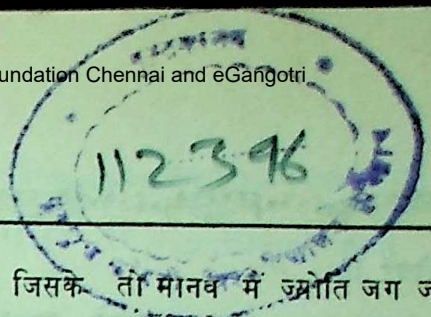

पारस नाम का एक पत्थर होता है, जिसके स्पर्शमात्र से लोहा सोना के रूप में बदल जाता है। गुरु अपने जैसा ही बना लेता है।

ज्ञान का यही परिचय है कि वह जहाँ भी होगा पूर्ण ही होगा। पूर्णता इसका धर्म है। इसलिए जहां भी पूर्णता है वहीं ज्ञान साकार है, जहां अपूर्णता है वहां ज्ञान समर्थ के रूप में तो भले ही हो, पर उसका प्रत्यक्ष रूप नहीं।

गीता में योगीराज श्रीकृष्ण ने अर्जन को इसे गुह्यतम ज्ञान कह कर बताया है। यह वह राज है, जो जब तक राज रहता है, तब तक जीवन सुलझता नहीं, बल्कि जितना सुलझाने की कोशिश की जाती है उतना ही उलझता है, इसके लिए तरीका चाहिए।

वही ज्ञान अन्तर का परिचय जब देता है तो मानव में ज्योति जग जाती है, जिसके लिए हम लोग सदा सतत् प्रयत्नशील रहते हैं। जिसके जलते ही अन्धकार विलीन हो जाता है और प्रकाश पुञ्ज चारों तरफ प्रस्फुटित हो जाता है।

मनुष्य को पता ही नहीं कि वह क्या कर रहा है, वह एक मशीन की तरह स्वचालित रूप में मन के कहने पर करता ही चला जा रहा है। पशु ऐसा नहीं। भले ही पशु समझदार जीव न हो, पर वे मनके कहने पर भी विवेक का सहारा ले लेते हैं।

किन्तु दुःख का विषय तो यह है कि मनुष्य सब प्रकार से जानते हुए भी ज्ञानवान होते हुए भी पता नहीं क्यों। मन के बहकाने पर "ज्ञान" को खो बैठता है।

मैं भारतवर्ष हूँ

" भारतवर्ष मेरा शरीर है। कन्या कुमारी मेरे पैर और हिमालय मेरा सिर है। मेरी जटाओं में गंगा बहती है और मेरे सिर से ब्रह्मपुत्र और सिन्ध निकली हैं। विन्ध्याचल मेरी ही कमर की पेटी है। कोरोमण्डल मेरी बायीं और मालाबार मेरी दाहिनी टांग है। मैं सम्पूर्ण समूचा भारतवर्ष हूं। उसका पूर्व और पश्चिम मेरी बाहें हैं मेरा प्रेम सार्वभौमिक है। ओ मेरे शरीर की आकृति कैसी है! मैं खड़े हो कर उन्नत आकाश पर दृष्टिपात कर रहा हूं। मेरी अन्तरात्मा विश्वात्मा है। जब मैं चलता हूं, मैं सोचता हूं कि भारत चल रहा है। जब बोलता हूं तब सोचता हूं कि भारत बोल रहा है। जब श्वांस लेता हूं तब भारत ही श्वांस लेता हैं, मैं भारतवर्ष हूं। "

—स्वामी राम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(सरोवर)

बस यही प्रार्थना मेरी

शान्ति डबराल 'बावड़ी'

कुञ्जों के मृदु झुरमुट की
गहरी श्यामल छाया,
उस छाया के पीछे
झिलमिल नीली काया,
छोटे – छोटे कर उसके
हिल हिल व्यथा सुनाते,
ओ! शुष्क पंथ के राही
अपनी प्यास बुझा ले।
पातों के लघु दोने में
भर अश्रु नीर यह मेरा,
लहरें उठें न उसमें
कंपन ही मेरा बसेरा।
कहते जा अपने पय में
ओ! समता की हिल्लोरें,
उफन न आवे मुझमें
हों केवल कल्लोले,

चहुं ओर घने पेड़ों में
बैठे विहगावलियां,
चंचु डुबोवें मुझमें
भीग उठें फिर कलियां,
सोम सूर्य हैं मुझमें
बसी तारकावलियां,
सतवर्णी इन्द्रधनुष है
अरुण जलद की कलियां।
नील मेघ छा जाते
सर–सर वर्षण करते,
छोटी – छोटी बूंदों से
अंक मेरा हैं भरते।
सभी सुलभ हैं मुझको
फिर चाह रही क्या मेरी,
ओ लोगो मुझे न छेड़ो
बस यही प्रार्थना मेरी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

॥ गीत ॥

बलदेवराज "शान्त"

स्वप्न सब हवन हुये
पल सब पवन हुये
साधना विफल बनी
आराधना विफल बनी
नयन सदा सनीर हैं।
रुके त्रिविध समीर हैं
पर, तुम्हारी बाँह का, आसरा मिला नहीं!
आसरा मिला नहीं॥

हर सुबह हवा चली
हर सुबह दुआ मिली
हर सुबह किरन मिली
सांस को शरन मिली
पीर पोर पोर है।
दर्द का न छोर है।
पर, तुम्हारी छाँह का, आसरा मिला नहीं!
आसरा मिला नहीं॥

दाम गाँठ के लुटे
राह में मरे मिटे
तन के चीर भी फटे
अंग अंग थे कटे
आग पर चरण धरे।
रोज ही मरण वरे।
पर, तुम्हारी चाह का, आसरा मिला नहीं!
आसरा मिला नहीं॥

न फिर हिले अधर मधुर
उमर न फिर सकी सुधर
न ज्ञात है कि हो किधर?
जरा न की नजर इधर!
नगर नगर में खोज की
डगर डगर में खोज की!
पर, तुम्हारी राह का, आसरा मिला नहीं!
आसरा मिला नहीं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

" ज्ञान फुलवाड़ी "

शहनशाह राम

★ जो कुछ हम ईश्वर पर छोड़ते हैं उसे ईश्वर स्वयं पूरा करता है, और हमें आशीर्वाद देता है जो, काम अपने लिये चुनते हैं कि हमारा निजी होना चाहिये, उसे ईश्वर अलग छोड़ देता है।

★ जो कुछ हमने अपने साथ किया है, कोई अन्धा भी अपने साथ ऐसा नहीं करेगा, घर के अन्दर हीं घर के स्वामी को गुम किए बैठे हैं। हम तो अन्धों से भी अन्धे हैं कि घर में रहते हुए स्वामी को नहीं देख सकते।

★ हरएक हमें आदेश देता है, बैठो न, खड़े न रहो। आगे बढ़ो। कोई संकट नहीं, संकट का ख्याल ही संकट है।

★ ज्ञानवान के पास तो, कोई समान हीं नहीं है, जिससे यह आगे जन्म ले सके इसलिये वह मृत्यु से भी मुक्त है।

★ बूंद रोने लगी ओर बोली, हम लोग सागर से कितने भिन्न हैं, सागर उस की बात पर हँसने लगा और बोला हम सब पानी हैं।

स्वामी निर्मल

* ज्ञानी को दुःख तो होता है, किन्तु वह दुःख से दुःखी नहीं होता, यही उसकी विशेषता है।

* एक का ही अन्त पा लेना एकान्त है, अनेक का अन्त तो पाया ही नहीं जा सकता।

* नदी तैरने से पार होती है। भवसागर शुद्ध विचार एवं असंगता प्राप्त हो जाने से पार होता है।

* पुत्र पर अपनेपन का दावा मिथ्याभिमान है ; पिता तो निमित्त मात्र है, पैदा करने वाला तो ईश्वर है।

* दिमाग खुला हो, हृदय विनम्र हो, तो लक्ष्य प्राप्ति में देर नहीं होती।

* परमात्मा की प्राप्ति भिखारी बन कर नहीं किन्तु अधिकारी बन कर होती है, अधिकारी वहीं होता है जो मैं को मिटा दे। मैं ही इसके अधिकार में बाधक है।

❀ लगाव–तनाव खिंचाव व दबाव चुनाव ये ही बन्धन के हेतु हैं जीवसाक्षी को कोई बन्धन नहीं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वामी रामतीर्थ मिशन (रजि०)

स्वामी रामतीर्थ मार्ग (स्वामी हरिओम नगर) अलीगढ़-२०२००१

१ सर्व श्री आनन्दी लाल जी बंसल-प्रधान
२ " खैराती लाल जी जुनेजा-उपाध्यक्ष
३ श्रीमती बहिन विमला रानी जी बजाज "
४ श्री बृज किशोर केला जी "
५ " श्याम लाल जी एडवोकेट "
६ " रमेश चन्द्र अरोरा "
७ " हंसराज सचदेवा — मुख्य मंत्री
८ श्रीमती बहिन शकुन्तलारानी मदान — मंत्री
९ श्री ठा. महेन्द्र सिंह जी कठेरिया — उपमंत्री
१० आचार्य पं० रमेशचन्द्र ठक्कुर — प्रचारमंत्री
११ श्री अशोक कुमार जी मनूजा — कोषाध्यक्ष
१२ " भगत धर्मपाल जी तुली—उपकोषाध्यक्ष
१३ " श्रीराम जी — पुस्तकालयाध्यक्ष
१४ " चमनलाल वत्रा — आय-व्यय निरीक्षक

सदस्य कार्य-कारिणी

१ श्री ओम् प्रकाश जी पुरी सदस्य
२ झम्मन दास जी अरोरा "
३ नरेन्द्र कुमार जी दुआ "
४ हरी शंकर जी गुप्ता "करुण" "
५ श्रीमती बहिन रामप्यारी जी पाल "
६ " " निर्मल रानी अरनेजा "
७ " " सरला जी कुमार "
८ " " बंशी जी भाटिया "
९ " " फूलावन्ती जी अरोरा "
१० " " पद्मा रानी जी अरोरा "
११ " " रमेश रानी जी मनूजा "
१२ श्रीमती बहिन कैलाश वन्ती जी सहगल - सदस्
१३ " सुमित्रा रानी जी कालरा
१४ " गुलाब देवी जी गोयल
१५ सर्व श्री पं ओम प्रकाश जी गौड
१६ " श्री जसवन्त लाल डंग
१७ " कृष्णा नन्द जी अरोरा
१८ " बी० एन० जी अरोरा
१९ " ए० पी० शर्मा
२० " प्रदीप कुमार जी चावल
२१ " महेशचन्द्र जी अग्रवाल
२२ " प्रयाग नारायण जी अग्रवाल
२३ " राजन जी बजाज
२४ " उमा शंकर जी टंडन
२५ " मोती लाल जी आर्य
२६ " हरसरूप जी गोयल
२७ " रामजी राम शर्मा जी

संरक्षक मण्डल

सर्व श्री वा० सुरेन्द्र कुमार जी सहगल
" मोहन सिंह जी सोडी
" किशोर जन्द्र जी पाल
" कुन्दन लाल जी मनूजा
" राज कुमार जी कोहली, गाजियाबाद
" सेठ मामराज जी अग्रवाल कलकत्ता
" श्री अमर चन्द्र जी गान्धी
" उमा शंकर जी टंडन (अस्पताल इंचार्ज)

प्रेषक—हंसराज सचदेवा, मुख्य मन्त्री

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रवचन

★ श्री स्वामी हरिॐ जी महाराज

यदि एक विद्यार्थी (M. S. C) एम० एस सी० पास करने के पश्चात् गुड़ शक्कर तोलने के लिये बैठ जाए, व पान की दुकान खोल ले हम उसे बुरा तो नहीं कहेंगे परन्तु इतना अवश्य कहेंगे कि इस छोटी सी दुकानदारी के लिये एम. एस सी. पास करने की क्या आवश्यकता थी। इसके लिये तो साधारण दुकानदारी का हिसाब काफी था। इसके अतिरिक्त यदि कोई इन्जीनियरिंग व अविष्कार करनी थी तो इतनी बड़ी विद्या की क्या आवश्यकता थी ? इसी प्रकार यदि हमें संसार के कष्ट दुःखी कर रहें हो तथा राग द्वेष चिन्ता और मोह-ममता यदि हमें पूर्ववत ही व्याय रही हो तो सत्संग में बैठकर सत्संगी कहलाने की क्या आवश्यकता और गीता तथा उपनिषद् ज्ञान श्रवण करने की क्या जरूरत ?

सत्संगी तथा जिज्ञासु का मार्ग संसारी मनुष्य से भिन्न है और संसारी का इन दोनों से भिन्न मार्ग होता है। जिज्ञासु का शरीर दुनियां का व्यवहार करता है और हृदय उसका परमात्मा के साथ रहता है। स्थूल संसार के लिये होता है। दुनियां के व्योपारी हृदय में तो कपट रखते हैं परन्तु आचरण में ठीक उतरते हैं। अर्थात् शरीर द्वारा अच्छी २ हरकतें करते हैं और जिह्वा द्वारा ऐसे सुन्दर शब्द बोलते हैं कि दुनियादार उन्हें भला पुरुष समझे परन्तु उनके हृदय में घृणा भरी हुई होती है। यही दुनियादारी है, इसे धोखा कहते हैं और दूसरे शब्दों में इसे ही नीति कहते हैं।

जब महात्मा गांधी जी से यह कहा गया कि आप ने इस विषय में अशुद्धि की है तो उन्होंने प्रत्युत्तर में कहा कि इस शरीर द्वारा सैकड़ों अशुद्धियां होती हैं, हो चुकी है और होंगी परन्तु मेरा दिल पूर्णतया शुद्ध और साफ है। प्रयोग अवस्था में अशुद्धि हो सकती है परन्तु हृदय निर्बल नहीं होना चाहिए। एक निर्धन के पास धन नहीं है दान का समय आ जाता है और वह शुद्ध हृदय द्वारा दान

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करना चाहता है। किन्तु धनाभाव होने के कारण दान कैसे करे ? परन्तु उसका हृदय परमात्मा के साथ है। दूसरे हृदय जानता है कि लाखों रुपये पास पड़े हैं, परन्तु शब्द द्वारा कहता है कि हालत अच्छी नहीं दान क्या करें, इस तरह कह कर वह दुनियां के सामने सच्चा बन जाता है। दुनियादार संसार के सामने तो सच्चे बन जाते हैं परन्तु भगवान के प्रति वह झूठे ही बने रहते हैं। वस्तुतः यह होना चाहिए कि दुनियां हमें झूठा कहे तो कोई परवाह नहीं परमात्मा के प्रति हम सच्चे बन जाए तो फिर हमें कोई बाधा नहीं हो सकती। हमारी पदवी ऊंची से ऊंची बढ़ती जायेगी। दुनियादर प्रयोगशाला में कभी भी अशुद्धि नहीं आने देता परन्तु जिज्ञासु अपने मन को शुद्ध रखता है। स्वामी राम से पूछा गया कि हजरत ईसा खुदा का पुत्र था तो उन्होंने उत्तर दिया कि हां, क्योंकि हजरत ईसा की मां और बाप सर्वदा ब्रह्ममयी अवस्था में रहते थे, किसी तरह उनका मिलाप हो जाता है और ईसा उत्पन्न होते हैं। इसलिये वह खुदा का ही पुत्र था। मन्सूर को जब सूली पर चढ़ाया गया तो उसके खून की बूंदों को एक मुवति ने पान किया। उसके गर्भ से फिर शमस्तब्रेज उत्पन्न हो जाते हैं। इसी तरह यदि आप का हृदय भी उस परमात्मा से मिला रहेगा तो आप के यहां भी समस्त, ध्रुव तथा प्रह्लाद जैसी सन्तान उत्पन्न होगी। यदि आपका हृदय महान है तो आप भगवान के प्रियपात्र बन जायेंगे और सारी प्रकृति के स्वामी बन जायेंगे। यहाँ पर मौलाना रूम लिखते हैं—

तू अज ओ गश्ती
हमाचीज अज तू गश्त ॥

इस कविता के दो अर्थ हैं। प्रथम यदि तू उस परमात्मा का हो जाता है तो संसार की सब वस्तु तेरी ही हो जायेंगी और यदि तूने उससे मुख उल्टा लिया तो संसार का प्रत्येक पदार्थ तुझ से मुख फेर लेगा। यहां पर गुरु नानक भी लिखते हैं-

इक तू मेरा हो रहे तेरा सब जग हो।

यदि तू केवल इस परमात्मा बन जाता है तो सारी सृष्टि तेरी हो जायेगी। अज्ञानी लोग संसार को अपनाते हैं और अपना हृदय भगवान से फेर लेते हैं परन्तु ज्ञानी अपने हृदय को भगवान से मिलाकर दुनियां से ज्यूँही ठोकर लगा देता है तो दुनियां की प्रत्येक वस्तु उसकी हो जाती है।

एक राजा जंगल में जला गया, चलते चलते जब थक गया तो एक बगीचे में जाकर बैठ गया। माली से बोला कि मुझे प्यास बहुत सता रही है, एक गिलास जल का दो। माली तत्काल गया और २-३ मिनट के भीतर ही एक गिलास अनार के रस का भर कर ले आया, राजा ने पान कर लिया, उसे पान कर राजा प्रसन्न हुआ और माली से कहने लगा कि बहुत ही स्वादिष्ट यह रस है। यह किसका बगीचा है? माली कहने लगा कि यह हमारे मालिक का उपवन है। तब उसने माली से कहा कि एक गिलास और ले आओ। अब माली जाता है और दस मिनट

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में गिलास जल से भरता है। उधर राजा सोचता कि आहा! इतना सुन्दर मेरा उपवन है। थोड़ी देर के पश्चात् माली जल लेकर आता है तो राजा माली से पूछता है, प्रथम बार तो तुम बहुत शीघ्र ले आये अब क्यों इतनी देर लगा दी ? माली यद्यपि शारीरिक दृष्टि से तो निर्धन था परन्तु था प्रभु का प्रेमपात्र। उसने प्रत्युत्तर दिया—कि महाराज। जब मैं प्रथम बार जल लाया था तो तेरी खुदी उसमें नहीं थी। ज्योंही तूने उसमें खुदी की मोहर लगाई तो तेरा हृदय संकुचित था इसलिये अनारों में रस सूख गया और देर लग गई।

ज्योंहि आपका हृदय विशाल हो जाता है और आपके दिल में मोह ममता नहीं रहतीं तो आप की दुनिया हरी भरी हो जाती है। ज्योंहि आप अपने हृदय को भगवान् के लिये शुष्क कर देते हैं तो आप की दुनिया भी शुष्क हो जाती है।

प्रश्न आया है कि प्रार्थना क्या करनी चाहिए ?

यह शरीर हिन्दू व मुस्लिम हो सकता है परन्तु हृदय तो सत्य का ही अभिलाषी रहता है। उसके लिये हिन्दू मुस्लिम का कोई भेद नहीं। भगवान् का सत्य सार्वभौमिक है। स्वामी राम कहते हैं कि मैं तो आपको तरींका बतलाने के लिये आया हूं। एक बच्चा दुकान पर बैठा है; एक ग्राहक आता है। किसी चीज का भाव पूछने पर वह बच्चा तीन रुपये सेर बतलाता है। ग्राहक एक छटाक वस्तु लेता है और बच्चा साथ वाली दुकान से उसका मूल्य मालूम करता है। दूसरा ग्राहक डेढ़ छठाँक लेता है। बच्चे को फिर दुकानदार से पूछना पड़ता है। इतने में एक भला आदमी आता है। वह बालक को बतलाता है कि जितने रुपये का सेर होती है उतने आने की एक छठाँक होती है। अब उसे किसी अध्यापक की आवश्यकता नहीं रहती। ऐसे ही यदि आप गुरुनानक के भक्त हैं और वाहिगुरू का जप करते हैं तो बहुत ही अच्छा है। ऐसे ही यदि आप भगवान राम के भक्त हैं व कृष्ण के साकार के उपासक हैं व निराकार के परन्तु प्रार्थना का अर्थ यह है कि पर अर्थ हो जाना स्वामी राम यहां पर कहते हैं कि यदि एक आदमी रिसीवर को पकड़ कर बातें करनी प्रारम्भ कर देता है परन्तु जब उसे प्रत्युत्तर नहीं मिलता तो रिसीवर को क्रोध से फोड़ डालता है और यह नहीं देखता कि टेलीफोन का नम्बर मिला भी है या नहीं। इसी प्रकार प्रार्थना करते समय हमें यह देखना चाहिए कि हमारे हृदय का सम्बन्ध भगवान् के साथ मिला है कि नहीं। कहीं हृदय के तार तो नहीं टूटे हुए। लोग कहते हैं कि यदि दिल में कामना रखे तो हृदय भगवान् के साथ नही मिल सकता। यदि हृदय को भगवान् के साथ नहीं मिला दें तो कामना का विचार नहीं रहता फिर भगवान् को अपनी इच्छा कैसे कहीं जाए ? जिज्ञासु के सामने यह कठिनाई उपस्थित हो जाती है। यह उसकी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भूल है।

जब हृदय भगवदार्पण हो जायेगा तो वह अन्तर्यामी नारायण हृदय खोलकर देख लेगा कि इसके अन्दर कौन सी कामना भरी पड़ी है? वह हृदय की जांच पड़ताल करने वाला है। शरीर बेशक संसार का काम करता रहे परन्तु हृदय भगवान के साथ रहना चाहिए।

अपरा भक्ति दुनिया के लिये होती है और परा भक्ति भगवान के लिये होती हैं। ज्योंहि आप प्रार्थना करते समय अपने आप को भगवान को अर्पण कर देते हैं तो भगवान भी तत्काल ही उनका नगद मूल्य अदा कर देते हैं।

एक जिज्ञासु सिनेमा में इसलिये नहीं जाता कि वहां जाकर उसे अपने इष्टदेव का रूप भूल जाता है। जो रूप हृदय में बैठा होता है वह बाहरी दृश्यों में मस्त होने से उठ जाता जाता है। सरदार पूर्णसिंह के कमरे में हर वक्त स्वामी राम की यह कविता लिखी रहती थी :—

हर आन खुशी हर जान खुशी,
हर वक्त अमीरी है बाबा!
जब आशिक मस्त फ़कीर हुए,
फिर क्या दिलगीरी है बाबा॥

सब से उत्तम प्रार्थना तो यह है कि सब इच्छाओं को भूलकर अपने आपको भगवान के लिए समर्पण कर दिया जाय। इससे निम्नकोटि की प्रार्थना यह है कि प्रभु! मेरे हाथ चौबीस घंटे दुनिया के काम करते रहें। इन्हें अपना कार्य करने की शक्ति दे। यह चौबीस घंटे ही राम कार्य करें। मैं दुनिया के किसी भी मनुष्य से न मांगूं मेरे हाथ केवल तेरे ही आगे मांग कर सकें। मेरे नेत्र इन नश्वर मूर्तियों को देखने के स्थान पर तेरे रूप को ही निहारते रहें। मेरी जिह्वा दुनिया की वृथा बक-वाद करने की जगह तेरा ही गुणवाद गायन करे।

जैसे आप लोग एक भंगी के हाथ का इस-लिये नहीं खाते कि वह मलिन रहता है इसी प्रकार भगवान उन लोगों को अपने यहां स्थान नहीं देते जिन का हृदय मलीन रहता है। वैष्णव साधु रामानन्द, रामानुज, महात्मा बुद्ध इत्यादि कई महान आत्माएं अपने सेवकों तथा भजन करने वालों के अतिरिक्त अन्य किसी के हाथ का नहीं खाती थी। भगवान का लेन देन जिसके साथ रहता है वह दुनिया में बड़ी-बड़ी हस्तियां होती हैं। इसलिये हमें सर्वदा यही प्रयत्न करना चाहिए कि हम भी इतना ही ऊंचा उठे कि हमारा लेन देन भी परमात्मा के साथ हो जाये। हमें सर्वदा प्रभु से यह प्रार्थना करनी चाहिए कि हे प्रभो! तू मुझे कब अपनायेगा? तूने रविदास, सन्त कबीर वाल्मीकि तथा भंगियों तक को अपनाया। मेरे को भी अपना ले। मेरे हाथ तेरी ओर क्यों नहीं झुकते? इससे परमात्मा के साथ हृदय का सम्बन्ध बंधा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रहता है। वृत्ति अच्छी रहती है। ऐसा करते करते एक दिन वह वक्त आयेगा कि चलते फिरते और संसार का काम करते रहने पर भी भगवान आपके साथ बातें करने लगेंगे जैसे टैलीफोन पर बातें होती हैं, उसी प्रकार वैकुण्ठ में बैठे हुए भगवान आपके हित की बातें कहेंगे और कहेंगे कि अमुक समय पर तेरा शरीरान्त होगा, अमुक स्थान पर चला जा वृत्ति अच्छी रहेगी। यह बात सोलह आने सत्य है। यह शब्द केवल मेरे ही नहीं है बल्कि बड़े-बड़े महापुरुषों का भी यही कथन है। जब भी प्रार्थना पर बैठो तो यह कहो कि प्रभो! तू कब मुझे शक्ति देगा, अभी तक तूने मुझे क्यों नहीं अपनाया।

उपासना का अर्थ है पास बैठना। जैसे एक रोगी के पास बैठने से रोग हो जाने का भय रहता है। इसी प्रकार किसी महात्मा का ध्यान करने से मनुष्य में वह रोशनी उत्पन्न हो जाती है और मस्ती आ जाती है। जगद्गुरु शंकराचार्य का मण्डनमिश्र की स्त्री सरस्वती से शास्त्रार्थ होता है। सरस्वती कहती है कि आत्मानन्द की अपेक्षा विषय सुख कोई कम नहीं। जगद्गुरु उससे एक मास की अवधि मांगते हैं। एक राजा का शरीरान्त हो जाता है। उसके शरीर में अपनी जीवात्मा को प्रवेश कराते हैं और विषयानन्द का सुख अनुभव करके देखते हैं। तत्पश्चात् उस शरीर से निकल कर पुनः मण्डनमिश्र की स्त्री से शास्त्रार्थ करते हुए कहते हैं कि विषयानन्द आकर पुनः चला जाता है परन्तु आत्मानन्द आकर पुनः नहीं लौटता सदा स्थायी रहता है। कृपया आप भी इसी आत्मानन्द को अपनाइये॥ ॐ शान्ति शान्ति शान्ति

फार्म नं IV (देखें नियम नं० ८)

१- प्रकाशन स्थान — स्वामी रामतीर्थ मिशन राजपुर देहरादून (उ० प्र०)

२- आवृत्ति — साप्ताहिक

३- मुद्रक — स्वामी अमरमुनि (न्यू आइडियल प्रिन्टिंग हाउस नेशविला रोड, दे० दून से मुद्रित)

(अ) राष्ट्रीयता — भारतीय

(ब) पता — स्वामी रामतीर्थ मिशन राजपुर, देहरादून

४- प्रकाशक — स्वामी अमरमुनि

(अ) राष्ट्रीयता — भारतीय

(ब) पता — स्वामी रामतीर्थ मिशन राजपुर, देहरादून

५- सम्पादक — स्वामी हंस प्रकाश

(अ) राष्ट्रीयता — भारतीय

(ब) पता — स्वामी रामतीर्थ मिशन राजपुर, देहरादून

६- स्वतवाधिकारी का नाम एवं पता — स्वामी अमरमुनि स्वामी रामतीर्थ मिशन राजपुर, देहरादून

मैं स्वामी अमरमुनि निश्चित घोषणा करता हूं कि उपर्युक्त तथ्य मेरी जानकारी तक सत्य है।

हस्ताक्षर

स्वामी अमरमुनि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"स्वामी राम के प्रति"

[रचयिता 'मलयज']

हे मौन तपस्वी ! चिर महान !
अज निशा की अरुनशिखा हे ! हे वेदों के विमल गान !
हे मौन तपस्वी ! चिर महान !

तव व्यापक उर की ज्योति अमर ले युग की तन्द्रा टूटी,
मोहालस नयनों में जग की सत्य-किरण नव फूटी;
जागा प्रकाश नव-चेतन सुख-दुख के मलिनाञ्चल में,
आत्मा के गान बिखरकर फैले अग-जग-अन्तर में।

विषम-सिन्धु के चतुर् यान्त्रिक !
भारत के सांस्कृतिक-यान !
हे मौन तपस्वी ! चिर महान !

पावन गंगा के तट पर है याद अभी वह वानी,
युग युग बीतेंगे फिर भी है, औ शेष तेरी रहेगी निशानी,
तेरे उज्ज्वल शब्द कि—"जीवन एक कठिन साधन है",
पंकिल-सुख में नहीं सार कुछ, सुखदा आराधन है।

मानव का जीवनादर्श है
जल मध्य 'कमल समान',
हे मौन तपस्वी ! चिर महान !

अध्यात्म-सूर्य के रश्मि-जाल से पूर्ण विश्व-नभ सुन्दर,
वेद-पुष्प की मधुर सुरभि से सुरभित गिरि-कानन-सर;
यह विश्व-कल्पना देव ! तुम्हारे उर की महानता है,
सत्य-केतु-सा अडिग अचल ! यह शाश्वत अनुपमता।

तेरी गौरव-गाथ अमिट है।
हे मेरे योगी सुजान !
हे मौन तपस्वी ! चिर महान !

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रेम और भक्ति

प्रेम का अर्थ हैं व्यवहार में अपने पड़ोसियों के साथ, उन लोगों के साथ जिनसे आप मिलते-जुलते हैं, एकता और अभेदता का अनुभव करना।

कृपया ध्यान दें !

१—गत माह के अंक में Form VI के मुद्रण में Aditor's Names Swami Amar Muni के स्थान पर Swami Hans Parkash पढ़ें।

२—इस अंक के पृष्ठ नं० १३ पर अलीगढ़ शाखा के पदाधिकारियों के नाम जो, चुनाव स्वामी अमर मुनि जी महाराज व स्वामी हंस प्रकाश जी महाराज की उपस्थिति में हुआ था, उल्लिखित हैं।

३—वार्षिक सम्मेलन की सूचना तिथियों सहित अग्रिम अंक में पढ़ें।

४—श्री शान्ति प्रकाश "आत्रेय" द्वारा लिखित क्रमशः लेख "हमारी शिक्षा प्रणाली" किसी कारण इस अंक में प्रकाशित नहीं हो पा रहा, अग्रिम अंक में प्रकाशित होगा।

—सहसम्पादक

प्रेम कला भी है और विज्ञान भी, वैज्ञानिक आविष्कार तो केवल महान सूर्य रूप, प्रेमाग्नि या एकता के भाव की चिनगारियां, स्फुल्लिंग मात्र हैं।

— — —

विधानों का विधान एकमात्र प्रेम है। प्रेम में निवास करना हीं अपने प्रति सच्चा रहना है।

— — —

सच्चा प्रेम सूर्य के समान आत्मा को विकसित कर देता है। मोह मन को पाले में ठिठुराकर संकुचित कर डालता है।

— — —

प्रेम को मोह मत समझो। प्रेम औ रहै मोह और है। इन्हें एक समझना भारी भूल है।

— — —

इच्छा मात्र प्रेम है और प्रेम ही ईश्वर है और वही ईश्वर तुम हो।

— — —

प्रेम में न छुटाई है, न बड़ाई; न उँचाई है, न निचाई।

— — —

जिस मनुष्य ने कभी प्रेम नहीं किया, वह कदापि ईश्वरानुभव नहीं कर सकता। यहां तक तथ्य है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Hari Om Tat-Sat

Action With Satisfaction

By : Naresh Kumar Mittal,

— —

ACTION WITH SATISFACTION—the doctrine is nothing else than a part of RAMA's KARMA THEORY. Generally, I find poeple unable to distinguish between the words like Satisfaction, Contentment and ACTION or KARMA. They take the state of satisfaction as the destination, in fact, it is only means to achieve the destination, not the destination itself, that's why they are so much confused. But the position is entirely a different one, and here is involved no question of one's POINT OF VIEW, but it is a matter of fact, and the fact is that believing in the principle of it is all for the best we must be thankful to the God for whatever is granted to us, and must strike further in order to go ahead as the business of the life is to forward. But difficulty arises when people think "SATISFACTION" as if they are satisfied, they will not have to do anything more. But I have no doubts in my mind to disclose that they are largely mistaken in thinking so. The fact is, ACTION CAN BE DONE PROPERLY AND EFFECTIVELY ONLY ON BEING IN THE STATE OF MENTAL SATISFACTION.

EVEN from the language point of view, you will find that action is a part of satisfaction, and, SATISFACTION consists of two parts – SATISFY+ACTION, first comes satisfaction then comes action. First thing is to be satisfied with whatever IS, then strike the action. It means if any action is done without being 'satisfied' that cannot yield any good, any permanent results It means if any action is to be commenced, that must be accompanied by the state of satisfaction. ONE THING MORE, it must be noted that satisfaction is a state of mind and not of body and same is the case with HAPPINESS. Being the state of mind, satisfaction cannot be effected by any material or outsideral aspects of

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

life. Our mind is like a reserved compartment of train. And in this reserved compartment no damn material thing can enter and disturb the balance and piece of mind, if mental satisfaction has occupied its seat in mind. Satisfaction is of greater value than Happiness itself. Because, happiness itself. Because, happiness can enter into mind only with the prior permission of satisfaction, without mental satisfaction, no happiness can be achieved. Never can happiness be attained or realised if one is not in the state of mental satisfaction or if one is not contented with the present and worrying for future as is said worry for tomorrow can take away the strength of today but cannot take away the worry of tomorrow. Here too, the word WORRY is generally miscompared with the word like thinking or CONSIDERATION by a large section of humanity on the earth But it must clearly understood that worry is of negative description which reflects passimistic conception, on the other hand, consideration or thinking are the words of positive description denoting optimistic trend. Therefore, thinking is necessary, planning should be done and consideration must be paid in order to succeed for any job BUT WORRY MUST NOT BE DONE otherwise everything will be neglected. KARMA THEORY divorces the superstitious conception of presence of hell and Heaven somewhere above the earth, it proves that they are attained by every human being on this very earth. Yes, you can very well see yourself according to the situation of any man whether he is hell or enjoying the Heaven. And there is no difference in the location or situatian of places for hell and Heaven. On the same stands you can find one member of a family says that he is living in hell and the other member of the same family establishes that he is enjoying the Heaven What is it ? It is nothing else but the only thing is difference in respect of their mental states, the person feeling situation of hell lacks the mental satisfaction while the person speaking of Heavenly situation might be more poor (materially) than the former one, but he is in the state of mental SATISFACTION. Here the thing obvious is importance of having mental satisfaction, Read between the lines, satisfaction should never be assessed or evaluated in context of one's material position otherwise you will be mistaken because you may find a materially poor or middle class man's friendship with satisfaction but not of the millionaire who is seen crying everytime.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

And one thing more, I realise that this is the satisfaction only, only contentment, which can lead us to happiness even on the happening of some major or minor wrong things with us. In that situation, like death of some one near-dear huge losses in business, failure in the examination and so many other things, if satisfaction is there in the mind of the person concerned, he will not be upset permanently or for a longer time, for a few moments it is but natural to be upset not being a super human being, but in that situation we will able to collect ourselves very soon, Bnt, I find people taking refuge of SANTOSH or SATISFACTION, when something has really happened wrong with them but never before that happening, that too when they are not in a position to do anything else. But, I am sorry to say that is not a true application of this doctrine of this theory. That cannot be named anything else than more COMPULSION to accept what has happened and they cannot be benefited in any way like a man who was already in a stare of mental satisfaction before happening of the wrong event.

I would like to delibaratively enunciate that the ACTION WITH SATISFACTION must be understood properly, in its true form, which instructs that strike action with full mental satisfaction in order to get some positive results in any walk of life.

To sum up, I would like to request the distinguished reader that test the validity of this article by your own experiment and then only you will be able to assert its reliability. I am sure you will find after experiment that the satisfaction's mental state is a key to the treasure of Happiness, located in ourselve's minds and cannot be attained without paying full price of that in the form of ACTION WITH SATISFACTION.

10923, Doriwalan Road, Karol Bagh New Delhi- 110005

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Letter from Japan (Tokyo)

In reply to a letter from the Delhi Mission Shri M. L. Suri Second Secretary (Economic) at the Indian Embassy there, wrote a letter date 27 Dec. 1977 in which he paid glowing tributes to Brahmaleen Swami Gohid Prakashji and also welcomed Swami Amar Muniji as the new Paramadhyaksha of the Mission He writes thus :-

" I received' your kind letter. Shrimati Suri and I were shocked to learn th t Paramadhyaksha Shri Swami Govind Prakashji Maharaj shed his mortal coil on 19th Sep. 1977 as a result of fatal heart attack. Consequently, we feel extremely sad. Last month while going through a New Delhi newspaper Shrimati Suri noticed a news item re : discourse of Amar Muniji Maharaj. She pointed out that there was no mention in the news item of Paramadhyaksha Shri Swami Govind Prakashji Maharaj. It seems she had a veiled premonition.

We have had the good fortune of receiving the blessings of Swamiji Maharaj and hearing the profound philosophy of Maha Vakyas of the ledas as 'Prasad', as you used to put it. His august presence electrified our beings and the aura was filled by his sublime thoughts. He personally recognised the dexotees of Rama Once I happened to see him in a crowded street in Vrinda Vana during Janmashtami Celebrations. I touched his feet and he Immediatley recognised me out of a sea of humanity around me, and asked my welfare. We pay our homage to this "realised" and "Jeevan - Mukta" Soul, who has left a deep imprint in our minds.

We are happy to learn that Mission would have tee good luck of the inspiring guidance of Paramadhyaksha Swami Amar Mnniji Maharaj M-A., who already done so much work for the mission and has endeared himself among devotee of Swami Rama. We send our deepest regards to Swamiji Mahsaraj & seek his bleseing.

Many thanks for your sincere blessing which we greatly value coming as they do from a noble soul like yourself. We pray to the Almighty to grant you long & healthy life for the dedicated service of your fellow being in the manner you are doing."

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आश्रम समाचार

परमाध्यक्ष, स्वामी अमरमुनि जी महाराज का देहली से आश्रम पर दिनांक ३ फरवरी को आगमन हुआ। आश्रम व्यवस्था सम्बन्धित कार्यकर्ताओं को निर्देशित करने के बाद आप दिल्ली होते हुए इलाहाबाद सम्मेलन में सम्मिलित हुए जो आपकी अध्यक्षता में इलाहाबाद शाखा द्वारा आयोजित किया गया था। यह सम्मेलन शहन्शाह राम की स्मृति में व्यावहारिक वेदान्त के सिद्धान्तों के प्रचारार्थ प्रत्येक वर्ष मनाया जाता है।

परमश्रद्धेय ब्रह्मलीन स्वामी गोविन्द प्रकाश जी महाराज की पुण्यस्मृति में दूनवासी रामप्रेमियों द्वारा १८-२-१९७८ को रामायण अखण्ड पाठ का आयोजन किया गया – यह पाठ प्रत्येक मास की इन्हीं तिथियों में निर्वाण दिवस के रूप में मनाया जाता है। रविवारीय सत्संग में १८-५-७८ को स्वामी सत्य प्रकाश जी ने श्रद्धा और विश्वास दोनों भावनात्मक तत्वों की व्याख्या की व विश्लेषण करते हुए बतलाया कि इन दोनों के बिना ही सर्वव्यापक सत्यस्वरूप रामतत्व की अनुभूति अल्पज्ञ जीव द्वारा नहीं की जाती है। महानात्मा की स्मृति द्वारा राम प्रेमियों ने उस निर्गुण को सगुण के रूप में अनुभूत कर आत्म-शान्ति की अनुभूति की।

२३-२-७८ को मिशन के कर्मठ कार्यकर्ता श्री सरदारी लाल जी ओबेराय के सुपुत्र को आशीष देने हेतु महाराज श्री का आगमन हुआ। २४ की सायं मसूरी एक्सप्रेस से आपका प्रस्थान देहली के लिए हुआ जहां रानीबाग, दिल्ली में नव स्थापित शाखा - स्वामी रामतीर्थ मिशन - द्वारा वेदान्त सम्मेलन का २५-२-१९७८ को आयोजन किया गया था।

इसी दिन हरिओ३म् सत्संग भवन में स्वामी राम की स्मृति में स्वामी रामतीर्थ युवा संगठन ने वाद-विवाद प्रतियोगिता का आयोजन किया जिसमें प्रतिभा सम्पन्न छात्रों को संस्था व उसके उद्देश्यों के ज्ञान के साथ अपनी वाक्पटुता को प्रस्तुत करने का अवसर मिला। सभाध्यक्ष श्री एस० सी० भरतरिया द्वारा विजेता छात्रों को पुरस्कार व सर्वाधिक अंक प्राप्त करने वाली संस्था को चल-वैजयन्ती दी गई।

महाराज श्री दिल्ली से श्री जयगोपाल जी अग्रवाल, विन्द्रावन एण्ड सन्स, देहरादून की प्रिय सुपुत्री को, जिसका पाणिग्रहण संस्कार श्री डा० ओमप्रकाश जी के पुत्र के साथ ५-२-७८ को सम्पन्न हुआ, आशीष देने २-३-७८ को पधारे। वर-वधू के भावी नवगृहस्थ की सफलता के लिए रामचरणों में प्रार्थना करते हुए आपने दोनों को आशीश दी।

आश्रम का वातावरण शीतोष्ण मिश्रित है। वर्षा होने से वातावरण में शीत की प्रधानता यदा-कदा आर्द्रता के कारण हो जाती है।

हरिओ३म् सत्संग भवन ५९, राजपुर रोड पर शेष कार्य सम्पन्न रहा है।

सुधार:— पृष्ठ १८ पर फार्म नं० **IV** में आवृत्ति साप्ताहिक के स्थान पर "मासिक" पढ़ें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दूरभाष-८४२२१ राजपुर, ४२९७ देहरादन, तार का पता-(वेदान्त) देहरादून, रजि० न. डी. एन. १५

—सूचना—

१-मासिक पात्रिका 'राम सन्देश' न मिलने पर अपने समपस्थ डाकखाने (पत्रालय) से पता करने के पश्चात हमें सूचित करें। क्योंकि कभी किसी कारणवश "राम सन्देश" १५ ता० तक निकलता है। इसलिए शिकायत पत्र अपनी २ ग्राहक संख्या सहित दिनांक २० के बाद प्रेषित करने का कष्ट करें।

२-आप आश्रम में किसी भी प्रकार का धन भेजते समय यह लिखना न भूलें कि वह धन किस निमित्त भेजा जा रहा है तथा चैक स्वामी रामतीर्थ मिशन के नाम पर ही भेजें।

३-यह प्रार्थना है कि जो पाठक इस पत्रिका के आजीवन सदस्य बनना चाहते हैं वे अपना सदस्यता शुल्क सम्पादक के नाम प्रेषित करें। सदस्यों को आजीवन पुनः बिना किसी शुल्क के यह पत्रिका प्रेषित की जायेगी।

४—स्वामी रामतीर्थ मिशन, राजपुर देहरादून के आजीवन सदस्यों को कार्यकारिणी की १९७७ गोष्ठी के निर्णयानुसार यह सूचित किया जाता है कि सदस्यता शुल्क वार्षिक १२ रु० के स्थान पर २० रु० कर दिया गया है तथा उन सदस्यों को मासिक पत्रिका का प्रेषण मास जनवरी १९७८ से निःशुल्क किया जायेगा। अतः सदस्य अपना वार्षिक शुल्क भेजते समय १२ रु० के स्थान पर २० रु० प्रेषित करने का कष्ट करें।

५—'राम सन्देश' के विदेशी ग्रहाक अपना वार्षिक शुल्क १५ रू० भेजें। क्योंकि परमाध्यक्ष जी की आज्ञानुसार १२ रु० के स्थान पर ३ रु० वृद्धि का निर्णय लिया गया है।

बुक पोस्ट

ग्रहाक संख्या ...483...

श्री/श्रीमती ...

स्थान ...

डाकखाना ...

जिला ...

मासिक पत्र—

"राम — सन्देश"

स्वामी रामतीर्थ मिशन

राजपुर, देहरादून (यू. पी.)

Pin-248009

स्वामी रामतीर्थ मिशन, राजपुर देहरादून (उ०प्र०) के लिए प्रकाशक स्वामी अमर मुनि द्वारा न्यू आईडियल प्रिंटिंग हाऊस, ४ बी, नेशविला रोड देहरादून में, मुद्रित।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राम-सन्देश

पुस्तकालय
गुरुकुल काँगड़ी
FEB 1978

ॐ

सत्य का अनुभव करना

विश्व का

स्वामी हो जाना है ।

स्वामी राम—

आजीवन सदस्यता शुल्क : भारत में—१००/-, विदेश में—५००/-

—संस्थापक—

ब्रह्मलीन स्वामी हरिॐ जी महाराज

—व्यवस्थापक—

स्वामी अमर मुनि जी महाराज

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विषय - सूची

प्रहार करो	— रवीन्द्र	१
व्यावहारिक वेदान्त 'कर्म'	— — स्वामी राम	२
मानव की धारणा १	— डा० शान्ति प्रकाश 'आत्रेय'	४
राष्ट्र-निर्माता राजनीतिज्ञ कौटल्य	— वल्लभदास बिन्नानी 'ब्रजेश'	७
कवि की दृष्टि में	— गोपाल कृष्ण कौल	११
समन्वय समष्टि व्यष्टि का	— स्वामी ब्रह्मानन्द	१३
आलसी की मौत	— पं० राम कृष्ण शर्मा	१६
हकीम लुकमान	— प्रे० भारतबन्धु शर्मा	१८
गीत	— शास्त्री बलदेव राज 'शान्त'	१९
अन्त भले का भला	— 'ब्रजेश'	२०

Literature and Life 21
— Aditya 'Tyagi'

Revered Swami ji, Namaskar ! 23
— Chander Prakash

मुख्य सम्पादक—
स्वामी हंस प्रकाश वेदान्ताचार्य, एम०ए० (दर्शन)

सह सम्पादक—
"निर्द्वन्द्व"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'राष्ट्र के हित के लिए प्रयत्न करना ही विश्व की शक्तियों अर्थात् देवताओं की आराधना है'
—स्वामी राम

वेदान्त, अध्यात्म, संस्कृति, धर्म एवं भक्ति का सजग सन्देशवाहक तथा
स्वामी राम के आदर्शों का उपस्थापक एकमात्र लोकप्रिय मासिक—

राम-सन्देश

वेदोपनिषदां तत्त्वम् सत्यं नित्यं सनातनम्।
तत्सर्वं "रामसन्देशे" पत्रेऽस्मिन्नवलोक्यताम्॥

वर्ष २७
अंक २

वार्षिक शुल्क : १० रु०,
एक प्रति-८५ पैं०,

प्रहार करो

मेरी यही भावना है — प्रभु ! प्रहार करो, प्रहार करो, मेरी दीनता के मूल पर मेरे हृदय में प्रहार करो।
शक्ति दो, कि मैं सुख-दुःख के आघात को समभाव से सह सकूँ !

शक्ति दो, कि मैं अपने प्रेम को सेवा में फलित कर सकूँ !
शक्ति दो, कि मैं दीनों को अपनाऊं और निष्ठुर सत्ता के सामने कभी मस्तक न झुकाऊं !
शक्ति दो, कि मैं नित्य के छोटे संघर्षों से अपने मन को मलिन न होने दूं !

शक्ति दो, कि मैं तुम्हारी आज्ञा के आगे अपनी सत्ता को प्रेम में समर्पित कर सकूँ !

—रवीन्द्र

फरवरी १९८७

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गतांक से आगे:—

जनवरी १९०२ में भारत-धर्म-महामण्डल भवन मथुरा में स्वामी राम का व्याख्यान, श्रीनारायण स्वामी द्वारा लिखित नोटों से—

व्यावहारिक वेदान्त

कर्म

शंका—जब अहंकार का भाव सफलता प्राप्त करते समय बिलकुल उड़ा हुआ था, तो उस समय नेपोलियन के हाथ से जो काम हुआ, वह किस गणना में होगा—किस नाम से पुकारा जायगा?

उत्तर—वेदान्त यहां यह कहता है कि जिस वक्त मनुष्य के भीतर से काम करते समय अहंकार दूर हो जाता है, तो उसके भीतर वह शक्ति काम करती है, जो अहंकार से रहित अर्थात् स्वार्थ से दूर है। इसी शक्ति को, जो स्वार्थ और अहंकार की सीमा से परे है, वेदांत में ईश्वर कहते हैं। यद्यपि उस समय सफलता प्राप्त करता नेपोलियन दिखाई देता था, और सफलता उसके नाम से भी पुकारी जाती थी, परन्तु वास्तव में उस समय स्वयं ईश्वर वा शक्ति ही काम करती थी। (या यों कहो कि उस समय ईश्वर ही सब काम करता था) जैसे समुद्र का भाग जब बंगाल के नीचे होता है, तो उसका नाम बंगाल की खाड़ी होता है, जब अरब के नीचे है, तो अरब का समुद्र कहलाता है, और जब योरप के नीचे है, तो रोम के सागर के नाम से प्रसिद्ध होता है, इत्यादि—इत्यादि। परन्तु वास्तव में एक समुद्र के ही नाम भिन्न—भिन्न स्थानों के कारण भिन्न—भिन्न पड़ जाते हैं। इसी तरह एक सर्वव्यापी सब पर आवृत, शक्ति-स्वरूप जब नेपोलियन के द्वारा काम करता है, तो वह साहस के नाम अभिहित होता है, और जब पेड़ के पत्तों आदि में काम करता है, तो उसका नाम विकास होता है, अर्थात् यह कि पेड़ बढ़ रहा है। बात इतनी है कि एक रूप में उसकी नेपोलियन के साहस से पहचान हो सकती है, और दूसरे रूप में वृक्ष के विकास से। मगर सबमें वही एक शक्ति है, अर्थात् सारे काम वही शक्ति करती है। अतएव लोगों का यह कथन कि नेपोलियन ने विजय की, बिलकुल निरर्थक है, और विजय की सत्यता को न जानना सिद्ध करता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अब उन महाशयों को लीजिये, जो यह मानते हैं कि सारे काम ईश्वर की इच्छा से होते हैं, मगर ईश्वर की इच्छा से उनका अभिप्राय प्रारब्ध होता है। अर्थात् जो कुछ होता है, वह ईश्वर की बनाई हुई प्रारब्ध से होता है, और कर्म वा पुरुषार्थ से कुछ नहीं होता। इससे यह सिद्ध होता है कि वे इन शब्दों—अर्थात् कर्म और प्रारब्ध—के अर्थ नहीं जानते। उनको भी वेदान्त यों समझाता है कि प्यारो! अगर आपने इन दोनों की सत्यता को समझा होता तो भ्रांति से लोगों के साथ झगड़ा करने में समय न बिताते, बल्कि अपने सुधार में अपना समय देते। अस्तु, अब आप इस विषय के निर्णय को ध्यान से पढ़कर इसका परिणाम हृदयंगम कीजिए।

वेदान्त इस विषय का यों निपटारा करता है कि जैसे गणित में एक ही वाक्य में दो प्रकार की राशि होती है, एक अस्थिर और दूसरी राशि स्थिर, जैसे—

५	४	२	३
३ अ ल + ६४	अ ल—अ	ल + अल—अल	

इनमें अ अस्थिर है और ल स्थिर। इसी तरह मनुष्य में भी दो शक्तियाँ मौजूद हैं—एक स्वतंत्र, स्वाधीन अर्थात् कर्म करने की शक्ति, और दूसरी परतंत्र या पराधीन। तात्पर्य यह है कि प्रारब्ध स्वाधीन नहीं है, स्वतंत्र नहीं है।

अब यह देखना चाहिए कि मनुष्य कहां तक स्वाधीन है और कहां तक पराधीन। कहां तक मनुष्य में स्वतन्त्रता अर्थात् कर्म करने का अंश है, और कहां तक उसमें पराधीनता अर्थात् प्रारब्ध का अंश है।

इससे पहले कि इस विषय को और किसी प्रकार हल किया जाय, गणित का ही उदाहरण लेकर तय किया जाता है। क्योंकि यद्यपि हम लोगों को नित्यप्रति नदी में तैरते देखते हैं, मगर तैरने की विधि का समझना या समझाना जरा कठिन बात है, विधि किये ही से समझ में आती है, और किसी तरह नहीं। इसी तरह यद्यपि हम, नित्यप्रति इन दोनों वस्तुओं को मनुष्यों में देखते हैं, फिर भी उदाहरणों के बिना इनका समझना या समझाना बहुत कठिन होता है। इसलिए यदि इस प्रश्न को हल करने के लिये गणित आदि के उदाहरण उपस्थित किये जाएं, तो कुछ अनुचित न होगा।

द्रव्य-शास्त्र (इल्म-मायात) में द्रव्य की गति पहले एक बूंद की गति के द्वारा निश्चित की जाती है, और फिर कभी-कभी समवायरूप से अर्थात् संपूर्ण जल के प्रवाह की गति के द्वारा मालूम की जाती है। इसी तरह कर्म और प्रारब्ध के इस मामले में भी दो प्रकार से विवेचना की जायेगी, एक व्यष्टि रूप से, दूसरे समष्टि रूप से। इन्हीं को संस्कृत में व्यष्टि और समष्टि भाव कहते हैं।

—क्रमशः

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हमारी शिक्षा प्रणाली

(गतांक से आगे)

मानव की धारणा १

भौतिक वादियों के अनुसार मानव की धारणा का आलोचनात्मक विवेचन–२ तथा उसके अनुरूप शिक्षा प्रणाली

भारतीय भौतिकवाद के अनुसार पृथ्वी, जल, तेज, वायु, इन चार तत्वों के द्वारा निर्मित है। इन चार तत्वों के मिश्रण से ही चेतना की उत्पत्ति होती है। इनके अनुसार यह चेतना ही आत्मा है, जो कि शरीर की मृत्यु के बाद स्वयं भी नहीं रह जाती है अर्थात् स्वयं विनष्ट हो जाती है। यह मत मन को मस्तिष्क की क्रिया मात्र मानता है। मानव उसके अनुसार केवल चेतन, अचेतन अवस्था वाला शरीर मात्र है। भारतीय समस्त विचारकों ने इस सिद्धान्त की कटु आलोचना कर इसे सीमित एवं असन्तोषप्रद बताया है। इसके द्वारा स्मृति को नहीं समझाया जा सकता है और न ही एक व्यक्ति का अनुभव दूसरे व्यक्ति को ही प्राप्त हो सकता है। व्यक्तित्व को केवल स्थूल शरीर तक ही सीमित रखना, ठीक उसी प्रकार से है जिस प्रकार बिजली को बिजली के बल्ब तक ही सीमित रखना, अर्थात् बल्ब के फ्यूज हो जाने अथवा फूट जाने पर, बिजली का अस्तित्व ही समाप्त समझ लेना है। इस मूर्खना–पूर्ण धारणा को अन्य कोई भी भारतीय विचारक नहीं मानते। अन्य सब भारतीय विचारक मानव व्यक्तित्व को शरीर, मन और आत्मा का जटिल रूप मानते हैं।

बड़े दुःख एवं खेद का विषय है कि इस निम्नस्तरीय मानस की धारणा के अनुरूप भी हमारी आज की शिक्षा प्रणाली नहीं है। इस धारणा में शरीर को ही प्रमुख स्थान प्राप्त है बल्कि यों कह सकते हैं कि यह धारणा शरीर तक ही सीमित है। आज वैज्ञानिक अन्वेषण एवं प्रशिक्षणों द्वारा भौतिक-वाद के भोगात्मक वस्तुओं को प्रदान किया जा रहा है, किन्तु उस भोगायतन अर्थात् उस भोग करने वाले शरीर की क्षमता की, बुद्धि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की और लेशमात्र भी ध्यान नहीं दिया जा रहा है। स्थूल शरीर भी व्यक्तित्व का एक अंग है, भले ही वही सब कुछ न हो, किन्तु वह व्यक्तित्व का प्रारम्भिक अंग होते हुए भी हमारे समस्त व्यापारों का आधार है 'शरीरमाद्यं खलु धर्म साधनम्' इसलिए हमारी प्राचीन भारतीय शिक्षा का शारीरिक शिक्षा एक अंग था। वेद, पुराण, उपनिषदों आदि में ब्रह्मचर्य का पालन करते हुए शरीर को व्यायाम के द्वारा बलवान और पुष्ट बनाना शिक्षा का प्रमुख अंग था। इसीलिए शास्त्रों में स्पष्ट कह दिया है कि बलहीन को आत्म उपलब्धि भी नहीं होती।

शरीर के नियन्त्रित, व्यवस्थित होने पर ही हमारे मन की व्यवस्था दूर होती है। शास्त्रों में तो व्यायाम को आत्मबल की प्रथम सीढ़ी बताया; क्योंकि व्यायाम के द्वारा शरीर बलवान एवं पुष्ट होता है जिससे बुद्धि, तेज और यश बढ़ता है। शरीर के पुष्ट एवं बलवान होने पर मनोबल बढ़ता है। अतः व्यायाम, जो कि सब शक्ति देनेवाला है, का प्रशिक्षण अनिवार्य रूप से हमारी शिक्षा का अंग होना चाहिये। कठोर व्यायाम ही शारीरिक, मानसिक एवं आध्यात्मिक बलों का साधन है। इन तीनों बलों के प्राप्त होने पर, जनबल और देवबल स्वतः प्राप्त हो जाते हैं। शरीर सम्बन्धी पूर्ण ज्ञान प्रत्येक व्यक्ति को होना चाहिये। इस शरीर सम्बन्धी ज्ञान के अतिरिक्त शरीर से सम्बन्धित भोजन, व्यायाम आदि सबका ज्ञान हमारी शिक्षा का अंग होना चाहिए। जीवन में सुखी रहने का सबसे पहला अंग स्वस्थ एवं बलवान शरीर है। बलवान एवं स्वस्थ शरीर में हीनता की ग्रन्थि नहीं बनती। उसमें अपने सब कार्यों को सम्पन्न करने की शक्ति में विश्वास होता है। बलवान् एवं स्वस्थ व्यक्तियों का समाज ही सुखी हो सकता है। अतः सरकार को चाहिये कि वह शारीरिक शिक्षा को शिक्षा का अनिवार्य अंग बनावें। हर विद्यार्थी को कुश्ती, मुष्टि युद्ध, मल्लखम आदि तथा शरीर विज्ञान आदि की शिक्षा अनिवार्य रूप से दी जानी चाहिये तथा स्वास्थ्य, बल एवं शारीरिक व्यायामों के ज्ञान पर भी उनको प्रथम व द्वितीय श्रेणी आदि प्राप्त होनी चाहिये।

भौतिकवादियों के अनुसार जो कि शारीरिक अथवा इन्द्रिय सुख को ही चरम लक्ष्य मानते हैं। शरीर का बलवान एवं पुष्ट होना आवश्यक है। निर्बल एवं अस्वस्थ व्यक्ति में इन्द्रिय भोग की शक्ति भी नहीं होती। चार्वाक् दर्शन सुखवाद का प्रतिपादन करने वाला दर्शन है। यह काम को एक मात्र पुरुषार्थ मानते हैं। अर्थ काम का सहायक होने के कारण ही पुरुषार्थ माना जाता है। अतः इसके अनुसार भी सुख उपभोग की शक्ति वांछनीय है। यह सिद्धान्त अपरितोष पूर्ण होते हुए भी शरीर सुख को मान्यता देने के कारण शारीरिक स्वास्थ्य एवं बल की अपेक्षा अवश्य ही रखता है। अतः इस सिद्धान्त के अनुसार भी हमें शिक्षा में परिवर्तन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करना पड़ेगा। शिक्षा में शारीरिक शिक्षण को सबसे अधिक महत्व देना चहिए। विद्यार्थियों की शिक्षा में प्राप्त श्रेणियां एवं पास फेल होना अनिवार्य रूप से शारीरिक शिक्षण प्राप्त अंकों को सम्मलित करके होना चाहिये। शरीर एवं शरीर से सम्बन्धित समस्त ज्ञान हमारी शिक्षा का अंग हो जाता है। हमारी वर्तमान शिक्षा उस स्तर की भी नहीं है। इन शरीरों के पारस्परिक सम्बन्ध कैसे होनी चाहिये ? हमारा एक दूसरे के प्रति कैसे व्यवहार होना चाहिये ? आदि शरीर से सम्बन्धित सभी तत्व हमारी शिक्षा के अंग होने चाहिये।

१– व्यायामपुष्टगात्रस्य बुद्धिस्तेजोयशो बलम्।
प्रवर्धन्ते मनुष्यस्य तस्माद् व्यायामाचरेत्॥

भौतिक वाद पर आधारित आधुनिक मनो–विज्ञान स्पष्ट रूप से बताता है कि व्यक्तित्व भौतिक शरीर, विचारों, आवेशों, उद्वेगों, इच्छाओं नैतिक विचारों की मूल प्रवृत्ति, आध्यात्मिक भावना तथा धार्मिक विश्वासों आदि का जटिल रूप है। यहां व्यक्तित्व के समायोजित एवं सर्वांगीण विकास का अर्थ शरीर तथा उनके विभिन्न अंगों अर्थात चक्षु कान, नाक, हाथ, पैर आदि तथा उद्वेगों, बुद्धि, संकल्प शक्ति, मूल प्रवृतियों, सहज अपरोक्ष ज्ञान आदि का प्रशिक्षण एवं विकास है। आज की शिक्षा का सबसे बड़ा दोष यह है कि वह सब को छोड़ते हुए केवल एकाकी रूप से बुद्धि का ही विकास एवं प्रशिक्षण करती है। हमारी सब डिग्रियां केवल बौद्धिक उपलब्धियों को ही बताती हैं। हो सकता है वह इतना कमजोर हो जिससे उन डिग्रियों का वजन भी न चले। उसके अच्छे बुरे के विषय में नैतिकता, चरित्र, समाज के लिये अच्छे आचरण के विषय में आप उन डिग्रियों से कुछ भी नहीं जान सकते हैं। उसकी आदतें व आचरण समाज के लिये विनाशकारी हैं या हितकर वह स्वार्थी जातिवाद का पोषक है या नहीं वह धार्मिक है या अधार्मिक इनमें से किसी भी बात को डिग्रियां नहीं बताती। इन डिग्रियों में बहुत से दुष्ट एवं राक्षस छिपे हैं जो सम्पूर्ण समाज को दूषित कर रहे हैं अतः शिक्षा की डिग्रियां जिससे मानव के विषय में सम्पूर्ण ज्ञान हमें प्राप्त हो जावे। शिक्षा का कार्य है मानव बनाना न कि दानव बनाना। भौतिक–वाद के ऊपर आधारित व्यक्तित्व की धारणा बहुत ही सीमित है। वह हमारे स्वरूप को व्यक्त नहीं करती। किन्तु आज की शिक्षा तो उसके अनुरूप भी नहीं है, जिस कारण से आज व्यक्ति की समझ में उचित मार्ग ही नहीं आता। अतः उपर्युक्त बातों को ध्यान में रखते हुये ही शिक्षा होनी चाहिये और विद्यार्थी की श्रेणी में सम्पूर्ण बातों को ध्यान में रखते हुए सब विषयों के अंक जुड़ने चाहिये।

क्रमशः

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राष्ट्र - निर्माता

राजनीतिज्ञ कौटल्य

बल्लभदास बिन्नानी "ब्रजेश"

रत्नगर्भा भारत भूमि के नररत्नों का जितना वर्णन किया जाय थोड़ा है। कभी उसकी कोख से ऐसे ब्राह्मतेजधारी महापुरुषों को जन्म मिला है, जिन्होंने अपने ज्ञान-मार्तण्ड की प्रखर रश्मियों से विश्व में व्याप्त अज्ञानान्धकार को समाप्त कर दिया और कभी ऐसे क्षत्रतेजधारी नरपुंगवों को उसने उत्पन्न किया, जिन्होंने एक ओर निज बाहुबल से अत्याचार तथा उत्पीड़न का अन्त किया और दूसरी ओर ऐसे विशाल तथा वैभवशाली साम्राज्यों की स्थापना की, जिनकी यश-प्रभा के समक्ष संसार के बड़े से बड़े साम्राज्यों की कीर्ति फीकी पड़ जाय। प्रस्तुत पंक्तियों में भारतमाता के एक ऐसे विक्रमशाली सुपुत्र का परिचय दिया जा रहा है, जिसमें उपर्युक्त दोनों बातों का अपूर्व सम्मेलन देखने को मिलता है।

नत्वेवार्यस्य दासभाव : अर्थात् आर्य जाति को हर्गिज भी गुलाम नहीं बनाया जा सकता, इस मंत्र का उद्घोष करने वाले पुरुषश्रेष्ठ कौटल्य के अभिनन्दन में जितना भी कहा जाय थोड़ा है। जिस समय शस्यश्यामला भारतभूमि यूनानी आक्रमणकारियों से पददलित हो रही थी और भारतीय समाज संगठन और एकसूत्रता के अभाव में त्राहि-त्राहि कर रहा था, उन दिनों इसी कुशल राजनीतिज्ञ ने अपने बुद्धिचातुर्य और संगठन नेपुण्य से एक ओर तो विश्रृंखलित भारतीय शक्तियों को संगठित कर आक्रान्ताओं को इतनी प्रबल टक्कर दी कि वे सदियों तक फिर भारत की ओर उन्मुख होने का साहस नहीं कर सके, दूसरी ओर लड़खड़ाते नन्द-साम्राज्य को समाप्त कर उस महान मौर्य-साम्राज्य की स्थापना कराई, जिसका नाम इतिहास में स्वर्णाक्षरों में अंकित है।

कौटल्य अत्यन्त प्रतिभासम्पन्न ब्राह्मण थे। उन्होंने विभिन्न क्षेत्रों को विभिन्न नामों से अपनी कीर्ति-प्रभा से जगमगाया। अनेक शास्त्रकारों ने विष्णुगुप्त, वात्स्यायन, मल्लनाथ, चाणक्य, कौटल्य, चणकात्मक, वराणक, द्रामिल, पक्षिल स्वामी और अंगुल आदि उनके कई नाम घोषित किये हैं। अनुमान यह है कि विष्णुगुप्त का जन्म महान नीतिशास्त्री चणक मुनि के वंश में हुआ था और इस कारण उन्हें चाणक्य के नाम से सम्बोधित

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किया जाता था। साथ ही साथ, उसके कुल में कूटलवृत्ति होने के कारण उन्हें कौटल्य भी कहा जाता था (जो ब्राह्मण वर्ष भर के लिये अनाज भर कर संचित करते हैं, उन्हें कूटल अथवा कुम्भी-धान्य (अवधी में कोटिला) कहा जाता है। कूटल-वृत्ति त्याग और तपस्या की प्रतीक है। अतएव किसी व्यक्ति को कौटल्य कहा जाना उसके लिये गौरव की बात समझी जानी चाहिए)

कुछ प्राचीन ग्रंथकारों ने कौटल्य को कोटिल्य अर्थात कुटिलता का प्रतीक स्वीकार किया है। किन्तु विष्णुगुप्त जैसे सदाचारी, विद्वान् और त्यागी तपस्वी राजनीतिज्ञ को कुटिल कहना उपर्युक्त प्रतीत नहीं होता। श्री देवदत्त शास्त्री के शब्दों में "कौटिल्य यह घृणित नाम उन जैन और बौद्ध ग्रंथों के निर्माताओं ने लिखना प्रारम्भ किया था, जिन्होंने चाणक्य और उसके अर्थशास्त्र की निन्दा की दुन्दुभी बजाई थी। उसी नाम को दुर्भाग्यवश परवर्तीकाल के ग्रंथ-निर्माता परम्परागत अपनाते चले गए"

कौटल्य की जन्म-भूमि के सम्बन्ध में भी विद्वानों में मतभेद है। बौद्ध ग्रंथों के अनुसार यह तक्षशिला के वासी थे। किन्तु जैन ग्रंथ श्रवण-बेलगोल (मैसूर राज्य) को उनकी जन्म-भूमि स्वीकार करते हैं। कुछ आधुनिक विद्वानों की धारणा है कि कौटल्य मूल रूप में नैपाल की तराई के निवासी थे और बाद में तक्षशिला में जाकर बस गये थे। कुछ विदेशी विद्वानों को छोड़ कर शेष सभी यह स्वीकार करते है कि कौटल्य सिकन्दर के आक्रमण के समय विद्यमान थे और उन्होंने सिकन्दर को भारतभूमि से खदेड़ने की योजना बनाई थी। सिकन्दर का आक्रमण ईसा से लगभग ३२७ वर्ष पूर्व स्वीकार किया जाता है। इसका अभिप्राय यह हुआ कि कौटल्य का जन्म ईस्वी पूर्व की चौथी शताब्दी के आरम्भ होने से पहले हुआ होगा।

कौटल्य अर्थशास्त्र के अन्त में उल्लेख है—जिसने शास्त्र और शस्त्र का तथा नन्दराजा के अधीन हुई भूमि का शीघ्र उद्धार अपने क्रोध से किया है, उसी विष्णुगुप्त ने इस अर्थशास्त्र की रचना ही है। स्कंदपुराण (कुमारिका खण्ड अध्याय ३९) में उल्लेख है कि कलियुग के ३,३१० वर्ष व्यतीत होने पर नन्दोंका राज्य होगा और चाणक्य उसका विनाश करेंगे। इस सब आधारों पर निस्संकोच भाव से कहा जा सकता है कि किसी अवसर पर महाराज महापद्मनन्द के हाथों अपमानित होने के कारण कौटल्य रुष्ट हो गए और उस रोष के कारण ही उन्होंने नन्द-साम्राज्य का मूलोच्छेदन कर डाला। विजयगढ़ (मिर्जापुर की गुफा में लगे एक शिलालेख पर उत्कीर्ण चाणक्य रोष : भी यही प्रमाणित करता है कि कौटल्य एक अति क्रोधी ब्राह्मण थे। जो भी हो, कौटल्य दृढ़निश्चयी व्यक्ति थे—ऐसे दृढ़निश्चयी कि आपत्तियों के भीषणतम तूफान भी उन्हें किंचित् विचलित नहीं कर सकते थे, उनमें बड़े-बड़े साम्राज्यों को ध्वस्त

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और निर्मित करने का महान सामर्थ्य था। जनश्रुति के अनुसार, वह श्याम वर्ण के थे और देखने में सुन्दर नहीं लगते थे, उनके बाह्य रूप से चिढ़ कर ही नंद ने उनका अपमान किया था। किन्तु नन्द-साम्राज्य का अन्त कर उन्होंने दिया दिया कि आन्तरिक सौन्दर्य की अर्चना करने वाली इस भारतभूमि पर बाह्य सौंदर्य को अधिक महत्व देने वाले नहीं टिक सकते।

प्राप्त ऐतिहासिक सामग्री का अध्ययन करने के पश्चात् अनुभव होता है कि सिकन्दर के आक्रमण के समय कौटल्य तक्षशिला में थे और उनका मन इस बात से बड़ा दुःखित हुआ था कि हिमालय से लेकर कन्याकुमारी तक विस्तृत राष्ट्र विदेशी आक्रांताओं द्वारा पददलित होने जा रहा था। इसीलिए उन्होंने चन्द्रगुप्त जैसे देशभक्ति से ओतप्रोत उत्साही नवयुवकों को संगठित होकर अपनी मातृ-भूमि से विदेशी आक्रमणकारियों को खदेड़ने की प्रेरणा दी थी।

जब कौटल्य को पता लगा कि राजा पर्वतक (पुरू) भारत सम्राट बनने की आकांक्षा से प्रेरित होकर सिकन्दर के साथ गठबंधन करने को तैयार हो गया है, तो उन्होंने स्वतः उसे (पर्वतक को) भारत-सम्राट बनाने को प्रलोभन दिया और इस प्रकार सिकन्दर और पर्वतक की मिलती हुई शक्तियों को विभाजित कर दिया।

सिकन्दर की सेना का भारत से लौटाया जाना अति आवश्यक था। अतः कौटल्य ने निज गुप्तचरों द्वारा यूनानी सेना में मगध की सेना का विशालता और विकरालता के सम्बन्ध में अनेक भ्रामक प्रचार कराए तथा स्थिति यहाँ तक पहुंचा दी कि सिकन्दर के सैनिकों ने एक पग भी आगे बढ़ने से इन्कार कर दिया। बाध्य होकर सिकन्दर को वापस जाना पड़ा। परन्तु वापस चला जाना भी इतना सरल नहीं था, क्योंकि कौटल्य की पूर्वयोजनानुसार चन्द्रगुप्त के नेतृत्व में पग-पग पर उसका प्रतिरोध करने के लिए मालवों की सेनाएं उपस्थित थी।

सिकन्दर को देश से खदेड़कर भी कौटल्य शान्त न रह सके, क्योंकि उनकी निश्चित धारणा थी कि भारत की आन्तरिक शक्ति को छिन्न विछिन्न पाकर विदेशी किसी भी समय फिर से आक्रमण की योजना बना सकते हैं। अतः उन्होंने समस्त राष्ट्र को एक सूत्र में संगठित करने का महान् कार्य अपने हाथ में लिया। इसके साथ-साथ उन्हें अभी पर्वतक को दिया गया आश्वासन भी तो पूर्ण करना था।

पर्वतक और चन्द्रगुप्त की संगठित सेना से उन्होंने पाटलीपुत्र (नन्द-साम्राज्य की राजधानी) पर आक्रमण कराया। विलासी महापद्मनन्द की सेना के पैर उखड़ गए। पर्वतक को मगध

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का स्वर्णमयी सिंहासन सामने दिखाई देने लगा। किन्तु कौटल्य ऐसे लोभी और स्वार्थी व्यक्ति को सम्राट कैसे बनने देते, जिससे किसी समय अपनी महत्वाकांक्षा की पूर्ति के लिए विदेशी आक्रमण कारी से गठबंधन करने का विचार किया था? उधर पाटलीपुत्र पर विजय हो रही थी, इधर विषकन्याओं के वासनामय जाल में फंसा कौटल्य ने पर्वतक को सदा के लिए इस संसार से विदा कर दिया। इस प्रकार पर्वतक की जय, चन्द्रगुप्त में परिणत हो गयी पाटलीपुत्र पर विजय के पश्चात् चन्द्रगुप्त को हास-विलास के चक्र में न उलझने देने का श्रेय यदि किसी को है तो वह इसी महान् कूटनीतिज्ञ आचार्य विष्णुगुप्त कौटल्य को है। कौटल्य की सुदक्षता का ही परिणाम रहा कि सम्राट चन्द्रगुप्त अत्यल्प काल में ही सिकन्दर के उत्तराधिकारी सैल्यूकस को परास्त करने में सफल हो सका।

पराजित सैल्यूकस ने काबूल, हिरात, कंधार और बलूचिस्तान (पूर्व अंश) के प्रदेश देकर चन्द्रगुप्त से संधि की तथा साथ अपनी पुत्री 'हैलन' का विवाह भी कर दिया। इस प्रकार सम्बन्ध स्थापित होने पर चन्द्रगुप्त ने अपने श्वसुर की सेवा में ससम्मान ५०० हाथी भेंट किए। सैल्यूकस ने चन्द्रगुप्त के दरबार में मैगस्थनीज नामक अपने राजदूत को नियुक्त किया। कहने की आवश्यकता नहीं कि इस विजय के पीछे चन्द्रगुप्त के बाहुबल से अधिक चाणक्य के मंत्र का ही चमत्कार था।

कौटल्य की सबसे बड़ी विशेषता यह थी कि उसने जो कुछ किया वह राष्ट्र के कल्याण के लिए किया। अपने स्वार्थसाधन के लिये कुछ भी नहीं किया। मुद्राराक्षस नामक संस्कृत नाटक का अवलोकन करने के पश्चात् यह बात और भी प्रमाणित हो जाती है। निज पुरुषार्थ के बल पर अर्जित साम्राज्य का अधिकारी उन्होंने चन्द्रगुप्त को बनाया और स्वयं महामंत्री बने — और सो भी सदैव के लिए नहीं। जब उन्होंने अपनी नीतिमत्ता से महापद्मनंद के महामंत्री अपने प्रबलतम विरोधी राक्षस को चन्द्रगुप्त के साम्राज्य के हित-चिन्तक के रूप में परिणत कर लिया, तो उसको ही समस्त साम्राज्य का भार सौंप कर उसे स्वतः उन्होंने अमात्य प्रधान घोषित किया तथा स्वयं संन्यास ग्रहण कर लिया और वन की राह ली। कितना उच्चादर्श था हिमालय से समुद्र पर्यन्तसहस्त्र योजन विस्तीर्ण विशाल आर्य भूमि को एक सूत्र में संगठित करने वाले, भारत की शस्त्र-शक्ति और शास्त्रबल का पुनरुद्धार करने वाले उस महान् आचार्य का।

यह तो हुआ कौटल्य के जीवन का संक्षिप्त वृत्तान्त, जिसके क्षत-विक्षत सूत्र यत्र-तत्र उपलब्ध हो जाते हैं। परन्तु यदि यह सब कुछ भी प्राप्य न होता, तो भी केवल उनके अर्थशास्त्र के आधार पर ही उन्हें संसार के श्रेष्टतम राजनीतिज्ञों की पंक्ति में स्थान मिला होता।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कौटल्य ने समुद्र पर्यन्त राष्ट्र स्थापित करने का दृष्टिकोण अंगीकार करके ही अपने अर्थशास्त्र की रचना की थी। उनके इस महान ग्रंथ में वर्णित नियम और सिद्धान्त हर काल और हर युग के लिए उपयोगी हैं। अर्थशास्त्र में केवल अर्थ या राजनीति के सिद्धान्तों का ही वर्णन नहीं है. अपितु धर्म, काम, मोक्ष–प्राप्ति के उपायों का भी विवेचन है। अतः कौटल्य के अर्थशास्त्र को केवल राज–नीति का ग्रंथ स्वीकार नही किया जा सकता। वह तो एक ऐसा वृहत् शास्त्र है जिसमें जीवन के किसी भी क्षेत्र की किसी भी समस्या को उपेक्षित न छोड़ा गया है।

इस ग्रंथ के औपनिषदिक प्रकरण के अन्तर्गत जब कौटल्य चातुर्वर्ण्य के रक्षण के हेतु मंत्रों और औषधियों के प्रयोग से अधार्मिक पुरुषों को विनष्ट कर देने की व्यवस्था देते हैं, तब लगता है मानो कोई महान् तांत्रिक कूटनीतिज्ञ बोल रहा हो, शास्त्र न होने पर सदाचारी पुरुष के अनुगमन का निर्देश करते हैं तो लगता है कि कोई नीतिकार उपदेश कर रहा हो। कौटल्य के मुख से राजा के लक्षण और कर्तव्यों का वर्णन सुनकर कोई भी उन्हें श्रेष्ठ राजनीतिज्ञ घोषित कर सकता है, तथा अहिंसालक्षणोधर्मः, मांसभक्षणयुक्तंसर्वेषाम् विज्ञान–दीपेन संसारभयं निवर्तते, क्षमायुक्तस्य तपो विवर्धते जैसे सूत्रों का उच्चारण सुनकर तो उन्हें महर्षि घोषित करने में किसी को तनिक भी संकोच नहीं हो सकता।

भारतीय समाज ने धर्म और मोक्ष के क्षेत्र में ही आदर्श प्रस्तुत नहीं किया है, अर्थ और काम के क्षेत्र में भी उसने आदर्श के उच्च मानदण्ड उपस्थित किए हैं— इनके उज्जवलतम उदाहरण के रूप में भारत के अतीत क्षितिज पर वेदविद्, विद्वान, धर्मात्मा और क्षमाशील आचार्य विष्णु–गुप्त चाणक्य के प्रति भारत–पुत्रों द्वारा जितनी भी श्रद्धा व्यक्त की जाय थोड़ी ही रहेगी :—

नीतिशास्त्रामृतं धीमानर्थशास्त्रमहोदधेः।
समुद्धध्रे नमस्तस्मै विष्णुगुप्ताय वेधसे॥

★

कवि की दृष्टि में

प्रश्नः— भविष्य की मानवता का संरक्षक वैज्ञानिक है या साहित्यकार ?

उत्तरः— भविष्य की मानवता से हमारा तात्पर्य क्या है ? आज जो मानवता हम देख रहे हैं उसकी वेदनाएं क्या हैं जिन्हें दूर करना है ? सत्य की उपासना आज पागलपन समझी जाती है ब्रह्मचर्य को लोग बेहूदगी और धर्म को शर्मनाक मानते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संयम को तोड़ने वाले कृत्यों से मनुष्य की उदारता सिद्ध होती है और बहुत से अपराध ऐसे भी हैं। जिनसे मनुष्य कीर्ति अर्जित करने लगा है।

मिथ्यारंभ दम्भ रत जोई, ता कह सन्त कहई सब कोई।

सोई सयान जो परधन हारी जो कर दभ सो वर आचारी।

जो कहि झूठ मसखरी जाना, कलियुग सोई गुनवंत बखाना।

नारि बिबस नर सकल गोसाँई, नाचहिं नट मर्कट की नाई।

ये सब इसलिए बढ़े कि मनुष्य में बुद्धि की अधिकता और श्रद्धा की कमी हो गई। जब तक श्रद्धा का आधिपत्य था, लोगों को सन्मार्ग पर रखने में कानून को उतनी मशक्कत उठानी नहीं पड़ती थी जितनी आज उठानी पड़ रही है। श्रद्धा को कमजोर करके बुद्धि ने ही मनुष्य को यह सिखा रखा है कि पुलिस से छिपकर करो तो पुण्य और पाप में कोई भेद नहीं है।

एकान्त से आदमी डरने लगा है, क्योंकि एकान्त अब भी ऐसे सवाल कर सकता है जिनका जवाब हम नहीं दे सकते। इसलिए सिनेमा रेडियो, नृत्य, गान और सामाजिक संध्याओं की भरमार है। जो एकान्त से भागना चाहे, उसके सामने कोई कठिनाई नहीं रह गई। यदि कुछ थी तो ट्रांजस्टिर ने उन्हें दूर कर दिया। शाम को टहलते समय भी आप आत्मा की खुटक से बचना चाहें तो ट्रांजिस्टर साथ लेकर मजे में बच सकते है।

आदमी के मन के भीतर कहीं कोई बाँध नहीं रह गया, न वह धारा में पाँव अड़ा कर कहीं खड़ा हो सकता है। इस बिखरते टूटते धुंधआते डगमगाते समाज में हमें ऐसे व्यक्तियों की प्रधानता चाहिए जो पूर्ण हों, जिनमें दरारे नहीं हो, जिनके भीतर वह स्थिरता आत्मपूर्ण हो जो मध्ययुग के महापुरुषों में देखी जाती थी सक्षेप में जो धारा में बहने से इन्कार कर सकें। यदि विज्ञान से ऐसा व्यक्तित्व तैयार हो तो वैज्ञानिकों को सब छोडकर पहले इसी महत्कार्य में हाथ लगाना चाहिए।

मैंने अपना बिचार यह है कि ये गुण तभी लौटेंगे जब हम अतीत कुछ अंशों को लौटा लें अथवा भारतीय प्रसंग में यह बात कि अतीत के अमर अंशों को तिरोहित होने से बचा लें यह कार्य केवल साहित्यकार कर सकते हैं पिछले युग की देन आध्यात्मिकता थी। विज्ञान नये युग की उपलब्धि है। और ये दोनों तत्व परम मूल्यवान है। लेकिन साहित्य ने यदि पक्षपात किया तो आदमी और भी अधिक हानि में पड़ेगा उसका धर्म है कि अध्यात्म और विज्ञान के बीच वह सेतु बनकर पड़ा रहे जिस पर चढ़कर धर्मार्थी विज्ञान का और वैज्ञानिक अध्यात्म का स्पर्श कर सकें।

साभार –:

दिनकर से भेंटवार्ता

प्रश्नकर्ता-गोपाल कृष्ण कौल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समन्वय समष्टि व्यष्टि का

स्वामी ब्रह्मानन्द

समाजशास्त्र का विषय समाज का अध्ययन है। व्यक्तियों के संगठन, जिनका समान लक्ष्य, समान व्यवहार, समानमनोभाव हो तथा निर्विरोध सबकी समान प्रवृत्ति हो वह समान कहा जाता है। व्यक्ति की संज्ञा व्यष्टि है एवं समाज का नाम समष्टि, ये दोनों सम्मिलित रूप से समाज का निर्माण तथा रक्षण करते हैं, इनका परस्पर महत्व-पूर्ण सम्बन्ध है।

संगठन के अनन्तर समाज का किसी न किसी रूप मे विकास होता है, प्रस्तार होता है, किन्तु साथ ही ह्रास एवं संकोच भी होता है। इसका स्पष्टीकरण विभिन्न प्रकार के चिन्तकों के अध्ययन से सम्भव है। प्रसन्नता का विषय है कि प्रायः सभी प्रकार के विचारकों ने इस दिशा में ध्यान दिया और अपने अनुभूत विचारों को निबद्ध किया।

आत्मवादी और अनात्मवादी दोनों प्रकार के विचारकों ने अपने अनुसार समाजशास्त्र का परि-भाषण तथा प्रतिपादन किया है। चेतन एवं जड़ का उल्लेख बहुत पुरातन है। सापेक्ष विश्व में उभय विधा आवश्यक हैं।

किसी ने एक पक्ष को लिया दूसरे ने दूसरा पक्ष लिया, और किसी ने दोनों को अपनाया किन्तु निःसंदिग्ध कोई नहीं, सन्देह के आवर्त में सभी परिभ्रमण करते हैं, यद्यपि अपनी निःसंदिग्धता का पौनः पन्येन प्रकाशन करते हैं। अंगीकृत का ही प्रचार, प्रसार, प्रतिपादन, समर्थन करना सबका स्वभाव बन जाता है। अपने पक्ष के साथ दूसरे पक्ष का बोध करना आवश्यक माना जाता है, अन्यथा एक ही पक्ष बोध होने पर वह विपक्ष से अपरिचित ही रह जाता है। चिन्तनशील अपने विषय के प्रतिपादन तथा समर्थन के लिये दूसरों पक्षों का अवगाहन करता है। अपने पक्ष के वैशिष्ट्य की रक्षा करते हुए दूसरे पक्षों का ध्यान रखना सभ्यता मानी जाती है। दूसरे पक्षों का सम्मानपूर्वक प्रतिपादन तथा अपने पक्ष का सबलता से समर्थ न करना कुशल चिन्तक का कार्य है।

अनन्त देशकाल में अनन्त चिन्तक होते हैं जो अपने पूर्वापर तथा सामयिक परम्पराओं को निबद्ध कर देते हैं। परिवर्तनशील विचारों में परिवर्तन होना स्वाभाविक है। विकास काल में एक प्रकार के विचार होते हैं तथा ह्रासकाल में दूसरे भीं व्यक्त होते हैं। सदा समान विचार नहीं हो सकते हैं। मूलरूप में रक्षा करते हुए भी संशो-धन और परिवर्तन को स्थान मिलता है। किसी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समय आर्य ग्रामीणता को महत्व देते थे, किन्तु आज पर्याप्त सीमा तक नगर बहुत हो गये हैं। ग्रामीणता को अब भी सम्मान प्राप्त है और इस प्रकार मूल प्रवृति की रक्षा हो जाती है। सम्प्रति नगर तथा ग्राम में अधिक अन्तर नहीं है।

अस्तु, समाजवाद उपादेय है किन्तु हमारा समाजवाद किसी परिभाषित समाजवाद से अभिप्रेत नहीं। किसी भी प्रकार की शासन व्यवस्था हो, व्यक्ति तथा उनके संगठन से हमारा अभिप्राय है, चाहे वह संसार के किसी भी भाग में रहता हो। समाज शब्द का उपयोग मानवजाति के लिये है, अन्य जीवों के लिये नही, किसी के लिये समाज अवश्य प्रयुक्त है।

समाज के प्रकार हैं किन्तु कतिपय मौलिक-तत्व सबमें एक समान हैं जिनके कारण ये एकता में ग्रथित रहते हैं। इनको प्रायः दो भागों में विभक्त माना जाता है, अविकसित। इनके सरल अर्थ है सभ्य और असभ्य, किन्तु विकास का कारण सभ्यता होने पर भी आचरण के अभाव में दुर्बल माना जाता है, एवमेव आचरण की सभ्यता बलवती ही नहीं सर्वोपरि मानी जाती है। सभ्यता का सम्बन्ध बहिरंग है तथा सदाचार आभ्यन्तर है। इसका साक्षात्कार दैनिक व्यवहार में होता है।

समाज की उक्त दोनों विधाओं की नगर एवं ग्रामों में देख सकते हैं। हाँ, न्यूनाधिक होना स्वाभाविक ही है, जिसका कारण बाह्य चाकचक्य है सभ्यता की दौड़ में प्रायः सभी भाग लेते हैं, परन्तु सफल होने पर भी सन्तोष नहीं होता। अधिकाधिक की प्राप्ति की आकांक्षा होती है, प्रयत्न भी होता है परन्तु एक के अनन्तर दूसरी इच्छा होती है, तृष्णातन्तु का अन्त नहीं आता है। एक शिखर को पार करते ही दूसरा शिखर दृग्गोचर होता है, महत्वाकांक्षी पर्वतारोही यद्यपि निरन्तर अध्यवसाय करता है कन्तु उसका परिश्रम अपूर्ण बना रहता है। आयास सुखेच्छा पूर्वक है, सन्तोष भी एक सुख है। किन्तु विषयगत सुख का स्थायित्व सम्भव नहीं, सुख के साथ दुःख का भी सम्बन्ध है. एक की इच्छा होने पर भी भागता रहता है, दूसरा अनभिमत होने पर आता रहता है।

पदार्थ सुख क्षणिक ही नहीं सान्त भी है, अपने स्वागत सत्कार से मुझे सुख मिलता है किन्तु किसी प्रकार अपनी उपेक्षा देख कर अवसाद होता है। गले में माला पड़ते देख कर मुझे प्रसन्नता होती है और उसे निकालते देख कर उदासीनता। विषयगत सुख दुःख आगमापायी हैं, किन्तु उनकी आस्थिरता समझने पर भी उनकी चिन्ता में जीवन का अधिकांश नष्ट करना किसी प्रकार से समीचीन नहीं। यह अवधेय है कि दुःख अनित्य है, कभी न कभी उसका विलय हो जाता है परन्तु सुख शाश्वत है यद्यपि काले काले दुःखम् के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सहवास से वह भी क्षणिक प्रतीत होता है। विषयावधिक ही विषयगत सुख होता है, विषय की समाप्ति पर वह सुख भी भाग जाता है। रंगमंच पर अभिनीत नाटक के दर्शन से सामाजिक सहृदय नाटकगत सुख होता है, उसके पश्चात् कुछ काल तक स्मृति रहती है और अन्ततः वह भी विलीन हो जाती है। यह बात दुःख का अवसासन स्फोट की समाप्ति हो जाता है, चर्चा के लिये दुःख का स्मरण कुछ समय तक आया रहता है।

बाह्य सुख अस्थिर है, और स्थिर सुख मिलता है आभ्यन्तरिक विकास एवं प्रोत्थान से। आन्तरिक शुद्धता से आत्मिक सुख मिलता है, आत्मा स्वभावतः सुखस्वरूप किन्तु अज्ञान के कारण सुखाभाव प्रतीत होता है। आत्मिक सुख के अतिरिक्त दूसरों को भी सुख मिलता है। यह संस्कृति मानी जाती है, इसका बाह्याडम्बर में तथ्यतः प्रकाशन नहीं होता है, यह निर्धन का भी पुष्कल धन है। इसकी सत्ता में मानव सन्तुष्ट रहता है। विषयगत सुख आने जाने वाले हैं किन्तु आत्मिक आनन्द सदा नवीन बना रहता है। आत्म संस्कृति नित्य है परन्तु पदार्थसंस्कृति अस्थायी है।

मुझे अपने एक मित्र से ज्ञात हुआ कि अमेरिका में आवश्यकताओं को कम करने की अपेक्षा उनकी सम्पूर्ति के लिए अधिकाधिक अर्जन करना उचित है। भारत में तद्विपरीत आवश्यकताओं को बढ़ाने की अपेक्षा उनको घटाने की शिक्षा दी जाती है। तृष्णा अनन्त है इसका कोई छोर नहीं, यह बढ़ती ही जाती है, कभी सन्तोष नहीं मिल सकता है, किन्तु इसका अर्थ यह नहीं कि श्रम की उपेक्षा कर दी जाय।

सापेक्ष जगत् में किसी के आन्तरिक विकास का परिचय मिलता है उसके दैनिक आचरण एवं व्यवहार से। व्यवहार में देश काल जन भेद के कारण विभेद होना स्वाभाविक है किन्तु सभी समय, सभी व्यक्तियों से अनुकूल व्यवहार जन करना जनविशेष की विशेषता, निपुणता और विचित्रता है। चञ्चलता तो बिना परिश्रम के भी सुलभ है किन्तु स्थिरता प्राप्त करना प्रयत्नसाध्य है। दीवाल से किसी की स्थिरता की तुलना की जा सकती है, बालू की भित्ति प्रथम तो उठती नहीं और यदि किसी प्रकार उठ भी जाय तो अचिरेण ढह सकती है, किन्तु पक्की कांक्रीट की सिमेंटेड दिवाल आपत्तियों के आने पर भी स्थिर रहती है। यम नियम से जीवनभित्तियों का निर्माण एवं त्राण होता है, त्याग, धैर्य, साहस, सहिष्णुता और सुनिश्चित प्रयास से आत्मसंस्कृति बढ़ती है। विकास के लिये सब प्रकार का प्रयास आवश्यक है, ह्रास निरायास ही होने लगता है। किसी विकास के पीछे अनन्त इतिहास प्रछन्न होता है। किसी प्रदेश को हरा भरा देखकर वहां लोगों का अनुमान होता है, किसी के व्यवहार को देखकर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उनके चरित्र का अनुमान होता है। कहीं स्वच्छता देखकर वहाँ के निवासियों के स्वभाव, प्रकृति प्रभृति का परिचय मिल जाता है। यही अर्थ 'स्थालीपुलाक' न्याय का है।

संसार में इसी प्रकार के मनुष्य हैं, सबको प्रसन्न करना कठिन काम है, किन्तु भले मानव यथाशक्ति परोपकार करते हैं। किसी के आदर की चिन्ता न कर लोकोपकार करना अपना धर्म मानते हैं, वह स्थिर रहता है, विचलित नहीं होता, चाहे कोई आपत्ति आवे सामना करता है। नाना प्रकार के आवेग, संवेग, उद्वेग आते हैं और चले जाते हैं परन्तु स्थितप्रज्ञ निश्चल रहता है, किसी प्रकार व्यग्र होता।

संगीत एक सामाजिक विषय है किन्तु उसकी साधना के लिए अनन्त त्याग और परिश्रम अपेक्षित है। वीणा के स्वर, सितार की झकार हारमोनियम के स्वर, मृदंग का रव सुनते सहृदय मुदित हो जाता है। अपने अनवरत परिश्रम से कोई भी अपना विकास और प्रोत्थान कर सकता है, उस व्यक्ति के निर्माण से समाज का निर्माण स्वयमेव हो जाता है, यही व्यष्टि का समन्वय है।

आलसी की मौत

बहुत पुराने समय की बात है। किसी वन में एक ऊंट रहा था। ऊंट बड़ा परिश्रमी था। वह दिनभर दूर-दूर तक घूमकर आया करता था। सुबह शाम दोनों समय भगवान का भजन किया करता था। ऊंट के दिन बड़े सुख से कट रहे थे।

ऊंट के परिश्रम और भक्ति को देखकर भगवान बड़े प्रसन्न हुए। भगवान ने ऊंट से कहा— 'में तुम्हारे परिश्रम और भक्ति से बड़ा प्रसन्न हूँ। वर मांगो। क्या चाहते हो?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ऊँट भगवान को देखकर बड़ा प्रसन्न हुआ। उसने मनमें सोचा कोई अच्छा-सा वर मांगूं। थोड़ी देर सोचने के बाद मूर्ख ऊट बोला–'भगवान! मुझे चरने के लिये कई मील का चक्कर लगाना पड़ता है। मैं जब चरकर लौटता हूँ, तब थक जाता हूँ। इस प्रकार मुझे रोज कष्ट उठाना पड़ता है। हे नाथ! आप कृपा करके मुझे एक वरदान दें। मेरी गरदन आप इतनी लम्बी कर द, जिसके सहारे मैं बैठा-बैठा ही दूर-दूर तक चर लिया करूं।'

ऊँटकी बात सुनकर भगवान् हंसे। बोले-- 'और भी कुछ चाहते हो?'

ऊँट बोला–'बस, महाराज! मैं केवल यही चाहता हूं।'

भगवान ने कहा--'अच्छी बात है। ऐसा ही होगा।' ऐसा कहकर भगवान अन्तर्धान हो गये। ऊँटकी गरदन बहुत लंबी हो गयी। अब वह अपनी जगह बैठे-बैठे ही पेड़ों की पत्तियाँ और बबूल चर सकता था।

वर पाकर ऊँटने परिश्रम करना छोड़ दिया एक जगह ही आराम से बैठ कर दिन बिताने लगा। धीरे-धीरे ऊँट बहुत आलसी हो गया।

एक दिन की घटना है। बड़े जोर की आँधी आयी। वनके वृक्ष टूटटूट कर गिरने लगे। चारों ओर अन्धकार छा गया। ऊँटकी गरदन में कई वृक्ष टूटकर लगे। उसे बड़ा कष्ट हुआ। इस कष्ट से बचने के लिये उसने अपनी गरदन एक गुफा में डाल दी। गुफा में कुछ भूखे सियार बैठे थे, उन्होंने अवसर पाते ही ऊँट की गरदन पर धावा बोल दिया। ऊंट ने गरदन बाहर निकालनी चाही, परन्तु गरदन लम्बी थी, अतः शीघ्र न निकल सकी सियारों ने गरदन काट दी। ऊँट तड़पकर जब मरने लगा, तब सियारों से बोला–'आज तुम प्रसन्न हो कि तुम मुझे खा रहे हो, परन्तु यहाँ तुम भूलते हो। मैं आज अपने आलस्य के कारण ही मर रहा हूँ। मैं यदि परिश्रम से न डरता तो आज मेरा कुछ बिगाड न होता। यह सच है कि जो लोग परिश्रम से डरते हैं, वे मूर्ख हैं। परिश्रमी सदा सुखी होते हैं ऐसा कहकर ऊँट मर गया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हकीम लुकमान

प्रे० भारतबन्धु शर्मा

जगत के सुप्रसिद्ध एवं सिद्धहस्त हकीमों में लुकमान की गणना होती है। वे सर्वप्रथम एक 'क्रीत' दास थे। तत्कालीन दास-प्रथा के अनुसार उन्हें अपने स्वामी के पास रहना पड़ा। अपनी बुद्धि – कुशलता, सहृदता और सरसता के कारण वे अपने स्वामी के कृपा - भाजन बन गये थे।

एक दिन स्वामी एक ककड़ी (खीरा) खाने लगे। एक बार काटने से उन्हें उसकी कटुता का ज्ञान हुआ। बिना कुछ कहे उन्होंने वह खीरा लुकमान को दे दिया। लुकमान ने सत्कार सहित उसे ग्रहण करके वहीं खाना प्रारम्भ कर दिया। कुछ क्षणों में लुकमान उसे चट कर गये। लुकमान के मुख पर किसी प्रकार का प्रभाव न देखकर विस्मित स्वामी ने उसे अपने पास बुलाया और कहा 'लुकमान, तुम्हें ककड़ी कैसी लगी? क्या वह बहुत कड़वी नहीं थी'? सम्मान से अपना सिर झुका कर लुकमान ने उत्तर दिया 'स्वामी! ककड़ी बहुत ही कडवी थी" तो फिर तुमने उसे क्यों खा लिया? प्रश्न हुआ लुकमान हाथ बाँध कर बोला 'मेरे मालिक आपसे मुझे अब तक बहुत मीठे एवं स्वादिष्ट अमूल्य पदार्थ प्राप्त हुए हैं। यदि कभी एक बार कोई अप्रिय वस्तु मिल गयी तो मेरे कर्तव्य उसका अनादर करना नहीं है। स्वामी द्वारा प्रदत्त सभी कुछ सहर्ष ग्रहणीय है"

स्वामी की आंखों में आंसू आ गये तथा उन्होंने अपने प्रिय लुकमान को गले लगा लिया।

सच है, भगवान से हमें सुख, ऐश्वर्य और दुर्लभ पदार्थ प्राप्त होता है। यदि कभी रोग धन-हानि, दुःख आदि अनुभव होता है तो उसे भी हमें कृतज्ञता की भावना से सहर्ष शिरोधार्य करना चाहिए। उसके लिए ईश्वर को कोसना तथा अपने दुर्भाग्य को कोसना कृतघ्नता नहीं तो और क्या है?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

।।गीत।।

शास्त्री बलदेवराज 'शान्त'

मग के शूल बीन लो।
जग के शूल बीन लो।
राह सब बुहार दो।
चाह सब संवार दो।

मान लो कि आ मिलेगा, फिर स्वयं नमन तुम्हें ।। १ ।।
फिर स्वयं नमन तुम्हें ।।

दीप की तरह जलो।
सूर्य की तरह चलो।
भूमि से अचल बनो।
पहाड़ से विचल बनो।

मान लो कि आ मिलेगा, फिर स्वयं चमन तुम्हें ।। २ ।।
फिर स्वयं चमन तुम्हें ।।

कारवाँ को ले चलो।
पासबां को ले चलो।
सत्य पर अड़े रहो।
मार्ग पर बढ़े रहो।

मान लो कि आ मिलेगी फिर स्वयं किरन तुम्हें ।। ३ ।।
फिर स्वयं किरन तुम्हें ।।

प्रीत पालते चलो।
रीत पालते चलो।
पाप मेटते चलो।
ताप मेटते चलो।

मान लो कि आ मिलेंगे फिर स्वयं भुवन तुम्हें ।। ४ ।।
फिर स्वयं भुवन तुम्हें ।।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अन्त भले का भला

'ब्रजेश'

एक गरीब का नियम था रोज जितना मिले, उसे खा लेना। एक बार उसे एक पैसा ज्यादा मिल गया। उसका सारा काम हो गया, फिर भी एक पैसा बच गया, खर्च नहीं हुआ। उसे गांठ में बांधकर उसने सोचा-कल किसी से पूछ कर अच्छे काम में खर्च कर दूंगा।

दूसरे दिन वह खाता पीता रहा उसने पड़ोसियों से पूछा-कौन सा अच्छा काम है।

उन्होंने कहा-एक पैसे के लिये क्या अच्छा काम ढूंढ़ोगे ? दे दो किसी गरीब को।

अब वह सबसे पूछने लगा-तुम गरीब हो ? तुम गरीब हो ? पर कोई अपने को गरीब न माने।

किसी ने कहा-जाओ पंडित ब्राह्मण से पूछ आओ। वहां गया तो उन्होंने बताया-धन का क्या उपाय किया जाय, इसकी व्यवस्था देने के लिये दो रुपये चाहिये।

वह बोला—हमारे पास तो एक ही पैसा है।

पण्डित जी बोले - गरीब को दे दो।

इतने में उसने सुना - हमारा राजा दूसरे राज्य पर चढ़ाई कर रहा है उस राज्य का धन लूटने के लिये। उसने सोचा पैसे के लिये वह जा रहा है तो निश्चय ही वह गरीब होगा। कितने लोग इसमें लड़ेंगे, मरेंगे। वह लोगों को मार कर, सताकर, झूठ बोल कर, पैसा लूटना चाहता है, तो वह जरूर गरीब होगा, वह जाकर रास्ते में बैठ गया।

जब वहां से राजा साहब का रथ निकला तो उसने अपना एक पैसा उठाकर उसकी गोद में रख दिया।

राजा ने पूछा यह क्या ?

वह बोला - मैं कई दिनों से पैसे देने के लिये गरीब की खोज में था आज आप मिल गए तो दे रहा हूं, ले लो।

राजा ने पूछा-मैं गरीब ..... ?

वह बोला मैंने सुना है कि आप पड़ोसी राजा पर आक्रमण करने जा रहे हैं। इस युद्ध में कितने लोगों का शोषण होगा, बेईमानी होगी, लोग मरेंगे। किस लिये पैसे के लिये। तो तुम्हारे सरीखा गरीब इस सृष्टि में और कोई नहीं है।

राजा को यह सुनकर ज्ञान हो गया, राम राम में तो बड़ा भारी अन्याय करने जा रहा था, आज पैसे के लोभ में गरीब के पैसे ने दो राष्ट्रों के भयानक युद्ध को बचा लिया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Literature and Life

Aditya 'Tyagi'

Literature has been described as "the best that has been thought in the world, expressed in the the best way and accepted as the greatest truth." Literature is not something dealing with abstract and divorced from life, rather it is directly linked up with life in general. As a matter of fact, there is a reciprocal relationship between the two. Literature moulds the iife and in turn grows out of the realities of life.

However literature is not a mere imitation of life. In literature, reality is heightened with all the arts and ornaments, so as to make the marres aware of their vices and virtues. In the process, it instructs and reforms the life itself.

No nation can exist without its own healthy literature. A nation without literature, howeeer prosperous it may, be is like a begger wearing beautiful clothes. A nation without literature, is like a building without foundation, which can colladse any time. Our ancient literature canveys to us the grandeur and glamour of cur aacient civilizatiou. The pat.iotic urge of the freedom-loving people of Scotland, the Ftench Revolution of 1789, were the result of the respective literature of their country.

There is a prevalent concept that literature leads a man to the realm of imagination and fancy, that it diverts the man from the realities of life. But this is not so. Literature in the real sense of the term, incorporates the highest value of man's creative life. Every action of man is effected creatively by the impact of a healthy literature. A great literature is the mirror upon which the realities of life are reflected,

Litetature is the most powerful weapon, where swords and guns become useless, literature takes the front. The French nnd Russian revolutions were brought up by the French and Russian writers whose writings moved their peoples to tears, and inspired them to break off their shakles of slavery. The author with his rare insight and imagination can show the right path to masses and with his forceful power of pen, he can trample the mighty kingdom.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Poetry in particular, and literature in general, conveys to man the meaning of his life A poet like Wordsworth can teach, through his poetic art, the sublimity of man's life. He has proved, through his poetry that man's life has became so haggard, dull and mechanical beeause of the fact that it has divorced itseif from nature, As soon as man identifies himself with nature, and its spiritual beauties, his pains and worries come to an end. Only a poet like Shelley could dreamt. of a world free from cruelity and oppression- a world where love would govern all relations. The life on earth is a painted veil which obscores the light of eternity. When we pass from this life of eternity, we pass into the light of Heaven.

"Life like a dome of many coloured glasses stains the white radiance of eternity.

'Shelley'

He relieved the mankind from the fear of death, which to him, is a revealer, the key to all mystry. the spark that lights the fire of true life. Only Shelley could give the hope of bright future to worried masses. "If winter comes can spring be far behind.'

Literature is not merely a theory, it is a reality - a great and convincing reality. It is the very truth of life. What we imagine, what we do and react - all these are reflected analitically through literature. "Science is truth but literature is a greater truth, since it seeks to incorporate all the different realities of life "A C. Benson". Literature records the expression of the inner self of man and his message to the world. Nothing lasts in the world in the sweep of time. But litetature immortalizes human sentiments aspirations achievements and institutions against the ravage of time.

Literature, thus, helps man to elaim a a higher and richer life, inspired by a sublime ideal. A life, divorced from literature is a mechanical life not an ideal one.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

FORM IV

(See Rule 8)

1. Place of Publication		— Rajpur, Dehra Dun.
2. Periodicity of its publication		— Monthly.
3. Printer's	Name	— Indian.
	Nationality	— Indian.
	Address	— New Ideal Printing House, — 4-B, Neshville Road, Dehra Dun
4. Publisher's	Name	— Sh. Swami Amar Muni ji
	Nationality	— Indian.
	Address	— Ram Tirth Ashram, Rajpur, Dehra Dun.
5. Editor's	Name	— Swami Amar Muni ji.
	Nationality	— Indian.
	Address	— Ram Tirth Ashram, Rajpur, Dehra Dun.
6. Names & addresses individuals who own the newspaper and partners or shareholders holding more than one percent of the capital.		— Ram Tirth Ashram, Rajpur, Dehra Dun.

I, Swami Amar Muni, hereby declare that the paticulars given above are true to the best of my knowledge and blief.

(Sd.) SWAMI AMAR MUNI
Publisher.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Revered Swami jl

Namaskar!

We express our profound sorrow on the sudnen and untimely departure for the heavenly abode of a great soul in Swami Govind Prakashji on 19th September 1977. He was indeed a symbol of Love & divine knowledge, selfless service, single-minded devotion and dedication toward this mission, serafice and renunciation, purity and faith. He rendered immense and invaluable service for spread of 'Vedant' of Swami Ram Tirth for the good of humanity. His passing away has created void in the the religion world. He nourished and enriched the plant the seed of which was sown by his predeccessor. Swemi Hari OM ji Maharaj in establishing the present Swami Ram Tirth Ashram, Rajpur, Dehradun. Members of this mission must pray to god. for his salvation and follow the teachings and ideal of Swami Ram Tirath by practising 'Vedant' in real life towerds a better society.

May God rest his soul in peace and guide the mission in the years to come

Swami Amar Muni ji

Swami Hans Prakash ji

Your spiritually

Chander Prakash

Kamla Suri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

★ आश्रम समाचार ★

परमश्रद्धेय ब्रह्मलीन स्वामी गोविन्द प्रकाश जी महाराज की पुण्यस्मृति में आयोजित रामायण-अखण्ड पाठ स्वामी हंस प्रकाश जी महाराज की अध्यक्षता में दिनांक २० को सम्पन्न हुआ। रविवारीय सत्संग में भारतीय-संस्कृति में अनासक्ति की मौलिक धारणा की व्याख्या आपने की।

नारायण भगत द्वारा आयोजित श्री मद्भागवत् की पूर्णाहुति में आपने कहा कि इस ग्रन्थ का उद्देश्य है जीवन में सत्य के मूल्य को पहचानना, जिससे हम मृत्यु के भय से मुक्त होकर इष्ट प्राप्ति कर सकें।

हरिओ३म् सत्संग भवन में श्रीमती कैलाश नय्यर ने ब्रह्मलीन स्वामी गोविन्द प्रकाश जी महाराज की पुण्यस्मृति में सुन्दर काण्ड का पाठ स्वामी हंस प्रकाश जी महाराज के तत्वावधान में बृहस्पतिवार २-२-१९७८ को रखा। हनुमान निरभिमानी व सच्चे राम भक्त थे इन शब्दों से हनुमत् चरित्र पर आपने प्रकाश डाला।

स्वामी अमरमुनि जी महाराज, परमाध्यक्ष जी महाराज ने हरिकुंज बम्बई में दिनांक २६-२-७८ तक अपने प्रवचनों द्वारा जनमानस के प्रति आत्म-शक्ति के साधनों की व्याख्या की। दिल्ली होते हुए आपकी आश्रम आने की दिनांक ४-५ तक सम्भावना है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

—सूचना—

१-मासिक पात्रिका 'राम सन्देश' न मिलने पर अपने समीपस्थ डाकखाने (पत्रालय) से पता करने के पश्चात हमें सूचित करें। क्योंकि कभी किसी कारणवश "राम सन्देश" १५ ता० तक निकलता है। इसलिए शिकायत पत्र अपनी २ ग्राहक संख्या सहित दिनांक २० के बाद प्रेषित करने का कष्ट करें।

२-आप आश्रम में किसी भी प्रकार का धन भेजते समय यह लिखना न भूलें कि वह धन किस निमित्त भेजा जा रहा है तथा चैक स्वामी रामतीर्थ मिशन के नाम पर ही भेजें।

३-यह प्रार्थना है कि जो पाठक इस पत्रिका के आजीवन सदस्य बनना चाहते हैं वे अपना सदस्यता शुल्क सम्पादक के नाम प्रेषित करें। सदस्यों को आजीवन पुनः बिना किसी शुल्क के यह पत्रिका प्रेषित की जायेगी।

४—स्वामी रामतीर्थ मिशन, राजपुर देहरादून के आजीवन सदस्यों को कार्यकारिणी की १९७७ गोष्ठी के निर्णयानुसार यह सूचित किया जाता है कि सदस्यता शुल्क वार्षिक १२ रु० के स्थान पर २० रु० कर दिया गया है तथा उन सदस्यों को मासिक पत्रिका का प्रेषण मास जनवरी १९७८ से निःशुल्क किया जायेगा। अतः सदस्य अपना वार्षिक शुल्क भेजते समय १२ रु० के स्थान पर २० रु० प्रेषित करने का कष्ट करें।

५—'राम-सन्देश' के विदेशी ग्राहक अपना वार्षिक शल्क १५ रू० भेजें। क्योंकि परमाध्यक्ष जी की आज्ञानुसार १२ रु० के स्थान पर ३ रु० वृद्धि का निर्णय लिया गया है।

बुक पोस्ट

ग्राहक संख्या 483

श्री/श्रीमती Gurukul Pustkalaya

स्थान Gurukul Kangri University

डाकखाना Jeanduan

जिला

मासिक पत्र—

"राम — सन्देश"

स्वामी रामतीर्थ मिशन

राजपुर, देहरादून (यू. पी.)

Pin-248009 भारत

स्वामी रामतीर्थ मिशन, राजपुर देहरादून (उ०प्र०) के लिए प्रकाशक स्वामी अमर मुनि दारा न्यू आईडियल प्रिंटिंग हाऊस, ४ बी, नेशविला रोड देहरादून में, मुद्रित।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राम-सन्देश

पुस्तकालय
गुरुकुल कांगड़ी
दिनांक
11-1-96

आजीवन सदस्यता शुल्क : भारत में—१००/-, विदेश में—५००/-

—संस्थापक—
ब्रह्मलीन स्वामी हरिॐ जी महाराज

—व्यवस्थापक—
स्वामी अमर मुनि जी महाराज

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विषय सूची

स्वर दे पाओ तो दे जाना	– जितेन ठाकुर	१
सम्पादकीय		२
कटु सत्य	– कमलेश 'भारतीय'	३
आह्वान	— एम० इकबाल 'दुर्लभ'	,,
व्यावहारिक वेदान्त	— स्वामी राम	४
हमारी शिक्षा प्रणाली	— डा० शान्ति प्रकाश 'आत्रेय'	७
जब राम कहा मैंने तो मैं राम हुआ	— उल्फत एमिनावादी	११
ज्ञानमयी श्रद्धा	— बल्लभदास बिन्नानी	१२
गीत	— बलदेव राज 'शान्त'	१२
समाज और धर्म	— डा० वीना शर्मा	१४
अलविदा	— 'निर्द्वन्द्व'	१६
कौन थे स्वामी विवेकानन्द ?	— स्वामी ब्रह्मानन्द	१७
अध्यात्मयोग	—दामोदर शास्त्री	२१
आपको नमन	—गोपाल शास्त्री	२४
पुष्प की प्रार्थना और विज्ञापन	— टैगोर	२५
श्रद्धाञ्जलियाँ	-- भारतबन्धु शर्मा	२६
Passions Are Blessings Not Disgrace	— G. P Mohanty	27
आश्रम समाचार		

मुख्य सम्पादक—
स्वामी हंस प्रकाश वेदान्ताचार्य, एम०ए० (दर्शन)

सह सम्पादक—
"निर्द्वन्द्व"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'राष्ट्र के हित के लिए प्रयत्न करना ही विश्व की शक्तियों अर्थात् देवताओं की आराधना है'

—स्वामी राम

वेदान्त, अध्यात्म, संस्कृति, धर्म एवं भक्ति का सजग सन्देशवाहक तथा
स्वामी राम के आदर्शों का उपस्थापक एकमात्र लोकप्रिय मासिक—

राम-सन्देश

वेदोपनिषदां तत्त्वम् सत्यं नित्यं सनातनम् ।
तत्सर्वं "रामसन्देशे" पत्रेऽस्मिन्नवलोक्यताम् ॥

वर्ष २७
अंक १

वार्षिक शुल्क : १० रु०,
एक प्रति-८५ पै०,

स्वर दे पाओ तो दे जाना

मैं नित नव गीत रचाता हूँ,
स्वर दे पाओ तो दे जाना ।

काँधों पर शव सम्बन्धों का
लिए फिरेंगे स्वयं सम्बन्धी,
पाप-पुण्य के मध्य कहीं जब
मनुज प्रिये बन जाए बन्दी ।
वक्ष मृदु पावन गंगा का
जब दूषित जल धार जनेगा,
यमुना की कण-कण रेती पर
गीता का व्यापार चलेगा ।
तब ऐसे में निस्तार मुझे,
तुम दे पाओ तो दे जाना ।

अगाध नेह के मृत शिशु का
जब लहू बहा दे लहर-लहर,
मृत शैशव की चीत्कारें
प्रिय दहला दें निस्तब्ध डगर ।
सृष्टि की मीमांसा केवल
रह जाए बस नन्हा बिन्दु,
भू-अम्बर हो जाएं जल-थल
प्रलय-दूत बन जाए सिन्धु,
स्पर्श भरा संसार मुझे,
तब दे पाओ तो दे जाना ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सम्पादकीय

इससे पहले कि हम कुछ नये साल में आपसे आपसी बाते करें पत्रिका की ओर से आप सब पाठकों को नववर्ष के लिए हार्दिक शुभकामना प्रेषित करते हैं और आशा ही नहीं अपितु पूर्ण विश्वास रखते हैं कि इन उबा देने वाली परेशानियों में स्वद्वारा पूर्णतः संतुलित बनाये गये वातावरण में आप हमारे साथ पूर्ववत् स्नेहमय सम्बन्ध बनाये रखेंगें।

आपके समक्ष भी पत्रिका से सम्बन्धित कुछ परेशानियाँ अवश्य होगीं परन्तु इस विषय में सामान्य तौर पर तो हम जान सकते हैं कि वे होगी पत्रिका में विलम्ब या उसके-पत्रिका के–बाह्यरूप से सम्बन्धित पर पत्रिका की विषय सामग्री के विषय में हमारे पाठक क्या चाहते ? उसका स्वरूप कैसा होना चाहिये? इस विषय में हमारी त्रुटि होने का कारण है तत्सम्बन्धी अनभिज्ञता।

कई बार पत्रिका में इस बात का उल्लेख किया गया कि आप 'पाठक' अपने पत्रिका सम्बन्धी विचार सम्पादक के नाम प्रेषित करें परन्तु उस विषय में एक दो पत्रों को छोड़कर कोई भी पत्र प्राप्त नहीं हुआ जो विषय सामग्री के जैसी दी जा रही है या जैसी आगे दी जानी चाहिए–निर्णय में हमारा सहायक बन सकें। तब भी हमने विचार किया है कि कुछ ऐसे लेखकों से, जिन्हें पारिश्रमिक दिया जाये, सम्बन्ध बनाकर अच्छे और सुलझे हुए विभिन्न क्षेत्रीय लेखों, संक्षिप्त-जीवनियों, नीतिकथाओं या अन्य दैनिक उपयोगी सामग्री से पत्रिका की उपयोगिता को और भी अधिक बढ़ाया जावे। परन्तु इस प्रयास में आप सबका सहयोग भी पत्रिका को अपेक्षित होगा।

इसी सन्दर्भ में हमें लेखकों से भी प्रार्थना करते हैं कि वे अपने लेखों को प्रेषित करते समय विषय की व्यावहारिकता की तरफ अधिक ध्यान दें। और प्रेषित लेख को जरा साफ–साफ शब्दों में पृष्ठ के एक ओर लिखकर ही प्रेषित किया करें।

यहाँ पर हम उन रामप्रेमी पाठकों से भी प्रार्थना करते हैं, जो पत्रिका से सम्बन्धित, जैसे अप्राप्ति आदि, के विषय में पत्र प्रेषित करते हैं वे यदि जबाबी-कार्ड में शिकायत-पत्र सम्पादक के नाम भेजा करें तो उन्हें अपने पत्र के उत्तर या पत्र

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पर की गई प्रतिक्रिया के विषय शीघ्र ज्ञान हो सकता है।

संक्षेप में, हम अपने पाठकों की पत्रिका सम्बन्धिनी प्रतिक्रिया के विषय में अधिक से अधिक जानना चाहते हैं, जिससे पत्रिका का उपयोगी–पक्ष सुदृढ़ बनकर स्वामी राम द्वारा प्रतिपादित जीवन के व्यावहारिक पक्ष के अनुसार परिवर्तन में सक्षम हो सके।

अन्त में आप सबकी प्रतिक्रिया की आशा रखती हुई तथा आपका धन्यवाद करती हुई यह लेखनी पुनः नववर्ष के अभिनन्दन के साथ आप सबके जीवन में उन्नति की शुभकामना रामचरणों में कर विराम लेती है।

कटु-सत्य

कमलेश 'भारतीय

मैं !
मोल के पत्थर की तरह—
टस से मस नहीं होता,
सत्य पर अड़ा हूँ।
यही कारण है—
कि लोग सुविधाओं की
बस में सवार होकर
आगे बढ़ गए हैं, और
मैं आज तक
वहीं का वहीं हूं !!

आह्वान

—एम० इकबाल 'दुर्लभ'

युवको !
परन्तु आजकल के
युवकों को युवक कहना
शब्द का अपमान है।
इस युवक शब्द में
कहां रह गया अब
भगत सिंह का सा अभिमान।
फूलदार वस्त्र, लम्बी जटांए,
ढीले-ढाले से निर्बल
यह ढांचे जो चलती-फिरती
लाश बनकर रह गये।
कहां गये युवक ?
इस मिथ्या स्वप्न से जागो,
उठो ! और युवक बनो,
युवक होने का प्रमाण दो।
अपने आपको,
अपने स्वरूप को और
अपने स्वाभिमान को मत त्यागो।
युवतियों की होड़ में
मतवाले बनकर
अपने युवापन को
बरबाद न करो।
देश का पुनर्निमाण कर
इसे आबाद करो।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गतांक से आगे:—

जनवरी १९०२ में भारत-धर्म-महामण्डल भवन मथुरा में स्वामी राम का व्याख्यान,
श्रीनारायण स्वामी द्वारा लिखित नोटों से—

व्यावहारिक वेदान्त

—स्वामी राम

कर्म

कुछ लोग कहते हैं कि सारे काम ईश्वर की इच्छा से होते हैं कुछ कहते हैं कि नहीं, मनुष्य के प्रयत्न वा पुरुषार्थ से होते हैं।

पूर्व-कथित महाशय इस मामले को इस तरह माने बैठे हैं, कि सब कुछ उसकी इच्छा से ही होता हैं, हमारा इसमें बिल्कुल कर्तृत्व नहीं है। और पश्चात्कथित महाशय इस झगड़े को इस तरह तय किये बैठे हैं कि जो काम होता है, मनुष्य के पुरुषार्थ से होता है, ईश्वर का इसमें कुछ भी कर्तृत्व नहीं है क्योंकि इतिहास में स्पष्ट रूप से देखने में आता है कि नेपोलियन बोनापार्ट ने सम्पूर्ण योरप को अपने ही साहस, पुरुषार्थ और दृढ़ता से छिन्न-भिन्न कर दिया था। नादिर और महमूद गजनवी का हाल भी इसी तरह का है। अगर ये साहस भरे वीर पुरुष साहस, दृढ़ता और पुरुषार्थ को एक किनारे रखकर केवल घर में ईश्वर पर भरोसा किये बैठे रहते तो सारे योरप और भारतवर्ष में अपना सिक्का कभी न जमा सकते। अतः साहस और दृढ़ता अर्थात पुरुषार्थ ही आवश्यक है, ईश्वर पर भरोसा करके बैठे रहना अपने आपको आलसी और कायर बनाना है।

इसके सम्बन्ध में वेदान्त कहता है कि यदि दूरदर्शितापूर्वक देखा जाए अर्थात इस झगड़े की सत्यता पर दृष्टि डाली जाय, तो विदित होगा कि इन दोनों बातों में-अर्थात् ईश्वर सब कुछ करता है वा पुरुषार्थ से सब कुछ होता है—कुछ भी अंतर नहीं है, बल्कि अन्तर केवल दृष्टियों में है, जो वास्तविकता तक नहीं पहुँचती। वेदान्त तो उन लोगों की सेवा में, जो कहते हैं कि ईश्वर ही सब कुछ करता है, यह प्रश्न उपस्थित करता है कि पहले केवल इतना बता दो कि आप ईश्वर का स्वरूप क्या माने बैठे हैं? आया वह निराकार अर्थात् रूप-रहित है या साकार अर्थात् रूप-रेखावाला है; आया वह शरीर के स्वामी की तरह कर्त्ता पुरुष है, या केवल अकर्त्ता, वह सम्बन्ध-सहित वा संगवाला है निस्संम्बन्ध वा असंग है? जब आप हमारे इन प्रश्नों का उत्तर सविस्तार और ठीक रीति से दे देंगे या सुन लेंगे, तो आप पर इस ग्रन्थि का भेद आप ही आप खुल जायगा। फिर उन महाशयों को—जो केवल साहस और दृढ़ता को ही मानते हैं, और ईश्वर की इच्छा आदि को एक कोने में रखते हैं, तथा प्रमाण में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इतिहास आदि की साक्षियां दे-देकर पुरुषार्थ को सिद्ध किया चाहते हैं, मगर अपनी बुद्धि को जरा और आगे नहीं दौड़ाते वेदांत अपनी आत्मा को समझा कर यह उपदेश देता हैं कि प्यारो! यदि इतिहास की सत्यता को खूब समझकर पढ़ते तो यह परिणाम न निकालते। यदि अब भी इतिहास को दुबारा गौर से पढ़ोगे, तो ऐसा परिणाम कभी भी आपको प्राप्त न होगा। बल्कि इससे बढ़कर सफलता के उत्तमोत्तम कारण आपको दिखाई देंगे, क्योंकि इतिहास में प्रायः भ्रांति भी हो जाती है। एक तत्त्ववेत्ता ते क्या ही अच्छा कहा है-

"Don't read history to me, for I know it must be false, (मुझे इतिहास पढ़कर न सुनाओ, क्योंकि मैं जानता हूं कि इतिहास अवश्य झूठा होता है।)

यह पढ़कर सारे इतिहास और इतिहासज्ञ बडे आश्चर्यकित होंगे। बल्कि ये प्रश्न उपस्थित करेंगे।

(१) क्या इतिहास बिलकुल झूठे ही होते हैं?

(२) क्या सुयोग्य इतिहासकारों ने केवल झठे को ही उन्नति देने के लिए अपना बहुमूल्य समय व्यय किया था?

इस तरह के उल्टे - पुल्टे आक्रमण करने को तैयार हो जायेंगे। इसमें राम का यह कहना है कि यद्यपि इतिहास बिलकुल ही झूठा नहीं होता मगर प्यारो! इस तत्त्ववेत्ता का कथन भी अनुचित नहीं है, बल्कि कुछ सत्यता रखता है। यद्यपि वह देखने में व्यर्थ दिखाई देता है मगर उसमें भी कुछ रहस्य है क्योंकि हम नित्य देखते हैं कि मनुष्य जब अपने नित्य के रोजनामचे (दिनचर्या) लिखने में बहुत सी भूलें कर जाता है, तो सोचिए कि औरों के हाल लिखने में कितनी भूलें करता होगा। फिर आजकल लोग उन मनुष्यों के इतिहास लिख रहे हैं, जिनको उनके बाप-दादे ने भी नहीं देखा था। केवल इतिहासिकारों के झूठे-सच्चे वृत्तान्तों को लेकर उसमें से कुछ उद्धृत करके वे अपने इतिहासों में अंकित कर रहे हैं। इससे स्पष्ट विदित होता है कि उनमें लाखों ही भ्रांतियां होती होंगी, और केवल औरों की नकल करके अत्युक्ति से ही किताबें भरी जाती होंगी। क्योंकि यह प्रत्यक्ष देखा जाता है कि एक मनुष्य अपना आंखों-देखा हाल अपने रोजनामचे में लिखते समय बीसों भूलें कर जाता है, तो फिर क्या यह बात असंभव है कि वह उन लोगों के हाल लिखने में अगनित भूलें न करता होगा कि जिनको उसने स्वंय तो क्या, बल्कि उसके बाप-दादे ने भी नहीं देखा है? इसलिये इतिहास की इबारत को समझने के लिए भी ऐसे मस्तिष्कवान् मनुष्य का होना आवश्यक है, जो पढ़ते समय इन समस्त भ्रांतियों पर दृष्टि रक्खे; इबारत की शब्दावली पर ही लट्टू होनेवाले लोग न तो नेपोलियन के साहस और दृढ़ता (पुरुषार्थ) की सत्यता समझेंगे और न कोई अच्छा परिणाम हीं निकाल सकेंगे मगर खैर, ऐसे महाशयों से भी, जो केवल इति-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हास के प्रमाण ही सामने रखना चाहते हैं और स्वयं कुछ नहीं विचारते, वेदान्त बड़े प्रेम और स्नेह से यह पूछता है कि हमारे लिये अपनी दशा पर विचार कर बताओ कि जिस समय आपको सफलता प्राप्त होने वाली होती है तो उस समय आपकी भीतरी दशा क्या होती है? (क्योंकि जब आपको अपनी सफलता का तत्व विदित हो जायगा तो औरों की सफलता के विषय में अपने आप ठीक परिणाम अवश्य निकाल लोगे।) इसके उत्तर में प्रत्येक के अन्तःकरण से यह ध्वनि निकलती कि हर काम में केवल उस समय सफलता होती जब साहस भी अपूर्व हो और चित्त में अहंकार की गंध तक न हो। जो लोग नेपोलियन बोनापार्ट के साहस आदि का हवाला देते रहते हैं, अगर वे उसके जीवन-चरित्र को गौर से पढ़ेंगे तो अवश्य यह बात पायेंगे कि जिस समय नेपोलि बोनापार्ट सफलता प्राप्त कर रहा था, उस स उसके हृदय में कभी यह उत्पन्न न होता था मैं काम कर रहा हूं बल्कि मस्ती के जोश बेखबर होकर वह हमेशा लड़ता था इससे सफलता प्राप्त होती थी। जब कोई अहंकार साथ लेकर लड़ा है, उसी समय उसने हार ख और बंदी हुआ है। क्योंकि यही प्रकृति का नि है कि जहाँ अहंकार होता है, वहाँ कभी भी स लता प्राप्त नहीं होती। इस विषय में हरएक अनुभव साक्षी है। क्योंकि प्रकृति का यह नियम "अहंकार से अलग होने पर ही सदैव सफल होती है", केवल एक व्यक्ति पर लागू नहीं बल्कि सब पर इसका शासन है।

क्रमश

-नव-हर्ष-

नव हमारे ही द्वारा बनाई गई परिधि, सीमा से अगला चरण है, जो बीते हुए का फल, भावी की रूपरेखा और वर्तमान में आश्चर्यमय तथा आनन्दरूप होता है। ऐसी स्थिति में तो हमारा हर दूसरा पल हर पहले पल के लिए नया है तो क्यों न हम नव-वर्ष की खुशी को परिवर्तित कर इस स्थिति में पहुंचा दें कि साल के बाद आरोपित किये जाने वाले सुख को हम हर पल, हर क्षण हृदय से सच्चे रूप में अनुभूत कर सकें। ★

त्याग

आप कोई कर्तव्य करने के लिए बाध्य नहीं; आप किसी के प्रति उत्तरदायी नहीं आप को कोई ऋण नहीं चुकाना है, आ किसी से बंधे नहीं हैं। आप अपने व्यक्तित्व को सभी समाजों और सभी राष्ट्रों और प्रत्येक वस्तु के सामने सभी प्रतिपादन करो। यही वेदान्तिक त्याग है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हमारी शिक्षा प्रणाली

(डा० शान्ति प्रकाश आत्रेय एम०ए०, पी०एच०डी०, व्यायाम केसरी, रुस्तमे उत्तर प्रदेश)

किसी भी देश के व्यक्तियों की जीवन प्रणाली आदर्श चरित्र, आध्यात्मिक विकास, नैतिक विकास, स्वयं मानसिक अवस्था का अगर अध्ययन करना हो तो उस देश की शिक्षा प्रणाली का अध्ययन अनिवार्य सा हो जाता है। शिक्षा प्रणाली से देश के व्यक्तियों की विचार प्रणाली व्यक्त होती है। वे जीवन को क्या समझते हैं इसका ठीक–ठीक ज्ञान प्राप्त होता है। शिक्षा प्रणाली तो यह बताती है कि व्यक्ति अपने देश के जीवन को किस ओर ले जाना चाहते हैं। आने वाली पीढ़ी को वे क्या बनाना चाहते हैं। किस ढाँचे में ढालना चाहते हैं विचार पूर्वक प्रदान की गई शिक्षा प्रणाली देश की आवश्यकताओं तथा उनकी पूर्ति के साधनों को स्पष्ट रूप से हमारे सम्मुख प्रस्तुत करती है। उत्तम शिक्षा प्रणाली व्यक्ति को युग के अनुसार संसार में रहने योग्य बनाती है। जिसके फलस्वरूप व्यक्ति अपना ठीक ठीक समायोजन कर अपने जीवन को अधिकतम् सुखी बना सके। इसका कार्य बालक का सही–सही शारीरिक, मानसिक, नैतिक, सामाजिक एवं आध्यात्मिक विकास करना है। शिक्षा प्रणाली का मुख्य उद्देश्य बालकों के व्यक्तित्व का सर्वांगीण विकास करना तथा उन्हें जीवन के समस्त मूल्यों से अवगत कराना है। शिक्षा प्रणाली पर ही हमारी संस्कृति एवं सभ्यता दोनों आधारि हैं।

उपर्युक्त कथन से स्पष्ट हो जाता है कि राष्ट्रीय जीवन के लिए शिक्षा प्रणाली का सर्वोपरि महत्त्व है। हमें तो यहां तक कहने में संकोच नहीं होता कि विश्व की अशान्ति एवं अव्यवस्था के मूल में भी शिक्षा प्रणाली की कमी ही झलकती है। हमारे देश भारत वर्ष की शिक्षा प्रणाली के दूषित होने के कारण ही आज सम्पूर्ण देश उसका फल भोग रहा है। आज उसी कारण सर्वत्र अशान्ति एवं अव्यवस्था फैली हुई है। पूरे देश में हाहाकार मचा हुआ है। रौरव नरक का दृश्य चारों तरफ दृष्टिगोचर हो रहा है। इतना होने पर भी इस ओर किसी का ध्यान नहीं है। अपनी परतन्त्रावस्था में तो शिक्षा प्रणाली के समस्त दोषों को हम विदेशी सत्ता के ऊपर मढ़ कर छुट्टी पा जाते थे। किन्तु आज जब कि हमें स्वतंत्र हुए ३० वर्ष हो चुके हैं और हम ही पाठशालाओं, विद्यालयों तथा विश्व–विद्यालयों के प्रबन्धक हैं तो शिक्षा में हमने क्या ठोस सुधारात्मक प्रयत्न किये? आज की हमारी शिक्षा प्रणाली के दोषों के लिए हम भारतीय ही बहुत हद तक जिम्मेदार हैं। विचारक ही मानव

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समाज के प्राण हैं। विचारकों के चिन्तन के द्वारा प्रगति की आशा की जा सकती है। प्राचीन भारतीय ऋषियों के द्वारा प्रदान की गई शिक्षा प्रणाली तथा सामाजिक व्यवस्था की तुलना किसी भी देश की शिक्षा प्रणाली तथा सामाजिक व्यवस्था से नहीं की जा सकती है। इस बात को अच्छी तरह समझ 'मैकाले' ने हमारी शिक्षा में परिवर्तन किया था। इस मूल परिवर्तन के फलस्वरूप ही आज हम स्वतंत्रता प्राप्त करके भी अभी तक सही रूप में परतंत्र ही हैं। बल्कि यह कहना गलत न होगा कि दिन प्रतिदिन भारतीय पहले की अपेक्षा अधिक परतंत्र होते जा रहे हैं। सच ती यह है कि किसी को भी वश में करने के लिए हमें सबसे पहले उसे विचारों की गुलामी प्रदान करनी चाहिए। अगर हम ऐसा करने में सफल हो सकें तो निश्चय है कि वह हमारे हाथों की कठपुतली बनकर नाचेगा। यही कारण है कि आज हम दिन प्रतिदिन परतंत्रता में जकड़े चले जा रहे हैं। इस परतंत्रता का पहला प्रमाण है हमारी स्वतंत्र राष्ट्र भाषा का न होना। आज ३०. वर्ष में भी हिन्दी भाषा को भारतवासी नहीं अपना पाये। बड़े खेद का विषय है। मैं यह नहीं जान पाता कि जब हमारे भारतीय दूसरे देशों में जाते हैं तो वहां की भाषा दो - चार महिनों में ही सीख लेते हैं। वे लोग ३० वर्ष में हिन्दी न सीख सके, जो हमारी परतंत्रता का प्रमाण है। आज उच्चतम व्यक्तियों के विचारों में भी गुलामी पूर्ण रूप से व्याप्त है। यही हमारी परतंत्रता एवं दुःख का कारण है। हम अभी तक भी वैसा ही सोचते और करते हैं जैसा कि दूसरे हमको सोचने और करने के लिए बाध्य करते हैं बाह्य अर्थात विदेशी इच्छा से हम सब गुलाम हो रहे हैं। उसी के कारण देश की ऐसी भयंकर स्थिति हो रही है। जिसको सोचते हुए आज प्रत्येक भारतीय अपनी जगह अशान्त और बेचैन है। यह वह अवसर है जिसमें क्रान्ति का होना अनिवार्य सा हो रहा है। क्रान्ति के बिना यह अशान्ति समाप्त नहीं हो सकेगी। राष्ट्र के ही नहीं बल्कि विश्व के जीवन में सुख और शान्ति प्राप्त नहीं हो सकेगी। मानव के इतिहास के पन्ने बताते हैं कि अधिकतम बलिदान करने वाले राष्ट्रों ने ही विश्व में अपने अस्तित्व की पताका फहराई। अपने को मिटाकर नवयुवकों ने सदैव राष्ट्रों का निर्माण किया तथा उसमें उचित परिवर्तन लाकर राष्ट्र को ऊंचा उठाया। हर चीज की कीमत चुकानी पड़ती है। अपने राष्ट्र का विध्वंस होने से बचाने के लिए भारतीय नव-युवकों को भारतीय व्यवस्था में उचित परिवर्तन लाने के लिए जीवन का बलिदान करना ही पड़ेगा। राष्ट्र के अस्तित्व को कायम रखने के लिए अपने छोटे दायरों को तोड़ना पड़ेगा। आज भारत माता अपने बच्चों से भिक्षा मांग रही है, कह रही है कि जीवन का मोह छोड़कर राष्ट्र की नैया को इस उथल पुथल से खेकर पार लगाओ ऐसी दशा में सब भारतीयों का पुनीत कर्त्तव्य एवं परमधर्म है कि वे सर्व प्रथम अपनी सम्पूर्ण शक्ति

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक आदर्श शिक्षा प्रणाली देकर इस वर्तमान शिक्षा प्रणाली को पूर्ण रूप से बदल दें।

हमारे विश्व-विद्यालयों से निकलने वाले उच्चतम् शिक्षा प्राप्त स्नातकों के द्वारा ही वर्तमान शिक्षा प्रणाली के दोष स्वतः प्रकट हो जाते हैं। मेरे एक मित्र इन विश्व-विद्यालयों तथा शिक्षालयों को काँजी हाऊस कहा करते थे। उनका कहना था कि बी० ए० पास होते-होते युवकों की सारी रचनात्मक शक्ति समाप्त हो जाती है। शारीरिक शक्ति क्षीण हो जाती है, इन्द्रियों की क्रियाओं में ह्रास दृष्टिगोचर होने लगता है। बिना चश्मे के उनके नेत्र ठीक-ठीक देखने का कार्य नहीं कर पाते कान कठिनाई से सुन पाते हैं। दांत मुश्किल से चबा पाते हैं। पैरों से अधिक चल नहीं पाते, इसी भरी जवानी में बुढ़ापा आ जाता है, और वे संसार के लिए तथा अपने लिए भार स्वरूप हो जाते हैं। वे संसार में रहने योग्य ही नहीं रह जाते हैं, सिद्ध होता है उनसे समाज का महा अकल्याण होता है। वे समाज तथा सरकार दोनों से बदला लेने की भावना पनपा लेते हैं। हमें कहते हुए महान कष्ट होता है कि वर्तमान-युगीय शिक्षा आज मानव को व्यवस्थित एवं विकसित करने के स्थान पर उसे अव्यवस्था विघटन तथा नीचे की ओर ले जा रही है। आज के शिक्षा शास्त्रियों का मुख्य कर्तव्य इस ओर चिन्तन करके शिक्षा को समाजोपयोगी एवं कल्याणकारी बनाना है। अगर शिक्षा का यह विनाशकारी रूप अधिक दिनों तक चलता रहा तो निश्चित ही सम्पूर्ण समाज घोर नाटकीय यातनाओं से वंचित न रह सकेगा। शास्त्रों में कथित घोर नरक का सारा दृश्य हमारे सामने आ जायेगा। शिक्षा के कारण आज भी हम कम दुःखी नहीं हैं।

अब प्रश्न उठता है कि हमारी शिक्षा कैसी होनी चाहिए? इस प्रश्न का कतिपय शब्दों में उत्तर यही हो सकता है कि जो शिक्षा सम्पूर्ण मानव का प्रशिक्षण तथा विकास करने में समर्थ हो वही शिक्षा है। आधुनिक शिक्षा मानव बालक को वास्तविक सांसारिक जीवन के उपर्युक्त इसलिए नहीं बना पाती क्योंकि इसके द्वारा सम्पूर्ण मानव का प्रशिक्षण एव विकास नहीं होता है। उसके द्वारा तो मानव के व्यक्तित्व के बहुत से महत्त्वपूर्ण तत्त्वों की अवहेलना करके कुछ तत्त्वों का ही विकास हो पाता है। इसके द्वारा मानव व्यक्तित्व के सब तत्वों का सामञ्जस्य पूर्ण विकास नहीं हो पाता है। वास्तविक शिक्षा को जानने के लिए हमारे लिए मानव को ठीक-ठीक और पूर्ण रूप से जानना अनिवार्य सा हो जाता है बिना मानव को समझे हम उसके लिए शिक्षा निर्धारित नहीं कर सकते हैं। मनुष्य के अपूर्ण स्वरूप के ऊपर शिक्षा का आधारित होना ही उसकी सबसे बड़ी कमजोरी है।

मानव को आधुनिक विज्ञान अपने सम्पूर्ण

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अन्वेषणों के द्वारा भी ठीक-ठीक नहीं जान पाया है, उसके द्वारा हमें व्यक्तित्व का पूरा पता नहीं चल पाता है। मनुष्य केवल भौतिक शरीर तक ही सीमित नहीं है। जैसा कि जड़वादी तथा वैज्ञानिक लोग मानते हैं। जीव शास्त्र मनुष्य के स्वरूप को अधिक समझते हुए भी मानव को ठीक-ठीक बताने में असमर्थ है। मनुष्य केवल जीव ही नहीं है बल्कि उससे भी कहीं अधिक है।

मनुष्य जीवन में मानसिक जीवन का महत्व दैनिक जीवन की अपेक्षा कहीं अधिक है। इस मानसिक जीवन का अध्ययन मनोविज्ञान के अन्तर्गत किया जाता है। वैसे तो आधुनिक मनोविज्ञान भी मानव के पूर्ण स्वरूप को व्यक्त करने में असमर्थ है। वह तो हमें मानव सम्बन्धित आंशिक ज्ञान ही प्रदान करता है। जिस प्रकार से मानव पंच तत्वों, पंचभूतो, पृथ्वी, जल, तेज, वायु, आकाश द्वारा निर्मित भौतिक शरीर मात्र नहीं है उसी ही प्रकार न उसे अन्तःस्रावी पिण्डों के स्राव को रासायनिक क्रिया प्रक्रिया के द्वारा ही पूर्ण रूप से समझा जा सकता है, न वह केवल जैविक प्राणी ही है। इसके अतिरिक्त वह केवल चेतन और अचेतन मात्र ही नहीं है, बल्कि वह अतिचेतन भी है। इस अतिचेतन का अध्ययन आधुनिक मनोविज्ञान के उस क्षेत्र से भी बाहर है। आज परामनोविज्ञान के अन्वेषणों ने मानव के गहरे स्वरूप एवं शक्तियों का ज्ञान प्राप्त किया है, तथा उसके द्वारा मानव का अतिचेतन स्वरूप भी प्रकाशित हो जाता है। उपर्युक्त कथन को दृष्टि में रखते हुए हमें मानव के लिए शिक्षा प्रणाली प्रस्तुत करने से पूर्व उसके स्वरूप का हर दृष्टिकोण से स्पष्टीकरण करना अनिवार्य हो जाता है क्योंकि शिक्षा प्रणाली मानव के स्वरूप के अनुरूप होनी चाहिए। आज इसके अभाव में ही वर्तमान शिक्षा प्रणाली के द्वारा समाज में विघटन, असन्तोष एवं दुःख का साम्राज्य फैल रहा है। अतः मानव की धारण का विवेचन हर दृष्टिकोण से करना आवश्यक है। स्वरूप की रक्षा करना ही धर्म है। धर्म विद्या पर आधारित है। इसी कारण मनु ने विद्या को धर्म का लक्ष्य माना है। यहां विद्या का अर्थ आज की शिक्षा से नहीं है, किन्तु अपने स्वरूप पर आधारित शिक्षा से है। जिस स्वरूप की रक्षा करना ही धर्म है।

धृति क्षमा दमोऽस्तेयं शौचमिन्द्रिय निग्रहः।
धीर्विद्या सत्यमक्रोधो दशकं धर्म लक्षणम्॥

अतः धार्मिक शिक्षा ही शिक्षा है, उसे ही विद्या कहा जा सकता है। धार्मिक शिक्षा का सही अर्थ यही है।जब तक स्वरूप के अनुरूप शिक्षा नहीं होगी तब तक मानव स्वरूप का सर्वांगीण विकास नहीं होगा अर्थात जब तक उसकी धार्मिक शिक्षा नहीं होगी तब तक वह सुखी नहीं हो सकता है और न ही सामाजिक विघटन, असन्तोष एवं दुःखों से छुटकारा ही पा सकता है। अतः शिक्षा के लिए मानव

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

–जब राम कहा मैंने तो मैं राम हुआ–

१
हर सांस में लिपटी है तमन्ना कैसी,
चिमटी है तेरे साथ यह दुनिया कैसी,
२
'तीरथ' ने ही पैगाम दिया है ऐ दिल,
सम्मुख है तेरे राम तो चिन्ता कैसी ।।
३
सूरज की तरफ रुख हो तो साया पीछे,
दुख–दर्द के अन्धेर की काया पीछे ।
तब्दील किया राम तो 'तीरथ' ने कहा,
राम आगे है और राम की माया पीछे ।।
४ ५
संसार में अब शोहरा मेरा आम हुआ,
६
हर बज्म में हर नाम मेरा नाम हुआ ।
अब तक तो मैं 'तीरथ' ही था दुनिया वालो,
जब राम कहा मैंने तो मैं राम हुआ ।।
७
आकाश को हैं याद नज़ारे अब तक,
वायु में वही राम पुकारे अब तक ।
८
किस तरह हम–आग़ोश हुआ राम से राम,
कहते हैं यह गंगा के किनारे अब तक ।।

– उल्फत एमिनाबादी
दिल्ली

१– आकांक्षा २– सन्देश ३– मुख
४– प्रसिद्ध ५– व्यापक ६– सभा–मज्लिस
७– दृश्य ८– बग़लगीर–आलिंगन

के स्वरूप का निर्णय करना अनिवार्य हो जाता है क्योंकि हमारी शिक्षा उसी पर आधारित है। भारतवर्ष में इस क्षेत्र में बहुत कार्य हुआ है। जिस स्तर तक आधुनिक ज्ञान अभी तक नहीं पहुंच पाया है।

--क्रमशः

ज्ञानमयी श्रद्धा :

—बल्लभ दास विन्नानी

स्वामी रामतीर्थ बड़े ही कुशाग्र - बुद्धि तथा अध्ययनशील विद्यार्थी थे। उन्हें रास्ते चलते भी पुस्तक पढ़ने की आदत थी। इसलिए कभी–कभी लोग उनका मजाक भी उड़ाया करते थे। एक दिन वे सड़क पर पुस्तक पढ़ते हुए चले जा रहे थे तो एक व्यक्ति ने टोक कर कहा–भाई साहब, यह पाठशाला नहीं है, रास्ते चलते तो कम से कम पुस्तक ठीक ठिकाने रख दिया करों।

स्वामी जी ने मुस्कराते हुए कहा, यह सारा संसार ही पाठशाला है।

— — — —

लोकमान्य बालेगंगाधरतिलक बचपन में अपने गांव में एक मौलवी से पढ़ा करते थे। प्रारम्भिक पढ़ाई समाप्त होने पर पाठशाला भेजा गया तब यह प्रश्न आया कि मौलवी साहब को क्या भेंट दिया जावे। उनके पिताजी मौलवी साहब को मासिक वेतन के अलावा कुछ और भी भेंट करना चाहते थे।

तभी तिलक बोले-पिता जी ! इन्हें अपनी दूध देने वाली बछिया दे दीजिए। इन्होंने मुझे सबसे बढ़िया विद्या का दूध पिलाया है।

शिष्य की इस ज्ञानमयी श्रद्धा से पिता तथा गरू दोनों पुलकित हो उठे। ★★

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

॥ गीत ॥

(अतीत की स्मृतियाँ)

—शास्त्री बलदेव राज शान्त

चान्दी जैसी वे रात गई, वे सोने जैसे दिन बीत गये ।

अनन्त वसन्त सा सन्त गया,
शूलों ने फूलों को शाप दिया ।
मन का पाहुन तो पाहन निकला,
प्रिय ने प्राणों को ताप दिया ।

वह पूरब की बात न चली कभी, गाये न गये वे गीत नये ॥१॥

बिस्मृत को याद न किया कभी,
मृत को अमृत की बूंद न दी ।
न तृप्त हुआ, संतृप्त हृदय,
सूखी न अभी आंसू की नदी ।

जो लोचन तृषा बुझाते थे, स्नेह-सुधा घट रीत गये ॥२॥

रग रग में राग व रंग नहीं,
आशा की किरण रण हार गई ।
संकल्प अभी अति अल्प हुये,
सुख सौरभ भरी बहार गई ।

विपदा की लम्बी रजनी में, प्रिय-प्रीत-वचन विपरीत गये ॥३॥

मधुमास की आस न पास रही,
सत्संग-सुधा की रैन गई ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सागर भर प्रीत जो सौंपी हमें,
अब गागर सी भी रह न गई।
दिन रात जो थे चरणों में कटे, हाय वे सुदिन सब बीत गये ॥४॥

मलयाचल की न चपल बयार चली,
सपनों का चन्दन-वन डूब गया।
दुःख का सागर कगार तक लहराया,
जग से उन्मन मन ऊब गया।

अपनी छवि-छाया छीन चले, हमको दे पावन प्रीत गये ॥५॥

हा, प्रेम का धागा बड़ा अभागा,
आज जिसे तुम तोड़ गये।
अपने प्रिय पद-चिन्हों पर,
श्री 'अमर मुनि' की छोड़ गये।

हमसे खेले प्रेम की बाजी हम हारे तुम जीत गये ॥६॥

वह काली अमा गई करके क्षमा,
द्वार देहरी, न दिये न जलाया दिया।
घर आई रमा, मन क्षण न रमा,
सुख छीन गई, दुख और दिया।

मन को था कुछ सन्तोष मिला, हाय वे मधुर दिन बीत गये ॥७॥

अस्ताचल में दिनकर डूब गया,
पनघट पर कंचनघट फूट चुके।
गगा-तट कंचनमृग दीख रहे,
सपनों के सुन्दर दृग फूट चुके।

गिन गिन के न गिन सकते थे जिन्हें, वे अनगिन दिन बीत गये॥
चान्दी जैसी वे रात गई, वे सोने जैसे दिन बीत गये ॥८॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

★ समाज और धर्म ★

डा० वीना शर्मा एम० ए० पी० एच० डी०

मनुष्य सामाजिक प्राणी है। वह जिस समाज में रहता है उसकी परम्पराओं रीति-रिवाजों का अनुसरण करता है। सामाजिक नियम परिवर्तन शील है। समय की गति के साथ समाज के नियम बनते एवं बिगड़ते रहते हैं। धर्म सार्वकालिक एवं सार्वभौमिक होता है। समाज के उत्थान एवं प्रगति के लिए धर्म अपरिहार्य है।

लोकाचार हमें केवल भौतिक सुख प्रदान करता है परन्तु धर्म आध्यात्मिकता एव मानव-जीवन के चरम लक्ष्य पर पहुंचा देता है। सामाजिक नियम कभी बुरे नहीं होते पर उनका पालन करने वाले उनका विकृत रूप बनाया करते हैं, आज हमारे समाज की यही स्थिति है। केवल मात्र भौतिकता की नींव पर खड़ा हुआ महल कदापि चिरस्थाई नहीं होता क्योंकि भौतिक वस्तुएं नश्वर हैं किसी ने कहा भी है—

चार दिन की जिन्दगी तू सुन ले इसकी दास्तां
रेत की दिवार पर है एक मिट्टी का मकां।

आज जगत में वास्तविकता का अभाव है। परस्परविरोध, द्वेष, वैमनस्य का आधिपत्य दृष्टि-गोचर होता है। आज मानव दिखावे मात्र के लिए प्रेम करता है, वास्तव में दिल वैर-भाव रखता है। सच्चा मित्र वही है मित्र वही जो दुःख में काम आए, प्रायः देखा जाता है जब मनुष्य के पास सुख एवं ऐश्वर्य के साधन होते हैं उसके सभी सम्बन्धी उससे सम्पर्क स्थापित करते हैं। दुर्भाग्य वश यदि वह निर्धन हो जाय या उस पर विपत्ति आ जाय तब सब उसको त्याग देते हैं बिरले जन ही विपत्ति में सहायक होते हैं। कुछ लोग दूसरे की उन्नति देखकर अप्रसन्न होते हैं एवं द्वेष करते हैं। दूसरे के उत्थान में बाधक बने रहना अपना कर्तव्य समझते हैं। वास्तव में जगत के सम्बन्ध मिथ्या है—

जगत में झूटी देखी प्रीत
अपने ही सुख स्यों सब लागे
क्या दारा क्या मीत।

भौतिक वस्तुओं की भांति मानव जीवन भी नश्वर है। मानव-जीवन पानी के बुलबुल के सदृश क्षण-भंगुर है। देखते-देखते प्रातःकालीन तारे की भांति मनुष्य क्षण में विलीन हो जाता हैं।

आज हम केवल भौतिकता की प्राप्ति ही मानव-जीवन का चरम लक्ष्य मान बैठे हैं। तभी दुर्व्यवहार, चोरी धोखा न जाने कितने पाप करते

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हैं।

धर्म पर आधारित जीवन एवं समाज दोनों ही चिरस्थाई होते हैं। धर्म मानव मात्र में सद्गुणों का विकास करता है। धर्म मानव को मानवता ही नहीं विश्व मानवता का पाठ पढ़ाता है। वह वैर करना नहीं प्रेम करना सिखाता है।

धर्म से तात्पर्य मानवोचित गुणों को धारण करना है।

अहिंसा, दया, परोपकार जैसे तत्वों पर आधारित जीवन श्रेष्ठ होता है। धर्म को लेकर यदि व्यक्ति चलता है तो वह सदैव श्रेष्ठ एवं मान्य रहता है। धर्म कदापि नहीं कहता है कि असत्य बोलो, हिंसा करो धर्म के सिद्धान्त शाश्वत एवं सनातन होते हैं, सभी कालों में यह कहा जाता रहा है 'अहिंसा परमो धर्मः'। कभी किसी ने यह नहीं कहा हिंसा करो। कुछ व्यक्ति कहते हैं धर्म समाज में संघर्ष करवाता है। धर्म के नाम पर लड़ाई होती है। यह पूर्णतः असत्य है। धर्म कभी संघर्ष नहीं कराता है। साम्प्रदायिकता तो संघर्ष का मूल हो सकती है धर्म नहीं। मानव जीवन का चरम-लक्ष्य भौतिकता की प्राप्ति नहीं है अपितु परमानन्द की अनुभूति है। यदि भौतिकता में ही आनन्द होता तो अमेरिकावासियों में अशान्ति क्यों है। वे लोग भारत की ओर क्यों जा रहे हैं। आज वे भौतिकता से ऊब चुके हैं।

गुल शोर बगूला आग हवा
और कीचड़ पानी मिट्टी है
हम देख चुके इस दुनिया को
यह धोखे की सी टट्टी है,

यदि भौतिकता में ही सुख होता तो महात्मा बुद्ध जिनके पास राजा के पुत्र होने के नाते सर्व भौतिक सुख के साधन थे कदापि संसार न छोड़ते। स्वामी रामतीर्थ, जोकि गणित में विश्व के माने हुए प्रोफेसर थे जिनको भारत ही नहीं विश्व भी सम्मान देता है, भौतिक सुख के साधनों के होते हुए कदापि संन्यास न लेते।

हम सब को यह विदित है

"है बहारे दुनिया चन्द रोज
देख लो इसका तमाशा चन्द रोज
ऐ मुसाफिर! कूच का सामान कर
जिन्दगी का है भरोसा चन्द रोज"

हम सब इस दुनिया में कुछ दिनों के लिए आए हैं। कुछ लोग बेईमानी से धन एकत्र करने में लगे हुए हैं। क्या वह धन साथ ले जायेंगे?

न वो ले गए कुछ साथ जो मुल्कों के वाली थे।
सिकन्दर जब गया दुनिया से दोनों हाथ खाली थे॥

महाराजा सिकन्दर ने हिंसा के द्वारा अनेक राज्य जीते। अत्यधिक रक्त बहाया। असंख्य बहुमूल्य रत्न एकत्र किए परन्तु साथ वह कुछ भी न ले जा सका।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धर्म मानव को प्रेरणा देता है कि नेकी का धन उपार्जन कर जिससे तेरा जीवन निर्वाह हो सके। व्यर्थ धन एकत्र करने से कोई लाभ नहीं।

आज मानव समाज में यह कहते सुना जाता है। "Eat drink and be merry" खाओ, पीओ और मौज करो। आज के समाज में वास्तव में यही दृष्टि गोचर होता है। आज कुछ ही लोग सत्य वद्, को धर्म मानते हैं। लोक दिखावे के लिए सभी मन्दिर जाते हैं। सत्संग में जाते हैं। वास्तव में धर्म का पालन विरले ही जन करते हैं। यदि वास्तविक रूप में आज धर्म का अस्तित्व होता तो शायद देश में इतनी अराजकता नहीं होती।

आज वैषम्य की वेला में चारों ओर असन्तोष दृष्टि गोचर होता है। मानव जीवन खोखला हो गया है। इसमें दोष किसका है। धर्म का या मानव समाज का। हम अपने समाज की ओर दृष्टिपात करते हैं तो हमें ज्ञात होता है कि आज धर्म का झंडा लेकर सभी घूम रहे हैं पर धर्म को धारण करना बहुत कम लोग जानते हैं। जो वास्तविक दृष्टि में समाज के लिए उपयुक्त नहीं हानिकर है।

त्याग

त्याग तो आपको सर्वोत्तम स्थिति में रखता है ; आपको उत्कर्ष की स्थिति में पहुंचा देता है।

अलविदा

ये आंसू क्यों ?
क्या इसलिए कि तुम इनसे अलग हो रहे हो या
इसलिए कि ये तुम्हें याद कर दुःखी होते रहेगें।
अरे भोले ! यह भूल है क्योंकि इन सबने
तुम्हारे जैसे कइयों को छोड़ा है
भुलाया है कइयों को
और आज भी ये दुःखी नहीं हैं
भाव दिखा रहे हैं।
क्या तुम इनके साथ रहते-२ यह भी नहीं समझ पाये कि
इनका रोना, हंसना केवल दिखाने के लिए होता है दूसरों को
तुम्हें न मतलब तुमसे है और न ही तुम्हारे गुणों से
जो तुममें थे, जिन्हें ये गा रहे हैं।
तुम जाओ, निश्चिन्त होकर हंसते हुए,
अच्छा अलविदा,
खुश रहो अपने नये जीवन में।

—निर्द्वंद्व

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कौन थे स्वामी विवेकानन्द ?

स्वामी ब्रह्मानन्द
M A., L.L.B.,
Advocati, ऋषिकेश

दिनांक १२ जनवरी सन् १८६३ को लोक-प्रसिद्ध श्री स्वामी विवेकानन्द का दत्त परिवार में जन्म हुआ था, तथा क्रमशः विभिन्न किन्तु प्रमुख और उत्थानात्मक कार्य करने के पश्चात् उनचालीस वर्ष की आयु में सम्भवतः दिनाँक ४ जनवरी सन् १९०२ में ब्रह्मलीन हो गये। अपने सम्पन्न एवं शिक्षित परिवार में उनको किसी प्रकार का कष्ट न था, तीनों भाई योग्य थे और विवाह किसी ने नहीं किया। उनका शरीर नहीं किन्तु यश तथा नाम प्रत्येक उद्बुध मानव की जिह्वा पर है। नाम रूप मिथ्या होने पर भी सापेक्षता में बहुत प्रेरणाप्रद और प्रभाव शाली है। अस्ति भाति प्रियम् निर्विशेष हैं जिनका परिचय केवल उद्बुध-जनों को ही है जबकि नाम रूप का परिचय सबको है, अपने अतीत का यशोगान श्रवण करते हैं। अवसन्न भी प्रसन्न हो जाता है। वर्तमान के अतिरिक्त अतीतानागत घटना का नाम रूप किसी न किसी प्रकार से स्मारक तथा प्रेरक है। अपने मित्र काका हरिॐ के मुख से स्वामी विवेकानन्द का पुण्य नाम सुनते ही मेरे हृदय तथा मस्तिष्क में अनन्त भाव उठने लगे। उनके कर्मयोग ने मुझे क्या का क्या कर दिया। अनेक बार लिखने का प्रयास किया किन्तु प्रकाशन कभी नहीं कर सका, लिखित सामग्री अस्तव्यस्तावस्था में प्रच्छन्न है। सम्प्रति नूतन विधि से लिख रहा हूं निर्बद्धता से।

श्री विश्वनाथदत्त अपने समय के लब्ध प्रतिष्ठित अभिभाषक थे जो कायस्थ थे और जिनके पूर्वज शिमला से कलकत्ता चले गये थे तथा बंग-वासी हो गये, कभी धन संग्रह की चिन्ता नहीं की उनका जीवन पाश्चत्य परिसर का पक्षपाती था, परिवार पर उसका प्रभाव बना रहा। बालकों को अध्ययन का निर्बाध वातावरण था। पिता के निधन पर परिवार आवश्यकता ग्रस्त हो गया और ऋण भी सम्भवतः देय था, किन्तु सर्व प्रकार से सम्पन्नता बनी रही, उद्यम के प्रभाव से विपन्नता नहीं आती है।

कथंचित छात्रावस्था में अपने मित्रों के साथ यदा कदा नरेन्द्र दक्षिणेश्वर मन्दिर में परमहंस रामकृष्ण देव के समीप पहुंचता किन्तु किसी लक्ष्य से नहीं, प्रयोजन कोई न था। हाँ, श्री रामकृष्ण देव को एक सुयोग्य युवक मिल गया और तब से अधिकाधिक रुचि रखने लगे परन्तु युवक ने उपेक्षा भाव से देखा। जब कभी वह नहीं आता तो परम-हंस देव स्वयमेव सब कुछ छोड़कर उससे मिलने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पहुंच जाते। युवक ने बहुविध परीक्षण किया। जिससे रामकृष्णदेव को प्रसन्नतर किया। 'पानी पीजिये छान के गुरु कीजिये जान के' की लोकोक्ति प्रसिद्ध है। किसी दिन अपने स्पर्शमात्र से नरेन्द्र नाथ दत्त, जो युवक के पूर्वाश्रम का नाम था, चक्रवत् भ्रमण करने लगा और क्षणान्तर में समाधिस्थ हो गया। यह सब योग का प्रभाव था।

इस घटना ने नरेन्द्र को पूर्णतया विश्वास-भिमुख कर दिया scepticism हो गया और योग पर परमास्था हो गयी, पश्चात् राजयोग लिखा, यह पातञ्जलयोग सूत्रों पर स्वतन्त्र व्याख्या है, अनुवाद भी सुलभ है। विश्वास और संशय के मध्यवर्तिभाव को scepticism कहते हैं, it is ncitrer faith nor doubtt but between both. छात्रावस्था में पुष्कल अध्ययन करना नरेन्द्र की सहजा प्रवृत्ति थी, पश्चिमी शिक्षा प्रणाली पर्याप्त प्रसार हो चुका था। पाश्चात्य विचार धारा-बौद्धिक, मानसिक एवं व्यावहारिक सभ्यता के प्रभाव से प्राच्य दर्शन, संस्कृति, सदाचार का उप-हास करना सामान्य कथा थी; किन्तु, अब, उक्त चमत्कार के अनन्तर, कोई एक भी वाक्य भारती-यता के प्रतिकूल निकालता तो प्रतिकार तक कर देते थे। अल्मोड़ा से जाते समय गाड़ी में एक अंग्रेज ने जो मिलिट्री का अफसर था, स्वामी विवे-कानन्द के गैरिक वस्त्रों की ओर उक्षेपात्मक शब्द कहे तो तत्काल उसे उठाकर चली गाड़ी से बाहर फेंकने को सन्नद्ध हो गये, बीच बचावे ने रोक दिया। हमारे देश में ही हम पर आक्षेप करना कहाँ का न्याय!

सम्भवतः १५ अगस्त १८८६ में परमहंस रामकृष्णदेव का शरीरान्त हो गया जिसने नरेन्द्र को अपूर्णीय आघात पहुंचाया। आकाशवाणी से दिनांक ३० जनवरी सन् १९४८ को प्रधान मन्त्री पण्डित जवाहर लाल नेहरु का गान्धी जी की निधनता पर शोक सन्तप्त सञ्चार सुना है वे समझ सकते हैं कि गुरु के चले जाने से शिष्य की क्या अवस्था हो जाती है। गान्धी जी हत्या से जितना दुःख पण्डित नेहरू को हुआ उतना किसी को नहीं हुआ। एवमेव गुरु देव के समाधिस्थ होने से नरेन्द्र को असह्य दुःख हुआ। बुद्ध के चले जाने से आनन्द को जो दुःख हुआ वह दूसरों को नहीं हुआ। परमहंसदेव के अनेक शिष्य थे, भक्त थे, अनुयायी थे, अब सबका आश्रम मातेश्वरी शारदामणी मात्र रह गयी, सबको सान्त्वना देना, प्रेरणा देना, मार्ग प्रदर्शन करना और सदा प्रबुद्ध रखना उनका कार्य रह गया, सम्भवतः शरीरान्त १९२० के आस पास हुआ।

सद्धगुरू से सर्वविभूति प्राप्त होने पर भी नरेन्द्र के सम्मुख एक प्रकार से तिमिर छा गया। हनुमान के सदृश कि कर्तव्य विमूढ हो गये, क्या करें कहाँ जायें। नरेन्द्र ने अब गैरिक वसन धारण कर परि-व्राजक का जीवन अपना लिया तथा देश में सर्वत्र

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पर्यटन करने लगे। देश की सर्वविध स्थिति का अध्ययन किया। भारत की तात्कालिक समस्याओं का अध्ययन कर समाधान का प्रयास सोचने लगे, जिस किसी अभिज्ञ से चर्चा करते, विचार विमर्श के पश्चात् योजना करते। आस्तिक, नास्तिक, धार्मिक तथा आध्यात्मिक वार्ता होती, जादू टोना का बोल बाला तब बहुत था, अन्धविश्वास की बहुतायत थी।

अन्ततः शिकागो में सर्वधर्म सम्मेलन में भाग लेने की इच्छा की। खेतरी के महाराज ने नरेन्द्र से स्वामी विवेकानन्द नामकरण कर दिया। महात्मा का नाम संसारी के नाम से भिन्न होता है, नाम का प्रभाव बहुत होता है। रामनद के सहयोग से स्वामी विवेकानन्द अमेरिका चले गये किन्तु वहां संकटों का सामना करना पड़ा। दैवात् एक सभ्य एवं श्रद्धालु दम्पती के सहयोग से सर्वधर्म – सम्मेलन में सनातन धर्म के प्रतिनिधित्वेन प्रविष्ट हो गये। उक्त सम्मेलन में प्रायः सभी धर्मों के प्रतिनिधि उपस्थित थे किन्तु सनातन धर्म का कोई अन्य प्रतिनिधि नहीं था उसकी पूर्ति स्वामी विवेकानन्द ने कर दी। सम्भवतः सन् १८९३ में उनका भाषण सर्व ग्राह्य रहा और निरन्तर चलता रहा, सम्मेलन को बताया कि उससे पूर्व सब कूप मण्डूक थे किन्तु तब से वे सागर में तैरने लगें। सम्भवतः तीन वर्ष अमेरिका में रहे, अपने प्रवचन भाषण, संवाद श्रवण कराते रहे। उनकी प्रशंसा सुनकर बहुतों को डाह हुआ और यत्र तत्र मिथ्या प्रचार करने लगे। भारत में मिथ्या प्रचार ने प्रचण्ड रूप धारण किया।

ईसायी मिशनरियों ने भारत की निर्मलता को प्रायः सर्वत्र धूमिल distort कर रखा था, वे भारतीयों को सभ्य बनाने का दिवा–स्वप्न देख रहे थे, किन्तु chicago में उक्त भाषण सुने तो सबका अज्ञान तिरोहित हो गया। मिथ्या प्रचार ने भारत में स्वामी विवेकानन्द के प्रति आक्रोश प्रकट किया और दूसरी ओर उनके संकट को सुनकर दुष्टों ने प्रसन्नता का अनुभव किया now the divil is dying अब शैतान ग्रस्त है। अस्तु अमेरिका से इंगलैण्ड गये और और वहां भी अपने प्रवचन किये। दोनों देशों में अनेक भक्त और अनुयायी बन गये। सिस्टर निवेदिता कौन नहीं जानता उक्त महिला ने भारत में नारी–उत्थान के लिये महत्वपूर्ण कार्य किये। भारत आये उनका भव्य स्वागत हुआ किन्तु रामनद में वे छक कर रोये। अपने दुःख को विदेश में दबा के रखा। रामनद वासियों को साधुवाद और धन्यवाद दिया तदनन्तर भारत में सर्वत्र गये और सबको अपनी सफलता का समाचार सुनाया। रामकृष्ण मिशन की स्थापना और निबाध गति से प्रचार प्रसार विस्तार किया। उनके गुरू भ्राताओं ने पुष्कल साहाय्य किया। इसी समय स्वामी विवेकानन्द लाहोर पहुंचे, प्रोफेसर तीर्थराम एम० ए० के संयोजकत्व में स्वामी ने भाषण दिया, प्रथम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तो उन्हें सन्देह हुआ कि क्या वेदान्त पर भाषण समझ भी लेगे किन्तु प्रो० तीर्थराम (परवर्ती विश्वविख्यात स्वामी रामतीर्थ) के आग्रह पर स्वामी जी ने वेदान्त पर भाषण दिया जो लगभग तीन घन्टे में पूर्ण हुआ जिससे वक्ता श्रोता सन्तुष्ट हुए।

हुगली नदी के दक्षिण तीर कलकत्ता में स्वामी विवेकानन्द के प्रयास से जगत प्रसिद्ध बेलूड मठ का भव्य निर्माण हुआ जो स्थापत्य कला की दृष्टि से आकर्षक तथा आध्यात्मिकता से ओतप्रोत है। स्वामी विवेकानन्द का भी वहां मन्दिर है जहां उनकी समाधि रूप प्रतिमा विद्यमान है। स्वामी जी पुनः अमेरिका गये और समयन्तर में भारत चले आये। कार्याधिक्य से शरीर व्याधित हो गया किन्तु अपना लक्ष्य चलता रहा। मायावती में अद्वैताश्रम की स्थापना की, मुद्रणालय प्रारम्भ किया अन्य प्रकाशनों के साथ सारगर्भित प्रबुद्ध भारत 'Prabuddhu Bharata' नामक पत्रिका का नियत प्रकाशन किया। पाठकों को समय मिले तो 'Lectures from colombo to Almora' अवश्य देखें। यह सम्प्रति सभी भाषाओं में सुलभ है। रामकृष्ण मिशन का संसार में प्रचार है यत्र तत्र सेवाश्रम तथा आतुरालय खुले हैं। सेवा के लिये ब्रह्मचारी एवं यतिवृन्द हैं, संसारियों का सहयोग मात्र है। यह सब योग का प्रभाव है। स्वामी विवेकानन्द का नाम सर्वविदित, कतिपय महानभाव परमहंस रामकृष्ण देव को भी जानते हैं किन्तु योगिराज तोतापुरी का नाम विरलजन जानता है, ये ही परमहंस रामकृष्ण देव के गुरु और स्वामी विवेकानन्द के परमगुरु थे। उन सबके प्रभाव से आज हम समादरित हैं, किन्तु खेद का विषय है जिस भारत का त्यागपूर्ण प्रतिनिधित्व स्वामी विवेकानन्द तथा स्वामी रामतीर्थ ने सर्वत्र किया आज अनेक लोकेषणु तथा कथित हिप्पीनुमा योगी भारत से भोगेच्छा से दौड़ रहे हैं। जिस पर भारत सरकार का कोई प्रतिबन्ध नहीं। इन योग के व्यापारियों पर प्रतिबन्ध लगाना आवश्यक है अन्यथा ये भी भारत को पुनः Distort करेंगे। योग साधकों के लिये है हिप्पियों के लिये नहीं। स्वामी विवेकानन्द के प्रदर्शित पथ पर चलना ही उनका जयन्ती समारोह एवं नामकीर्तन है। इति।

जन्म दिनांक १२ जनवरी १८६२
निधन दिनांक ४ जुलाई १९०२

,'ऐसे थे स्वामी जी'' नामक काव्यमय श्रद्धाञ्जलि संग्रह के लिए, जिन बन्धुओं ने ब्रह्मलीन स्वामी श्री गोविन्द प्रकाश जी को अपनी श्रद्धाञ्जलि कविता में दी है उनकी रचनायें सादर आमन्त्रित हैं। इच्छुक कवि–बन्धु अपनी रचना 'स्पष्ट' अपने संक्षिप्य परिचय सहित वर्तमान पते और चित्र के साथ ३१ जनवरी १९७८ तक प्रेषित करें :—

शास्त्री बलदेव राज 'शान्त'
ग्रा० पो० मोहना
तह० बल्लभ गढ़
जि० गुडगाँवा (हरयाणा)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

★ अध्यात्म-योग ★

श्री दामोदर दास जी शास्त्री

आचार्यों ने सृष्टि और प्रलयका विषय विशेष रूप से कहा है। जो मनुष्य उस विषय को भली भांति समझता है उसे प्रीति और सुख प्राप्त होता है। पृथ्वी, वायु, आकाश, जल और तेज इन पांच महाभूतों से सब प्राणी उत्पन्न और नष्ट होते हैं। ये सब महाभूत समुद्र की तरङ्गों के समान बार-बार जिससे उत्पन्न होते हैं उसी में लीन हो जाते हैं। जैसे कछुआ अपने अङ्गों को बार-बार फैलाता और सिकोड़ता है वैसे ही सृष्टिकर्ता बार २ संसार की सृष्टि और प्रलय करता रहता है। परमात्मा ने प्राणियों के शरीर में पंचमहाभूतों को स्थापित कर दिया है, किन्तु देहाभिमानी जीव उनके वैषम्य को नहीं समझ सकता कि शरीर का कौन सा भाग पृथ्वी का अंश है और कौन सा जल आदि का। शब्द श्रोत्र और सम्पूर्ण छिद्र आकाश के गुण हैं। स्पर्श, चेष्टा और त्वचा, ये तीन वायु के; रूप नेत्र और परिपाक तेज के; रस, क्लेद और जिह्वा जल के तथा गन्ध, नासिका और शरीर पृथ्वी के गुण हैं। इस प्रकार ये पांच महाभूत और छठा मन जीवात्मा को सब विषयों का ज्ञान कराते हैं। इन्द्रियाँ विषय को ग्रहण करती हैं, मन उस विषय में सन्देह उत्पन्न करता है और बुद्धि उस विषय का ठीक-ठीक निर्णय करती है। जीवात्मा शरीर में साक्षी के समान रहकर सिर से पैर तक देखता रहता है वह शरीर के सब अङ्गों में व्याप्त रहता है। सत्त्व, रज और तम ये तीन गुण इन्द्रियों का आश्रय करके शरीर में रहते हैं। इसलिए मनुष्यों को इन्द्रियों की परीक्षा भली भांति करते रहना चाहिये। बुद्धि के प्रभाव से उत्पत्ति और प्रलय का स्थान मालूम हो जाने पर मनुष्यों को शान्ति मिलती है। तम आदि तीनों गुण बुद्धि को वश में रखते हैं, बुद्धि पाँचों इन्द्रियों को और मन को विषयों में आसक्त रखती है, अतएव बुद्धि के अभाव में तीनों गुण और इन्द्रिय आदि कोई भी काम नहीं कर सकते। स्थावर-जङ्गम सभी प्राणी बुद्धि सम्पन्न होने से ही उत्पन्न और बुद्धि हीन होने से नष्ट हो जाते हैं। इसी से प्राणियों को बुद्धिमय कहा है। बुद्धि के प्रभाव से ही आँखों से देखा जाता, कानों से सुना जाता, नाक से सूँघा जाता, जिह्वा से स्वाद और त्वचा से स्पर्श का ज्ञान होता है तथा मन से सोच-विचार किया जाता है। आँख कान आदि इन्द्रियाँ बुद्धि को विषयों का ज्ञान कराने के लिए केवल द्वार-स्वरूप हैं। जीवात्मा इन इन्द्रियों को अपने-अपने काम में लगाता है। बुद्धि प्राणियों को देह में आश्रय करके कभी प्रसन्नता और कभी सन्ताप उत्पन्न करती है। जैसे बड़ी तरङ्गों वाला समुद्र अपनी सीमा से बाहर नहीं जाता वैसे ही बुद्धि सुख-दुःख और मोह इन तीनों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भावों को नहीं लांघ सकती। बुद्धि कभी-कभी सुख-दुःख आदि भावों का त्याग तो कर देती है, किन्तु उस समय उसे मन में ठहर जाना पड़ता है और रजोगुण के प्रभाव से फिर उन्हीं सुख-दुःख आदि भावों में आना पड़ता है। बुद्धि रजोगुण से युक्त होकर इन्द्रियों का ज्ञान, सत्त्वगुण से युक्त होने पर यथार्थ ज्ञान और तमोगुण से युक्त होने पर मोह आदि उत्पन्न करती है। शम, दम, काम, क्रोध, भय और विषाद आदि सब इन्हीं तीनों गुणों में विद्यमान रहते हैं।

बुद्धिमान मनुष्य को सब इन्द्रियाँ अपने आधीन रखनी चाहिये। सत्त्व, रज और तम, ये तीनों गुण हमेशा प्राणियों का आश्रय रहते हैं। सभी प्राणियों में सात्त्विक, राजसी और तामसी, यह ३ प्रकार की बुद्धि देखी जाती है। सत्त्वगुण के प्रभाव से सुख और रजोगुण के प्रभाव से दुःख उत्पन्न होता है। तमोगुण के प्रभाव से सुख और दुःख तो नहीं होता; किन्तु उससे मोह उत्पन्न होता है वह मनुष्य के शरीर और मन में जो प्रीतियुक्त भाव उत्पन्न होता है वह सात्विक-भाव जो अप्रीति और दुःख युक्त भाव पैदा होता है वह राजस-भाव और मोह युक्त भाव उत्पन्न होकर मूढ़ बना देता है वह तामस भाव कहलाता है। राजस-भाव उत्पन्न होने पर उसे दूर करने का उद्योग करना चाहिये। उससे डरकर दुखी और चिन्तित न हो। सत्त्वगुण से हर्ष, प्रीति, आनन्द और शान्त-भाव उत्पन्न होता है। रजोगुण से असन्तोष, सन्ताप, शोक, लोभ और असहनशीलता तथा तमोगुण से अपमान, मोह, प्रमाद, स्वप्न और आलस्य पैदा होता है। जिसका मन दुर्लभ वस्तुओं की प्राप्ति और विविध विषयों के विचार में लगा रहता है तथा जो दीन-भाव और नियमित वृत्ति से रहता है वह दोनों लोकों में सुख पाता है।

बुद्धि और आत्मा का भेद--बुद्धि से अहङ्कार आदि गुणों की उत्पत्ति होती है, किन्तु आत्मा इन बातों से अलग रहता है, जैसे गूलर के और उसके भीतर रहने वाले पतङ्ग तथा पानी से अलग न रहने वाली मछली और पानी, ये भिन्न-भिन्न पदार्थ हैं वैसे ही बुद्धि और आत्मा सदा एक साथ रहने पर भी स्वभावतः अलग-अलग है। अहङ्कार आदि गुण आत्मा को नहीं जानते किन्तु आत्मा इन गुणों को जानता रहता है। आत्मा अहङ्कार आदि गुणों का द्रष्टा होकर उन्हें अपने में उत्पन्न हुआ मानता है। जसे घड़े में रखा हुआ दीपक, घड़े के छेदों से, अपना तेज प्रकाशित करके वस्तुओं का ज्ञान कराता है वैसे ही परमात्मा-चेष्टा शून्य आत्मज्ञान-रहित-बुद्धि और इन्द्रियों के द्वारा समस्त अर्थ प्रकाशित करता है। बुद्धि गुणों को उत्पन्न करती है और आत्मा उनको देखता है। आत्मा और बुद्धि का यह सम्बन्ध अनादि है। बुद्धि और आत्मा का और कोई आश्रय नहीं है। बुद्धि मन को प्रकाशित

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करती है किन्तु अहङ्कार आदि गुणों का प्रकाश नहीं कर सकती है। आत्मा बुद्धि के द्वारा स्वरूप सब इन्द्रियों को नियन्त्रित करता है तब घड़े के भीतर रखे हुए प्रज्वलित दीपक की शिखा के समान, स्वयं प्रकाशित होता है। मनुष्य संन्यास–धर्म का अवलम्बन करके आत्म–निष्ठ और ध्यान–निरत होकर ब्रह्म ज्ञान उत्पन्न करके निस्सन्देह उत्तम गति प्राप्त कर सकता है। जैसे हंस जल में रहते हुए भी जल से लिप्त नहीं होता वैसे ही विवेकी मनुष्य संसार में रहता हुआ भी सांसारिक कामों में लिप्त नहीं होता। जो मनुष्य संसार में लिप्त न होकर अपनी बुद्धि से शोक, हर्ष और मात्सर्य को त्यागकर ब्रह्मनिष्ठ और जीवन्मुक्त हो सकता है, वह जैसे मकड़ी जाला पैदा करती वैसे ही सब गुणों की उत्पत्ति कर सकता है। कोई तो कहते हैं कि जीवन मुक्त मनुष्य के सब गुण एकबारगी नष्ट नहीं हो जाते और किसी की सम्मति में ये सब एक साथ नष्ट हो जाते हैं। जो जीवन मुक्त मनुष्यों के सब गुणों का विनाश नहीं मानते वे कहते हैं कि वेद में इनके विनाश हो जाने का कोई प्रमाण नहीं है, केवल स्मृतियों में प्रमाण है। अतएव जीवनमुक्त मनुष्यों के गुणों का विनाश करना ठीक नहीं। विवेकी मनुष्य दोनों मतों को अच्छी तरह समझकर काम करे। बुद्धि को भ्रम में डालने वाले सन्देहों को दूर करके सुख से रहे। कभी शोक से व्याकुल न हो। मलिन हृदय वाला मनुष्य बुद्धि–रूपी नदी में गोता लगाने से शुद्ध हो जाता है। बुद्धि से बढ़कर पवित्र और कुछ नहीं है। नदियों का पार देख लेने से कुछ फल नहीं होता, नाव आदि द्वारा उसके पार जाने पर ही मनुष्य कृतकार्य हो सकता है। किन्तु बुद्धि–रूपी नदी को जान लेने से ही से ही सिद्धि हो जाती है। उसके पार जाने के लिए नाव आदि किसी आधार की आवश्यकता नहीं पड़ती। जिसे निर्विघ्नक आध्यात्मिक–ज्ञान उत्पन्न होता है वही श्रेष्ठ बुद्धि प्राप्त कर सकता है। जो मनुष्य प्राणियों की उत्पत्ति और उनके विनाश पर विशेष रूप से विचार करता रहता है वह अत्यन्त सुख प्राप्त करता रहता है। जो मनुष्य धर्म, अर्थ और काम को नश्वर समझकर उनका त्याग कर देता है वह ध्यानशील और तत्वदर्शी होकर आत्मा का दर्शन करता हुआ तृप्त रहता है। रूप रस आदि विषयों में आसक्त दुर्निवार इन्द्रियों को संयत किये बिना आत्मदर्शन होना असम्भव है। आत्मज्ञान से बढ़कर दूसरा ज्ञान नहीं है। मनस्वी मनुष्य आत्मा का ज्ञान प्राप्त करके अपने को कृतार्थ मानता है। अविवेकी मनुष्यों को जिससे भय बना रहता है उससे ज्ञानी मनुष्य को रत्ती भर भी डर नहीं रहता। मुक्ति सभी को एक सी है। जो सगुण है उनके गुणों की तुलना होती है, किन्तु जो निर्गुण है उनकी किसी प्रकार की तुलना नहीं की जा सकती। जो निष्काम होकर कर्म करता है उसके पूर्वकृत कर्मों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के सब दोषों का संशोधन हो जाता हैं और उनके पुराने या नये कर्म उसके लिए बन्धन का कारण नहीं होते। कर्म के द्वारा मनुष्यों को मोक्ष प्राप्त होना असम्भव है। विवेकी मनुष्य काम क्रोध आदि व्यसनों में आसक्त मनुष्य को धिक्कारते हैं। निन्दित कर्मो के करने वाले मनुष्य अपने जीवन में सबकी निन्दा के पात्र रहते और मरने पर पशु आदि नीच योनियों में जन्म पाते हैं। पापी लोग स्त्री पुत्र आदि के मरने पर दुखी होते हैं, किन्तु ज्ञानी मनुष्य स्त्री-पुत्र आदि का नाश होने पर भी शोक नहीं करते। इन विषयों पर शान्त चित्त से विचार करना चाहिये। ★★

उपशम को ही जो जाति धर्म कहती है,
शम, दम, विराग को श्रेष्ठ कर्म कहती है,
धृति को प्रहार, शान्ति को वर्ग कहती है,
अक्रोध, विनय को विजय मर्म कहती है,
अपमान कौन जिसको वह नहीं सहेगी !
सब को असीस सब का बन दास रहेगी।

— — — —

कुछ सोच रहा है समय राम में थम कर,
है ठहर गया सहसा इतिहास सहम कर।
सदियों में शिव का अचल ध्यान डोला है,
तोपों के भीतर से भविष्य बोला है।
चोटे पड़ती यदि रही, शिला टूटेगी,
भारत में कोई नई धार फूटेगी।

—दिनकर

आपको नमन

स्नेह–पाश बद्ध मन
ढूंढ़ता है आपको
निखिल भुवन ॥
छुप कहां गये हैं आप
निश्चिन्त होके
बाँधे मन ॥
आप जहाँ कहीं भी हों
नित कर रहे हैं
नव सृजन ॥
दृग रहे विलख
देखने को आपका
प्रिय वदन ॥
श्रवण चौंकते अधीर हो
सुनने को आपके
मृदुल वचन ॥
आप दूर हो छिपे कहीं
ये भ्रम मुझे
करा रहा भ्रमण ॥
पर बैठे उर में मौन हैं
मन्द मुस्कुरा रहे
शत वार है आपको नमन्।
आपको नमन्।

गोपाल "शास्त्री"
वाराणसी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

★ पुष्प की प्रार्थना ★

जल्दी करो प्रभु ! इसे तोड़ लो, विलम्ब न करो !
इतने में कहीं मैं धूल में न गिर पड़ूं, यही भय है !
इस फूल को तेरी माला में स्थान मिले न मिल, कौन जाने
फिर भी, अपने आघात-स्पर्श से ही इसे भाग्यवान बना !
तोड़-तोड़ अब विलम्ब न कर !
दिन पूरा हो जायेगा, अंधेरा छा जायेगा,
तेरी पूजा का मुहूर्त न टल जाय, यही भय है !
जो थोड़ा बहुत रंग इस फूल पर है, और जिस थोड़ी सी
सुवास-सुधा से इसका हृदय भरा है, जब तक तेरी सेवा
का मुहूर्त शेष है तब तक इसका उपयोग कर ले।
तोड़ ले, तोड़ ले, अब विलम्ब न कर !

रवीन्द्र नाथ टैगोर

विज्ञापन

ज्योतिष–मार्तण्ड छै रंगों के सुन्दर टाइटिल कवर में ७० पन्नों की एक मासिक पत्रिका है, जो १९६९ से नियमित रूप से प्रकाशित हो रही है। इस पत्रिका में ज्योतिष, अंक–शास्त्र, सामुद्रिक–शास्त्र, स्वर–शास्त्र आदि के अतिरिक्त तंत्र-मंत्र-यंत्र, पुनर्जन्म, प्रेतात्मा आदि कई गूढ़ विषयों पर सैद्धान्तिक ज्योतिषीय आधार लेकर भारत के विद्वानों के खोजपूर्ण गवेषणात्मक लेख सरल हिन्दी भाषा में प्रकाशित होते हैं। इसी कारण यह पत्रिका अलौकिक तत्वों और दुर्लभ साहित्य से भरपूर है। आशा है इस पत्रिका को पढ़कर आप अवश्य आनन्दित होंगे।

वार्षिक शुल्क २५ रु०/५० पैसे
एक अंक ३ रु०

पता— राज रानी देवला
सम्पादिका ज्योतिष मार्तण्ड
डी०–१९ गणेश मार्ग,
बापू नगर जयपुर, ३०२००४
राजस्थान

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निर्वाण दिवस सभा
श्रद्धाञ्जलियां---

इस वर्ष ब्रह्मलीन स्वामी हरिॐ जी महाराज की पुण्य तिथि रविवार ४-१२-१९७७ को हुई। अतः परमपूज्य श्रीपरमाध्यक्ष जी महाराज की अनुमति प्राप्त करके स्वामी रामतीर्थ मिशन, दिल्ली द्वारा रविवार दिनांक ११ दिसम्बर का विशेष सभा की गयी क्योंकि ४ दिसम्बर को राजपुर में इसका आयोजन किया गया था।

इस सभा में उपस्थिति बहुत अधिक थी और वे श्रद्धालु भी अपनी मूक श्रद्धाञ्जलि अर्पित करने के लिये उपस्थिति थे जो नियमित रूप से आ नहीं सकते। प्रातः ८ बजे से यह आयोजन प्रारम्भ होकर दिन के एक बजे तक चला। स्वर्गीय श्री सालिगराम मल्होत्रा जी के ज्येष्ठ सुपुत्र श्री कृष्ण लाल जी ने यजमान के रूप में 'हवन' में भाग लिया। तदनन्तर मिशन के मातृ-मण्डल ने प्रार्थना, गीता पाठ, राम-स्तोत्र द्वारा और हमारे परमपूज्य परमाध्यक्ष श्रीस्वामी अमर मुनि जी, महामण्डलेश्वर श्री स्वामी प्रकाशा नन्द जी सरस्वती और परमपूज्य युग-पुरुष श्री स्वामी परमानन्द जी महाराज ने अपने उपदेश में स्वामी राम के पटशिष्य स्वामी नारायण जी (जिनका शरीर ३ दिसम्बर को शान्त हुआ था) और ब्रह्मलीन श्री स्वामी हरिॐ जी के श्रीचरणों में श्रद्धाञ्जलि अर्पित की। सुयोग से इस सभा में अनेक ऐसे भाग्य-शाली रामप्रेमी उपस्थित थे जिन्होंने स्वामी हरिॐ जी महाराज के प्रेरणाप्रद नेतृत्व में दिल्ली मिशन की स्थापना में विशेष भूमिका निभायी और अपने निःस्वार्थ प्रेम तथा सहयोग से इस संस्था को समुन्नत किया। इनमें हमारी प्रधाना श्रीमती मेलादेवी मल्होत्रा जी, बहन निर्मला भण्डारी जी के साथ-साथ आदरणीया बहन गुलाब पण्डित, सर्वश्री शेर सिंह जी, अमरनाथ अरोड़ा जी, जगन्नाथ भसीन जी, देवराज जी, के० एल० सहगल जी, ईश्वर दास शर्मा जी, एस० के० चावला जी, सर्व श्री गोविन्द लाल जी बांगा, श्री कृष्ण लाल जी भण्डारी आदि के नाम उल्लेखनीय हैं। निजा अनुभव के आधार पर इन सबने दोनों महान सन्तों की उन पर जो गहरी छाप पड़ी थी उसका स्नेह तथा सम्मान से वर्णन किया। उपस्थित समुदाय ने निष्ठा पूर्वक इस पाँच घण्टे के कार्यक्रम में भाग लिया। आरती के बाद भंडारा हुआ, जिसमें पधारे हुए महात्मा, विद्वान, विप्र, विद्यार्थियों आदि ने भाग लिया। सभी उपस्थित श्रोताओं ने भोजन किया और यह कार्यवाही श्रद्धा-पूर्वक सम्पन्न हुई।

यह दिन अपने महत्व एवं माहात्म्यों के लिए चिरस्मरणीय रहेगा।

भारत बन्धु शर्मा
प्रधान सचिव
दिल्ली

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Passions Are Blessings Not Disgrace

G P Mohanty

Passions "Kama" 'Krodha' 'Moha' have been blamed by every rigitious individual and "Yogis" from time to time. These are factors which carry away a person from the right path and lead him to a sinner's world. But one must realise as soon as a man is born his Sensorium Craves and find comfort in fulfillment of these above desires There fore these being inherent with the human character these have to be directed toward the achievement of God a Salvation of the soul instead of condemning the person who possies these qualities in excess. The follo-wing examples illustrates the a fore said act-ion.

Gopis of Brindavan

Every one of us are conversant with story how Gopis of Brindavan had lost all their sense in the love of Sri Krishna The love may be for sex, may be for pure affection may be for any aspect of love for mother, sister & for lover & husband. Yet the same was of extreme degree as had been transfe-red love of God. The world might have misunderstood the whole situation but ultimate analysis was that sixteen thousand Gopis had enjoyed the eternal bliss and are considered to be on higher position than the Rishis and Yogis.

Bilwamangal

A great 'Sanyasi' was infatuated earlier with love affection and sex of a prostitute. In a dark stormy night his desire for meeting the lady ofillrepute made him to cross the flooded river sitting over a dead body. After crossing the river he had to climb the wall and reach the room of the lady. He saw a thick rope was lying on the wall. Little he realised it was was a snake. Blind with the passion of having the companion of the lady he climbed the wall with the help of the deady snake and jumped over. He ran and as he embraeed the lady she could get the smell of the dead body over which Bilwamangal crossed the river, and she later found out that Bilwamangal had jumped over the wall with the help of a snake thinking it was a rope. She was stuned with the action just for the passionate felling for her, suddenly the lady utt-eres "If you can devote one thousandth of this

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

emotion towards God you will achieve salvation".

Bilwamangal was taken a back in surprise. His head reeled and the world spoken by his lady love though of illrepute went or ringing in his ears. A ray of wisdom dawned on him and by turning this passion towards the love of God he became a great Sanyasi.

In Bhagavata a similar story has been described There was a prostitude named 'Pingala' She was very much fond of money. Her beauty was always a great attraction for any body. But she used to make her available for only very rich people.

Once she met a wealthy person. She begged him to come her place in the night, The rich man promised, but he forgot to come She went on waiting for him. She was restless every moment she was anxiously looking towards his coming. Even in slightest riffle of leaves she felt that the richman is coming. In that anxiety the whole night passed but the rich man never came By dawn she realised what a mistake she has done. Her attachment for money she had forgotten every thing. She was botherd about wealthy people & worldly gains. But inside her heart there was a real man for her. She She had ignored the man inside her heart the great soul all these days. With this realisation she felt, she should dename the worldly treasure and follow the path of God and ultimatly achieved salvation.

There are similar instances in our epics & religious books The passions can be directed to God, the Greater and the almights. Through these passion for God one can achieve salvation. It is upto the individuals to acquire capability to transform these to achieve heavenly bless The passions are blessing not disgrace.

IN MEMORIAM

From the mortal World he has gone,
But in our hearts he lives on.

In the ever lasting memory of his holiness Swami Govind Prakash jee, who was snatched away by crue fate on 19tn Sept. 1977 giving us an un bearable shock for life.

R.N. Chadha
G.P. Mohanty

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

★ आश्रम समाचार ★

दिनांक ४ दिसम्बर के दिन, जिसमें स्वामीराम के प्रमुख शिष्य नारायण स्वामी को जिनके कठोर परिश्रम से आज हमें राम-साहित्य उपलब्ध है, श्रद्धाञ्जलि समर्पित की गई, क्योंकि ३ दिस० को इस राम भक्त का निर्वाण हुआ था। श्रद्धामय वातावरण में परश्रद्धेय ब्रह्मलीन स्वामी हरिॐ जी महाराज के साथ ही ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी गोविन्द प्रकाश जी महाराज को भी श्रद्धाञ्जलि समर्पित की गई। ऐसा होना आश्चर्य-जनक नहीं अपितु स्वाभाविक था, जिसकी ओर स्वामी हंस प्रकाश जी महाराज ने दोनों के तादात्म्य की पुष्टि करते हुए संकेत किया।

श्रद्धाञ्जलि दिवस की सांय ही श्रद्धेय स्वामी हंस प्रकाश जी महाराज ने बम्बई की ओर प्रचारार्थ प्रस्थान किया। परमाध्यक्ष जी ने एक दिन और आश्रम में ही निवास करने के बाद इलाहाबाद की ओर प्रस्थान किया तथा दिल्ली होते हुए आपका पुनरागमन हुआ ११ दिसम्बर की रात्रि को। इसी दिन आपने दून-वासी रामप्रेमी के पुत्री के-विवाह पर वर-वधू को शुभाशीष दी तथा उनके भावी ग्रहस्थ जीवन के साफल्य की राम चरणों में प्रार्थना तथा शुभ कामना की।

विदित कार्यक्रमानुसार ३१ जनवरी तक परमाध्यक्ष स्वामी अमर मुनि जी महाराज, साधुबेला आश्रम बम्बई में अपने प्रवचनों द्वारा कार्यक्रम दे रहे हैं। और तदनन्तर बम्बई में ही हरि कुञ्ज में आपका कार्य क्रम मास जनवरी पर्यन्त चलेगा। आशा है कि महामन्त्री स्वामी हंस प्रकाश जी महाराज के साथ ही आपका आश्रम आगमन 'फरवरी' के प्रथम या द्वितीय सप्ताह तक होगा।

मसूरी, चकरोता इत्यादि पर्वतीय क्षेत्रों में बर्फ पड़ जाने के कारण आश्रम का वातावरण आज कल शीत प्रधान है। कोहरे के कारण मार्ग सही ढंग से नहीं दीखता। दिनांक २६ को भगवान सूर्य के दर्शन लगभग ५ दिनों बाद हुए। आखिर उन्होंने अपने तेज के कारण काले और एक जुट हुए बादलों को छिन्न-भिन्न कर ही दिया। चारों तरफ वे शिखर जो दिखायी नहीं दे रहें थे अब सूर्य रश्मियों का सहारा ले हिम-मुकुटों से युक्त हो विजय का सन्देश दे रहे हैं तथा दिखा रहे हैं बादलों के साथ हुई अपनी मैत्री की निशानी, शायद यह बिना जाने के ये ही मुकुट उनके अश्रु बन कर कुछ दिवस बाद बह चलेंगे। सत्य रूपी सूर्य के समक्ष सब की यही स्थिति होती है। प्रकृति हरित परिधाना हो मानो किसी के स्वागवतार्थ खड़ी है। सब मिला जुला कर माँ प्रकृति की गोद में पुत्ररूप 'मिशन पूर्ण आनन्दित है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१-मासिक पत्रिका 'राम सन्देश' न मिलने पर अपने समीपस्थ डाकखाने (पत्रालय) से पता करने के पश्चात हमें सूचित करें। क्योंकि कभी किसी कारणवश "राम सन्देश" १५ ता० तक निकलता है। इसलिए शिकायत पत्र अपनी २ ग्राहक संख्या सहित दिनांक २० के बाद प्रेषित करने करें।

२-आप आश्रम में किसी भी प्रकार का धन भेजते समय यह लिखना न भूलें कि वह धन किस निमित्त भेजा जा रहा है तथा चैक स्वामी रामतीर्थ मिशन के नाम पर ही भेजें।

३-यह प्रार्थना है कि जो पाठक इस पत्रिका के आजीवन सदस्य बनना चाहते हैं वे अपना सदस्यता शुल्क सम्पादक के नाम प्रेषित करें। सदस्यों को आजीवन पुनः बिना किसी शुल्क के यह पत्रिका प्रेषित की जायेगी।

४—स्वामी रामतीर्थ मिशन, राजपुर देहरादून के आजीवन सदस्यों को कार्यकारिणी की १९७७ गोष्ठी के निर्णयानुसार यह सूचित किया जाता है कि सदस्यता शुल्क वार्षिक १२ रु० के स्थान पर २० रु० कर दिया गया है तथा उन सदस्यों को मासिक पत्रिका का प्रेषण मास जनवरी १९७८ से निःशुल्क किया जायेगा। अतः सदस्य अपना वार्षिक शुल्क भेजते समय १२ रु० के स्थान पर २० रु० प्रेषित करने का कष्ट करें।

४—'राम सन्देश' के विदेशी ग्राहक अपना वार्षिक शल्क १५ रू० भेजें। क्योंकि परमाध्यक्ष जी की आज्ञानुसार १२ रु० के स्थान पर ३ रु० वृद्धि का निर्णय लिया गया है।

बुक पोस्ट

ग्राहक संख्या ...483...

श्री/श्रीमती ...गुरुकुल पुस्तकालय...

स्थान ...गुरुकुल कांगड़ी...

डाकखाना ...विश्वविद्यालय...

जिला ...हरिद्वार...

मासिक पत्र—

"राम – सन्देश"

स्वामी रामतीर्थ मिशन

राजपुर, देहरादून (यू. पी.)

Pin-248009 भारत

स्वामी रामतीर्थ मिशन, राजपुर देहरादून (उ०प्र०) के लिए प्रकाशक स्वामी अमर मुनि द्वारा न्यू आईडियल प्रिंटिंग हाऊस, ४ बी, नेशविला रोड देहरादून में, मुद्रित।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राम-सन्देश

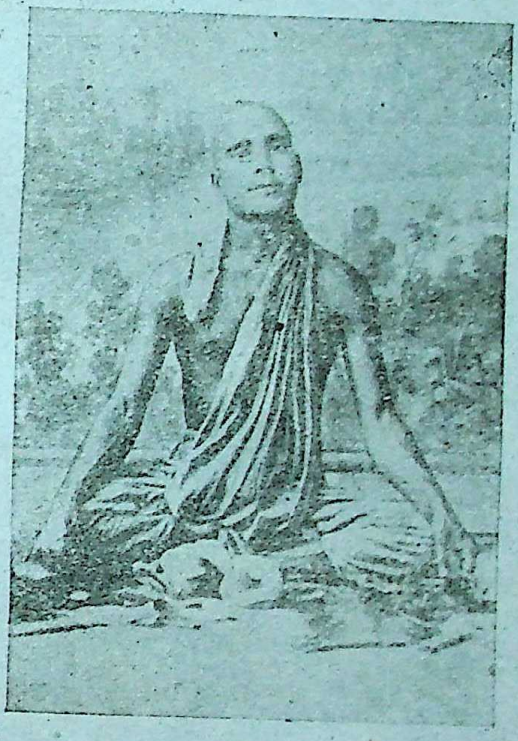

—संस्थापक—
ब्रह्मलीन स्वामी हरिॐ जी महाराज
—संवर्धक—
ब्रह्मलीन स्वामी गोविन्द प्रकाश जी महाराज
—व्यवस्थापक—
स्वामी अमर मुनि जी महाराज

मई
१९७८

आजीवन सदस्यता शुल्क :
भारत में—१००/-,
विदेश में—५००/-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संकेतिका

प्रार्थना	—	महादेवी वर्मा	—१
व्यावहारिक वेदान्त	—	स्वामी राम	—२
नये भवन का निर्माण	—	स्वामी सत्यदेव	—४
वर्तमान शिक्षा पद्धति, दूषित क्यों ?	—	प्रदीप कुमार अग्रवाल	—५
क्या संन्यासियों के हृदय नहीं होता ?	—	भारत बन्धु शर्मा	—८
मोह का फल	—	पं० राम कृष्ण शर्मा	—११
गीता भवन अमृतसर में प्रवचन स्वामी हरिॐ जी महाराज का	—		—१३
प्रबन्धक समिति की कार्यवाही	—	उप मन्त्री	—१५
समूल परिवर्तन	—	अमृत पथ से "साभार"	—१८
दुक्खां विच पा गया	—	स्वामी किशन दास	—१९
वेदान्त हमें क्या सिखाता है	—		—१९
आश्रम समाचार	—	सहसम्पादक	—२०
INSTALLATION OF THE LORD SIVA		— By Swami Brahmnnanda	—21
WHAT IS JOY ?		—from Taittireey Upnishad	—23

मुख्य सम्पादक—
स्वामी हंस प्रकाश वेदान्ताचार्य, एम०ए० (दर्शन)

सह सम्पादक—
"निर्द्वन्द्व"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'राष्ट्र के हित के लिए प्रयत्न करना ही विश्व की शक्तियों अर्थात् देवताओं की आराधना है'

—स्वामी राम

वेदान्त, अध्यात्म, संस्कृति, धर्म एवं भक्ति का सजग सन्देशवाहक तथा
स्वामी राम के आदर्शों का उपस्थापक एकमात्र लोकप्रिय मासिक—

राम-सन्देश

वेदोपनिषदां तत्त्वम् सत्यं नित्यं सनातनम्।
तत्सर्वं "रामसन्देशे" पत्रेऽस्मिन्नवलोक्यताम्॥

वर्ष २७
अंक ५

वार्षिक शुल्क : १० रु०,
एक प्रति-८५ पै०,

प्रार्थना

क्या पूजा क्या अर्चन रे
उस असीम का सुन्दर मन्दिर मेरा लघुतम जीवन रे।
मेरी श्वांसे करती रहती नित प्रिय का अभिनन्दन रे॥
पद रज को धोने उमड़े आते लोचन में जल कण रे।
अक्षत पुलकित रोम मधुर मेरी पीड़ा का चन्दन रे॥
स्नेह भरा जलता वे झिरनीमल मेरा दीपक मन रे।
मेरे दृग के तारक में नव उत्पन्न उन्मीलन रे।
धूप बने उड़ते रहते हैं प्रति पल मेरे स्पन्दन रे।
प्रिय प्रिय जपते अधर ताल देता पलकों का नर्तन रे।

— महादेवी वर्मा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गतांक से आगे:—

जनवरी १९०२ में भारत-धर्म-महामण्डल भवन मथुरा में स्वामी राम का व्याख्यान, श्रीनारायण स्वामी द्वारा लिखित नोटों से—

व्यावहारिक वेदान्त

कर्म

उत्तर— वेदान्त भी इस बात का अनुमोदन करता है कि जो विचार अन्त में अर्थात मरने के समय होते हैं, उन्हीं के अनुसार दुबारा जन्म होता है। मगर इसके साथ वेदांत इस बात पर भी बड़ा जोर देता है कि मरते समय विचार और कामनाएं भी वे ही मन में आती हैं, जो जीवन में मनुष्य के चित्त पर सवार रहती थी। क्योंकि परीक्षा के कमरे में प्रश्नों के उत्तर उसी बालक के मन से निकलते हैं जो वर्ष भर पढ़ता रहता है; और जो सारी आयु में पढ़ा ही नहीं, वह कभी सम्भव ही नहीं है कि परीक्षा में जाकर पर्चा लिख आवे या परीक्षा उत्तीर्ण कर सके। वास्तव में वही व्यक्ति परीक्षा पास कर सकता है, जो परीक्षा के समय से पहले सारी आयु पढ़ता रहा हो। इसी तरह जो व्यक्ति सारी आयु भर बुरे विचार या बुरी कामनायें करता रहता है, तो सम्भव नहीं है कि मरने के समय अच्छी कामनायें उसके मन में उत्पन्न हों; और न यह सम्भव हो सकता है कि जो व्यक्ति सारी आयु अच्छी कामनायें या अच्छे काम करता रहा हो, मरने के समय बुरे विचार या बुरी कामनायें मन में प्रवेश करें. बल्कि जो विचार सारी आयु भर से पहले उठते रहे हैं और अभी तक पूरे नहीं हुए, वे ही विचार मृत्यु के समय उसके मन में आयेंगे या उन्हीं का समवाय शरीर धारण करके मृत्यु के समय उसके सामने आयेगा, और उनके अनुसार वह मरने के पश्चात दुबारा जन्म लेगा।

अतः यह सिद्ध हुआ कि एक जन्म की अवशिष्ट कामनाओं का फल प्राप्त करना ही दूसरे जन्म की आवश्यकता उत्पन्न करना है। वह व्यक्ति जिसके मन में मरने से पहले ही (जीवन काल में) विचारों का उठना बन्द हो गया है, उसके मन में मरने के समय भी कोई अच्छा या बुरा विचार उत्पन्न नहीं हो सकता। इसलिये उसका कोई और जन्म भी नहीं होता। मगर ऐसी अवस्था प्रायः ज्ञानी या जीवन्मुक्त पुरुषों की होती है। अतः जब यह सिद्ध हुआ कि जो कामना (सकल्प) या कर्म मनुष्य कर चुका है, उसका फल अवश्यमेव उसको विवश होकर भोगना पड़ता है, और पहले कर्मों या संकल्पों का ही फल दूसरे जन्म में भाग्य कह-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लाता है, तो इससे स्पष्ट प्रकट है कि भाग्य के कारण मनुष्य परतन्त्र या बद्ध है और दूसरा अंश मनुष्य में स्वतन्त्रता का, अर्थात कर्म करने का है। जिस कर्म या कामना के करने से उसका आगामी भाग्य बनता है और जिसके करने से वह बिल्कुल स्वतन्त्र है, चाहे उसको करे, चाहे न करे, और इसी कारण तत्ववेत्ताओं ने यह भी कहा है कि मनुष्य अपना भाग्य अपने हाथों बनाता है; क्योंकि यद्यपि मकड़ी में जाला तानने की शक्ति है, मगर जब तक उसने अपने मुंह से तार बाहर नहीं निकाले हैं, वह बिल्कुल स्वतन्त्र है, मगर जब वह निकाल दे तो फिर उसमें बद्ध है। इसी तरह कर्म करने से पहले मनुष्य स्वतन्त्र है, और जब कर्म कर दिया तो उसके फल अर्थात भाग्य को भोगने के लिये परतन्त्र या बद्ध है। यह तो कुछ थोड़ा-सा एक व्यक्ति रूप से या व्यष्टि भाव से स्पष्ट किया है, मगर जब समुच्चय रूप से या समष्टि भाव से देखा जाता है, तो और ही बात दिखाई देती है। हरबर्ट स्पेंसर साहब कहते हैं कि देश की अवस्था भी मनुष्य स्वयं अपने अनुकूल उत्पन्न कर लिया करता है।

यह बात ठीक है, क्योंकि जब थोड़ा विचारपूर्वक इन सब बातों पर समुच्चय रूप से दृष्टि डाली जाये, तो मालूम होता हैं कि वह नेपोलियन बोनापार्ट जो व्यष्टि रूप से स्वतन्त्रतापूर्वक काम करता दिखाई देता था, उस व्यक्ति को ठीक ऐसे समय पर ऐसे जमाने में, आने की निरन्तर आवश्यकता थी। इसलिये जब समष्टि रूप से देखा जाता है तो मालूम होता है कि कोई ऐसी शक्ति प्रत्येक में छिपी हुई (निहित) है। उसी की बदौलत मनुष्यों का जन्म सदैव वहाँ होता है, जहाँ उनकी पहले आवश्यकता होती है, और उसी शक्ति की बदौलत सारे संसार में पुरुषों और स्त्रियों की संख्या एकसी रहती है। जिस प्रकार एक वस्तु में (Positive) और अस्थिर (negative) दोनों प्रकार की बिजली एकत्र होती है, उसी तरह वह नियम को इधर इच्छावाला उत्पन्न करता है, उधर उनकी इच्छाओं को पूरा करने वाला भी उत्पन्न करता है, इस तरह से दोनों पलड़े बराबर तुले रहते हैं। इस नियम से सिद्ध होता है कि नेपोलियन बोनापार्ट, जिसको आप स्वतन्त्र कह रहे हैं इसी नियम की बदौलत जन्म लेकर आया है, अर्थात जिसको स्वतन्त्र कहा जाता है वह भी एक शक्ति के आधीन होकर जन्म लेता है। इस प्रकार व्यष्टि रूप से तो यद्यपि वह स्वतन्त्र दिखाई देता है मगर समष्टि रूप से यदि देखा जाय, तो वह भी वैसा ही परतन्त्र और बद्ध है जैसा कि व्यष्टि रूप से एक मनुष्य भाग्य की दृष्टि से परतन्त्र या बद्ध कहलाता दिखाई देता है।

क्रमशः

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नये भवन का निर्माण

—स्वामी सत्यदेव

वैसे बीसवीं शताब्दी के घोर वैज्ञानिक युग में धर्म या ईश्वर की चर्चा करना कुछ सिरफिरे लोगों का ही काम है।

विज्ञान का आकर्षण इसी में है कि यह हर पुरानी वस्तु को छीन कर हमें नई वस्तु प्रदान करे।

हमने सभी पुराने मकान तोड़ दिये, सारे पुराने शहर गिरा दिये, पुरानी प्रथाओं से हम मुक्त हो गए। किन्तु प्रथा मात्र से हम कभी भी मुक्त नहीं हो पायेंगे, प्रथा का मतलब वह जीने की कला है जिसको ईश्वरवादियों ने धर्म कहा है।

जीवन के अगर हर आयाम को हम पकड़ें तो धर्म भी अछूता नहीं रह सकता।

जिस प्रकार पुरानी प्रथा को तोड़कर नई प्रथा में प्रवेश करना है, उसी प्रकार पुराने धर्म को गिराकर नये धर्म का सृजन करना है!

धर्म सृष्टि की उस सृजन प्रक्रिया अथवा पालन-पद्धति का नाम है जिससे यह सृष्टि चल रही है। इसलिये धर्म से जीवन है, जीवन से धर्म नहीं।

जिसको हम "कम्युनिज्म" कहते हैं वह भी ५० वर्ष बाद एक धर्म बन जायेगा और माओ, लेनिन तथा मार्क्स की पूजा होने लगेगी। क्योंकि धर्म से अलग मनुष्य की कोई सत्ता नहीं है।

विज्ञान की उन्नति ईश्वर के निकट—

विज्ञान जितनी उन्नति करेगा, मनुष्य उतना ही ईश्वर के करीब पहुंच जायेगा। विज्ञान ईश्वर का खण्डन करता है, इसका मतलब वह भी ईश्वर की सत्ता को स्वीकार करता है, तभी तो खण्डन कर रहा है। किन्तु यह एक ऐसी ही बीमारी है। विज्ञान जितना खण्डन करेगा, ईश्वर उतना साफ सुथरा मंजा हुआ होकर सामने आयेगा। क्योंकि विज्ञान के द्वारा किया हुआ प्रयास उस ईश्वर के आवरण को ही खण्डित करता है, ईश्वर को नहीं।

नये भवन का निर्माण—

विज्ञान ने धर्म के पुराने महल को गिरा दिया है, यह बात इतनी दुःखद नहीं है, मनुष्य जाति के लिए यह एक वरदान है। किन्तु विज्ञान यदि धर्म के नये भवन के निर्माण में सहयोग नहीं करता है, फिर यह वरदान न होकर एक अभिशाप ही है।

मैं उसी भवन के निर्माण में निकला हूं, जो कि आधुनिकतम होगा, सुन्दर होगा, दुखद होगा। सामान सब पुराने ही होंगे, ईंट पत्थर पुराने होंगे। सिर्फ ढंग नया होगा, जो सबको पसन्द आ जाएगा।

इस नये भवन के निर्माण में आप भी हमारी मदद करें यही आप सब से प्रार्थना है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वर्तमान शिक्षा पद्धति, दूषित क्यों ?

किसी देश की उन्नति, अवनति एवम् भविष्य वहां की दी जाने वाली शिक्षा पर काफी हद तक निर्भर है। भारत को आजाद हुए लगभग तीस वर्ष हो चुके हैं। स्वतंत्रता प्राप्ति से आज तक प्रजातंत्रात्मक दृष्टिकोण से जनशिक्षा के क्रियात्मक उद्देश्यों तथा विधियों का स्पष्ट रूप हम अभी तक नहीं खोज सके हैं।

व्यापक रूप से "शिक्षा वह साधन है जिसके द्वारा बालक की जन्म जात योग्यताओं का समुचित विकास कर उसके सन्तुलित व्यक्तित्व का निर्माण किया जाता है।" (परन्तु आधुनिक शिक्षा समाज से अलग-२ होने के कारण हम भविष्य थे स्वनिल छाया चित्रों में खोये जा रहे हैं)। आज तमाम विद्यार्थी जगत में अनुशासनहीनता, मानसिक क्षतिग्रस्तता और उद्देश्यहीनता फैली हुई है। इसका दोषी कौन है अध्यापक वर्ग या स्वयं विद्यार्थी ? शायद दोनों में कोई नहीं। क्योंकि हम इस बात को नजर अन्दाज नहीं कर सकते कि आज का विद्यार्थी समाज का एक विशिष्ट अंग है और उस अंग का मूल्याकन करते समय हमें पूरे शरीर को दृष्टिगत रखना है। आज विद्यार्थी वर्ग का आचरण ऐसा नहीं है कि उसे दृष्टिगत न रख कर इस विषय पर आगे बढ़ा जा सके।

अतः निम्नलिखित तत्व पर, जो इस तरह के अवांछनीय दर्शन के लिये जिम्मेदार है, विचार करना आवश्यक है। शिक्षा संस्थानों तथा बाहर का वातावरण क्या आज का विद्यार्थी समाचार पत्रों एवं पत्रिकाओं के अश्लील विज्ञापन या रेड़ियो सिनेमा के व्यापक कुप्रभाव से अछूता है आर्थिक एवम् सामाजिक कुरीतियों से पारिवारिक रहन सहन में आने वाली विकृति, स्वतंत्रता का दुरुपयोग, और उसे उच्छृखलता का पर्याय समझ लेना। अन्धकारमय उद्देश्य विहीन भविष्य की विभीषिका पाठ्यक्रम का दैनिक जीवन से सीधा सम्बन्ध न होना आदि अनेक ऐसे ठोस तत्व हैं जो कि आधुनिक शिक्षा, शिक्षापद्धति को दूषित किये हैं। शिक्षा संस्थानों में फैली अनेक कुरीतियां का मुख्य कारण है अनुभव हीन लोगों के हाथों में शिक्षा योजनाओं के प्रयोग तथा भाषा का विवाद।"

विद्याध्ययन का महत्वपूर्ण अँग है वातावरण। और विद्यार्थी वातावरण में अपने को ढालने का भरसक प्रयत्न करता है और हम इस बात को नजर अन्दाज नहीं कर सकते कि विद्यार्थी समाज से अलग नहीं है अतः समाज में फैली अनुशासन-हीनता, अनैतिकता और नैराश्यजनित व्यथा को अगर अगर विद्यार्थी जगत अपना लेता है तो कोई आश्चर्य की बात नहीं है।

कामोत्तजक विज्ञापन सिनेमा के अश्लील गाने तथा अभिनय विद्यार्थी के चेतन मन पर कुप्रभाव डाल रहे हैं। इस घृष्ट वातावरण में रह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कर विद्यार्थी के अशोभनीय आचरण को लक्ष्य कर विद्यार्थी वर्ग को दोष देना कहां तक ठीक है।

स्वतन्त्रता प्राप्ति के पूर्व विद्यार्थी वर्ग की प्रवृत्तियों को स्वाधीनता आन्दोलन की ओर उन्मुख किया गया था और अब उस लक्ष्य के न रह जाने से सिनेमा के हीरो हिरोइन ने उस का स्थान ले लिया। यही कारण है कि आज हमें इन शिक्षा संस्थानों ने एक भी गांधी, सुभाष चन्द्र बोस, चन्द्रशेखर आजाद, लाजपत राय नहीं दिया। आज का विद्यार्थी वर्ग अभिनेता अभिनेत्रियों के गाने अभिनय और वेषभूषा की नक्ल करके गर्व का अनुभव करता है। तथा अपने को धर्मेन्द्र या हेमा-मालिनी कहलाना पसन्द करता है अपेक्षा आजाद या गांधी कहलाने के।

पश्चिमी देश अमेरिका की शिक्षा पद्धति का तुलनात्मक अध्ययन करने से कुछ महत्वपूर्ण बात हमारे सामने आती है। कालेज में प्रवेश पाने वाले भारतीय छात्र की औसतन उम्र १७ वर्ष होती है। जबकि ११ वर्ष स्कूली कोर्स करने के उपरान्त अमेरीकी छात्र कालेज में प्रबेश पाता है। तो उसकी उम्र इससे कहीं अधिक होती है। स्वाभाविक है उसमें अधिक गाम्भीर्य हो और वह मनोयोग से अध्ययन कर सके।

विद्यार्थियों में यहां की अपेक्षा वहां बचपना बचकानी हरकतें एवम् अपराध प्रवृत्ति बहुत कम होती है। क्योंकि उनके पास समय ही नहीं रहता कि वह ऐसी हरकतों में भाग ले सकें। उनकी यह शरारत फुटबाल हाकी आदि खेलों तक ही सीमित रहती है। अमेरिका के विश्वविद्यालयों में वाचनालयों की आपको हमेशा भीड़ मिलेगी। वहां विद्यार्थी बड़ी गम्भीरता से अध्ययन करते हैं। क्योंकि एक स्पष्ट सुनहरे भविष्य की रूपरेखा उनके सामने रहती है। जिसमें बहुत बड़ा आकर्षण रहता है। ऐसे भविष्य को भला अपने हाथों नष्ट करना वे क्यों चाहेंगे। पर भारत के छात्र का भविष्य अनिश्चित रहता है।

भारत में जिन इंजीनियरिंग, मेडिकल एवम् तकनीकी संस्थानों में शिक्षा प्राप्ति के बाद अच्छे भविष्य की सम्भावना रहती है। वहां विद्यार्थियों में बहुत कम अनुशासनहीनता पायी जाती है। भारत के तथाकथित पब्लिक स्कूलों में आज हम वैसी शिक्षा व्यवस्था नहीं कर पाये हैं, जो भारतीय समाज के अटूट एवम् श्रमबृद्ध अस्तित्व, चरित्र निर्माण और छात्र के सम्पूर्ण व्यक्तित्व के विकास के लिए जरूरी है। इसके विपरीत इंग्लैंड के पब्लिक स्कूल में बच्चों को प्रारम्भ से ही समाज की आवश्यकताओं से तादात्म्य करना सिखाया जाता है। वे कर्तव्य को अधिकार से अधिक महत्व देना सीखते हैं।

विदेश में भेजे गये भारतीय शिक्षार्थी अपने को भारतीय कहलाने में प्रायः हीनता का अनुभव

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करते हैं। इन छात्रों में ऐसे बहुत कम छात्र हमारे सामने आये हैं जो देशवासियों को रुढ़िग्रस्त भावनाओं तथा साम्प्रदायिक एवम् धार्मिक संकीर्णताओं से मुक्ति दिलाने के लिये भारत में कार्य करने के लिये आगे बढ़े हो।

हमारे देश में अध्यापक तथा विद्यार्थी समाज में दुकानदार एवम् ग्राहक के सम्बन्ध स्थापित हो चुके हैं विद्यालयों की कमी होने के कारण कक्षाओं ने भीड़ का रूप धारण कर लिया है 'अतः भीड़ को नियंत्रित करने में जिन साधनों का प्रयोग किया जाता है वे ही हमारे विश्वविद्यालयों में आज प्रयुक्त किये जा रहे हैं।"

इस विषम परिस्थिति के लिये अध्यापकों और अभिभावकों को ही दोषी नहीं ठहराया जा सकता। आज अध्यापन ने अपनी प्रमुखता को और सम्मान को खो दिया है। अल्प वेतन और सेवा की अनिश्चित शर्तों के कारण अध्यापन के क्षेत्र में प्रतिभावान लोग कम आते हैं। मनोवैज्ञानिक आधार पर शिक्षा में वांछित सफलता प्राप्त करना केवल दुराशा ही है। जो अध्यापक अपनी ही संवेगात्मक एवम् मानसिक प्रक्रियाओं की जानकारी नहीं रख सकता उससे दूसरों के व्यक्तित्व निर्माण की क्या आशा ?

जब तक हम भारतीय समाज का काया पलट नहीं करते और उसमें ऐसे आदर्शों की प्रतिष्ठा नहीं कर पाते जिनके द्वारा व्यक्ति का जीवन स्तर समान रूप से बढ़ता जाये तब तक शिक्षा के क्षेत्र में किये जाने वाले अनगिनत प्रयोग और सुधार केवल प्रयास मात्र बन कर रह जायेंगे।

— प्रदीप कुमार अग्रवाल
बी० काम द्वितीय वर्ष
डी० ए० वी० महाविद्यालय, दे० दून

प्र०—पाप कर्म करते हुए भी पापी उसका फल भोगते हुए क्यों नहीं दीखता ?

उ० – पाप कर्म दूध की तरह तत्काल नहीं जम जाता। वह अग्नि की तरह तत्काल नहीं जलता। वह तो विष की तरह है जो धीरे-धीरे भीतर से जीव को घेरता आता है और कभी न कभी समग्र अहंकार को दुख-भोग से जकड़ देता है। पाप घड़े में गिरते हुए जलधारा के समान है कि कुछ समय तक कुछ पता नहीं चलता, पर घड़ा भर जाने पर बाहर चारों ओर से प्रकट होकर भिगो देता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्या सन्यासियों के 'हृदय' नहीं होता ?

जब किसी संन्यासी के हृदय-रोग से पीड़ित होने की बात सुनने को मिलती है तो बहुत से 'भक्त' यह पूछने लगते हैं—क्या संसार से विरक्त महात्माओं का भी हृदय-रोग से पीड़ित होना सम्भव है ? क्या उन्हें भी गृहस्थियों की भांति इस रोग से ग्रस्त होना होता है ? ऐसे प्रश्न अति विचित्र होते हैं मानों गृहस्थियों ने ही ऐसे भयंकर रोगों को ग्रहण करने का ठेका ले लिया हो। गत वर्ष जब हमारे परमपूज्य श्री स्वामी गोविन्द प्रकाश जी महाराज का शरीर हृदय-गति के रुक जाने से शान्त हुआ तो बहुत से व्यक्ति यह प्रश्न करते देखे गये कि स्वामी जी को हृदय रोग कैसे हो गया। हाल में भारत के प्रख्यात वेद-व्याख्याता तथा वेद संस्थान के संस्थापक परमपूज्य श्री स्वामी विद्यानन्द जी 'विदेह' के प्राण-पखेरू सहारनपुर में अपना प्रवचन देने के ठीक बाद मंच पर ही उड़ गये तो प्रश्न-कर्ताओं को पुनः निज सन्देह व्यक्त करने का अवसर मिल गया।

क्या इसका यह अभिप्राय है कि वीतराग महात्मा हृदय-हीन होते हैं ? तब उनके हृदय से प्रवाहित दया, कृपा, सहानुभूति आदि धाराओं में मज्जन करने के अभिलाषी तो रहते हैं किन्तु एक क्षण के किए भी यह सोचने का कष्ट नहीं करते कि ऐसे पावन हृदयों को रोगादि से कलुषित करने के प्रयास में हम किसी प्रकार दोष-मुक्त नहीं हो सकते। इस पर विशद रूप से विचार करना कदाचित् युक्ति-युक्त होगा।

हृदय-रोग से पीड़ित होने वाले व्यक्तियों को भिन्न भिन्न प्रकार की अनियमितताओं के कारण इस रोग का शिकार होना पड़ता है। जब मानसिक चिन्ताएं निरन्तर व्यक्ति-विशेष को घेरे रहती हैं और वह उनको व्यक्त करने के स्थान में अपने मन में छिपाये रखता है तो उसका प्रभाव उसकी पाचन-शक्ति पर विशेष रूप से पड़ता है क्योंकि रक्त का प्रवाह अधिकतर मस्तिष्क की ओर होकर रक्तचाप का कारण बन जाता है। पाचन-शक्ति के दुर्बल होने पर शरीर के अन्य अवयवों पर भी प्रतिकूल प्रभाव पड़ने लगता है, जैसे गुर्दे भली प्रकार से कार्य करना बन्द कर देते हैं तथा स्फूर्ति, उत्साह और सम्यक् प्रकार के चिन्तन करने की क्षमता से शनैः शनैः क्षय होने लगता है। 'चिन्तन' का स्थान 'चिन्ता' होने लगती है और इससे मन का सन्तुलन बिगड़ने लगता है और अधि-व्याधियों बिना निमंत्रण पाये स्वयं आ पहुंचती हैं। जब शरीर की प्राकृतिक प्रक्रिया में बाधा आने लगती है तो हृदय भी इससे अछूता नहीं रह पाता,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रकृति भिन्न भिन्न रूप से व्यक्ति को चेतावनी देती है तथा समझदार व्यक्ति आत्म-चिन्तन से तथा चिकित्सा विशेषज्ञों के परामर्श से अपनी दिनचर्या में यथेष्ट परिवर्तन करके अपने शरीर-यंत्र को अधिक बिगड़ने नहीं देते और धीरे धीरे सामान्य स्थिति को प्राप्त कर लेते हैं, जो व्यक्ति इस ओर समुचित ध्यान नहीं देते उन्हें अपने प्राणों की बलि देकर भारी मूल्य चुकाना पड़ता है। विभिन्न समस्याओं से जूझने वाले व्यक्ति यदि साहस तथा विवेक के पहियों वाले रथ पर आसीन रहते हैं तो उन्हें स्वास्थ्य-लाभ करने तथा सभी समस्याओं का समाधान करने में सहायता प्राप्त होती रहती है। अदूरदर्शी व्यक्ति हताश होकर तथा अपने विवेक को तिलांजलि देकर अन्ततः मृत्यु के कराल गाल में प्रवेश करते हैं।

गृहस्थियों में हृदय-रोग की अधिकता उनके जीवन के असन्तुलन, आशा-निराशा के झूले में झूलते रहने और संयम के अभाव के कारण होता है। ऐसे रोगों अपने मन तथा हृदय के बोझ को तपस्वियों के समक्ष हल्का करने के यत्न मे अप्रत्यक्ष रूप से अपनी चिन्ताओं को आंशिक रूप से इन महात्माओं को स्थानान्तरित कर देते हैं। जहां एक मनुष्य तथा स्त्री अपने दुःख को स्वयं सहन नहीं कर पाते वहाँ ऐसे अनेक 'रोगी' अपने भार को संन्यासी वर्ग पर डाल देते हैं जिससे संसार की मृग-तृष्णा को यथार्थ रूप में समझने वालों 'दयालु' महात्माओं का मस्तिष्क तथा हृदय बोझिल होकर उनके सहज सन्तुलन को बिगाड़ देता है। तब उन्हें आत्म-चिन्तन के समय भी गृहस्थियों की कोई न कोई समस्या आ घेरती है और वे अनमने होकर उक्त नवीन स्थितियों का अनुभव करने लगते हैं, इससे हृदय पर बोझ पड़ते रहने से उनकी दशा बिगड़ने लगती है।

जिन महात्माओं के प्रति गृहस्थजनों की अधिक श्रद्धा होती है उनको वे अपने घरों में भोजनादि के लिए आमन्त्रित भी करते हैं। यदि संन्यासी कुछ खाकर जाना चाहते हैं तो वे हठ तथा आग्रह से उन्हें और खाने को विवश कर देते हैं। इसका अनुमान लगाना सहज होगा कि यदि 'महात्मा' से एक से अधिक गृहस्थियों के घरों में जाना पड़े और इस प्रकार के आग्रह (दुराग्रह ?) के सामने झुकना पड़े तो उनकी क्या स्थिति होगी और प्रतिदिन यह क्रम रहने पर उनकी पाचन-शक्ति, उनके हृदय तथा शरीर के भागों पर इसका क्या प्रभाव पड़ेगा, इस प्रकार उन्हें अधिक सेवा से हम सद्-गृहस्थ रोग के कक्ष में प्रवेश कराते हैं। इसके साथ समय की पाबन्दी का अभाव भी रहता है। इन सम्माननीय अतिथियों के भोजन करने का समय निश्चित नहीं होता, जब भी वे सम्मेलन आदि के कार्यक्रम से 'मुक्त' होते हैं उन्हें भोजन कराया जाता है। कई स्थानों पर तो अर्द्धरात्रि में भोजन करके (अधिक खाने के आग्रह के साथ) ये संन्यासी उसको पचाने के लिए उचित समय नहीं पाते और जहां, शयन करने से पूर्व दूध पिलाने का हठ भी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बनी रहती है, उनका रोग-मुक्त रहना प्रायः असम्भव हो जाता है, जिनका भोजन का अपना प्रबन्ध होता है अर्थात जो स्वयं अथवा अपने शिष्यों के माध्यम से भोजन बना कर खाते हैं उनका स्वास्थ्य अधिक बिगड़ने नहीं पाता, वे उन्हीं पदार्थों का उपयोग करते हैं जो समय तथा स्थिति के अनुकूल होते हैं। शेष अतिथि तो रात्रि में भी गरिष्ठ भोजन करके तथा दुग्धादि सेवन करके सो जाते हैं और इस प्रकार उनकी पाचन-शक्ति के बिगड़ने से अनेक रोग चुपके से शरीर में प्रवेश कर लेते हैं और उनका अन्ततोगत्वा हृदय पर प्रभाव पड़ कर हृदय-रोग प्रकट हो जाता है इसे प्रसंग में कुछ प्रतिष्ठित महात्मा तो इस विचार से गृहस्थों के आग्रह का सामना नहीं कर पाते कि उन्हें अशिष्ट तथा अनुदार न समझ लिया जाय।

इस प्रकार अनियमित भोजन के साथ साथ गृहस्थों की अनेक समस्याओं का समाधान करने में प्रवृत्त मस्तिष्क असहनीय बोझ से दब कर 'हृदय' पर अपना कुप्रभाव दिखाने लगता है और 'स्वामी जी' के हृदय-रोग से पीड़ित होने की बातें सुनने को मिलती हैं। दूसरों की समस्याएं (बेटे-बेटी के विवाह से लेकर मुकदमों आधि-व्याधि-तक) सुनने तथा उनको हल करने में अधिक समय देने वाले महानुभाव उन उद्देश्यों की भी उपेक्षा करने लगते हैं जिनकी उन सबको अपेक्षा रहती है। जिसको समुचित विश्राम करने, अध्ययन करने, निज दिन-चर्या का नियमित रूप से पालन करने आदि के लिए समय नहीं मिल पाता वह किस प्रकार प्रभाव-शाली ढंग से उपदेश करने में सक्षम होगा? जिसका समय अधिक से अधिक लेकर हम स्वार्थी होने का प्रमाण देते हैं, उससे सर्वदा सुप्रसन्न रहने की, तरो-ताजा होने और शास्त्रोक्त प्रवचन देने की आशा कैसे की जा सकती है?

उन बातों का निदान यह भी हो सकता है कि अब पुनः उस परम्परा को पुनर्जीवित किया जाये जिसमें पिपासु स्वयं 'कूप' तक पहुंच कर निज पिपासा को शान्त करे, न कि कूप स्वयं उन तक चलकर आये और उनके कल्याण के प्रयास में अपने स्वस्थ मानसिक सन्तुलन और दिनचर्या के नियमों के पालन में बाधायें आने दे। वर्ष के कम से कम चार मास तो उन्हें एक स्थान पर (अपने आश्रम में निवास करके नव-शक्ति का संचार करना चाहिए विवाहादि के बाद रोग-मुक्त होने के अनन्तर और सांसारिक कार्यों से ऊब कर कुछ समय विश्राम करने तथा स्वामी वर्ग को शुभाशीष प्राप्त करने के लिए गृहस्थी अपने इन आचार्यों के चरणों में रहते हुए कुछ दिन वहां व्यतीत करें। इस प्रकार वातावरण में परिवर्तन आने पर उनकी अधिकतर समस्याओं का स्वतः हल हो जायेगा और महानाचार्यों के भी समय का अधिक अपव्यय नहीं हो सकेगा।

जब हम स्वयं के वशीभूत होकर संन्यासियों पर अपना भार डालने में भी नहीं सकुचाते तो हालात यह कहना कितना हास्यास्पद होगा कि क्या संन्यासी भी हृदय-रोग से पीड़ित

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होते हैं ?' इसके लिए स्वयं अधिकतर उत्तरदायी होने पर भी हम उनमें दोषारोपण करने में लज्जा का अनुभव नहीं करते। हम तो उनके नैतिक कार्य में बाधाएं लाकर उन्हें गरिष्ठ भोजन खिलाने एवं आग्रहपूर्वक अधिक से अधिक खिलाने और धनादि का प्रलोभन देकर उन्हें अपने समान गृहस्थी बनाने का कुचक्र चलाते रहते हैं और फिर वह कल्पना भी नहीं करते कि वे कभी रोगी हो सकते हैं यह विडम्बना नहीं तो और क्या है ?

● भारत बन्धु शर्मा
दिल्ली

———

मोह का फल

उस समय की कथा है, जब देवताओं और असुरों में युद्ध चल रहा था। असुर बड़े बलवान थे, वे हर बार देवताओं को हरा देते थे। कई बार देवताओं ने कोशिश की, पर वे असुरों को नहीं हरा सके। अन्त में सब देवता मिलकर अपने गुरु बृहस्पति जी के पास पहुंचे और बोले—'गुरुदेव ! हमने कई बार कोशिश की पर सदा ही हम असुरों के द्वारा परास्त हुए हैं। कृपा करके आप हमें कोई ऐसा उपाय बतावें जिसके द्वारा हम असुरों पर विजय प्राप्त कर सकें।

गुरु बृहस्पति जी बोले—'आप सब परम ज्ञानी दूरदर्शी श्रीदत्तात्रेय जी के पास जाएं। वे आपको कोई उपाय बता देंगे।'

सब देवता मिलकर श्रीदत्तात्रेय जी के पास पहुंचे। श्रीदत्तात्रेय जी ने सबका यथोचित सत्कार किया। फिर देवताओं से आने का कारण पूछा। देवताओं की बात सुन श्रीदत्तात्रेय जी बोले—बार-बार असफल होने पर भी आपको निराश नहीं होना चाहिए। प्रयत्न करते रहिये। सफलता अवश्य आपको मिलेगी। जाइये, एक बार फिर सब मिलकर उनसे युद्ध कीजिये।' ऐसा कहकर वे चुप हो गये। श्रीदत्तात्रेय जी की आज्ञा पाकर देवताओं ने असुरों से फिर युद्ध छेड़ दिया। इस बार असुरों ने देवताओं पर इतना भीषण आक्रमण किया कि देवता उसे सह न सके। वे भाग खड़े हुए। असुरों ने उनका पीछा किया।

भागते-भागते देवतागण श्रीदत्तात्रेय जी के आश्रम में पहुंचे। श्रीदत्तात्रेयजी लक्ष्मी जी के साथ प्रसन्न बैठे थे। देवतागण श्रीदत्तात्रेय जी से कुछ कह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भी न पाये थे कि इतने में असुरों का दल आ पहुंचा। उन्होंने श्रीदत्ताय जी के साथ जब लक्ष्मी जी को देखा, तब वे सब उन पर मोहित हो गये। श्रीदत्तात्रेय जी उसी प्रकार मौन बैठे रहे। न हिले न डुले। असुरों ने अवसर पाते ही लक्ष्मी जी को डोली में बैठा लिया और उछलते-कूदते वहां से चले गये। देवताओं से लड़ने का ध्यान ही न रहा। असुरों के चले जाने के बाद श्रीदत्तात्रेय जी ने हंस कर कहा-'अब आप लोगों की विजय निश्चित है। लक्ष्मी जी के मोह में उनका संगठन शिथिल हो जायगा और उनकी बल-बुद्धि दोनों नष्ट हो जायगी।'

श्रीदत्तात्रेय जी की बात ठीक निकली। असुर लोग अपना-अपना काम छोड़कर लक्ष्मी जी के मोह में फंसे रहने लगे। प्रत्येक असुर यह चाहता था कि लक्ष्मी जी पर उसी का ही अधिकार रहे। इसलिये सब आपस में एक दूसरे से ईर्ष्या-द्वेष करके लड़ने लगे। उनका संगठन टूट गया। वे बलहीन हो गये।

श्रीदत्तात्रेय जी ने अवसर देखकर देवताओं में कहा—'अब आप सब मिलकर असुरों पर आक्रमण कर दिया। असुर लक्ष्मी जी के मोह में फंसे हुए थे, अतः उन्होंने देवताओं का मुकाबला ही नहीं किया। देवताओं की विजय हुई। लक्ष्मी जी फिर देवताओं के पास आ गयी।

श्रीदत्तात्रेय जी ने समस्त देवतागणों से कहा—'जो मनुष्य संसार के धन-वैभव तथा भोग विलास में फंस जाता है, उसकी बुद्धि भ्रष्ट हो जाती है। जिसकी बुद्धि भ्रष्ट हो जाती है, उसका पतन शीघ्र होता है। इसलिये हे देवतागणों! आप मेरी इस बात को सदा याद रक्खो।'

देवताओं ने श्रीदत्तात्रेय जी को प्रणाम किया और प्रसन्न होकर अपने-अपने धाम चले गये। ★

— पं० रामकृष्ण शर्मा

प्र०—हम चाहते हैं कि हमारे कारण कोई दुखी न हो क्या करें?

उ०—स्वयं तुम सदा किसी का भी आश्रय लेकर स्वयं में ही आनन्दित रहो, किसी के कुछ न बनो, न बनाओ। समस्त उपाधियों से दूर रहो, क्योंकि समस्त दुःख उपाधियों से ही अथवा दोषों से ही उत्पन्न होते हैं। अपने दुःखों से मुक्त हो जाओ, दूसरों की चिन्ता सृष्टि के स्वामी पर छोड़ दो।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गीता भवन अमृतसर

शरीर का त्याग ही मोक्ष नहीं है। फिर भला विदेहमुक्त आदि शब्द क्यों बनाए जाते? शरीर का रहना या न रहना मोक्ष नहीं कहलाता, आसक्तियों से निवृत्ति ही मोक्ष है। हमारा धन छिन जाता है। पुलिस में रिपोर्ट देते हैं। अत्यन्त दुखी हो जाते हैं, मुक्त नहीं हैं। अभिमान आदि दोषों के कारण धर्म का परित्याग कर देते हैं, बन्धन में ही हैं, मुक्त नहीं है। सत्संग में पहले आकर बैठने या माला आदि जपने का भगवान के दरबार में रिकार्ड नहीं है।

मैं अन्तिम भावना को कह रहा हूं। जैसे लड़का examination (इम्तहान) में फेल हो जाता है लेकिन Examiner (परीक्षक) से कहता है पड़ोसियों से पूछो सारी-सारी रात मेहनत करता रहा। कई कई बार किताबों को पढ़ा, खाने पीने की भी होश न रहती थी। इस पर भी मुझे फेल क्यों किया गया? जवाब मिलता है—तेरे कर्तव्य कर्म को देखना है; हल क्या किया है। अन्दर नहीं देखना, अन्दर से बाहिर आए को देखना है न कि Dictionaries (शब्दकोष) books, tutors, etc. (किताबें और अध्यापक इत्यादि) इसी तरह कोल्हू के बैल व बुद्धू के बुद्धू नहीं बने रहना। देखो! भगवान के दरबार में कितनी कुर्बानियाँ और कितना देना है।

कांग्रेस में कुर्बानियों के रिकार्ड पर चुनाव हुए थे कि कौन लीडर सबसे अधिक समय जेल में रहा, वो सबसे बड़ी पदवी का हकदार होगा। इसी तरह भगवान् के दरबार में काम को देखना है। Work is worship (कार्य हीं सर्वोत्तम पूजन है) लेकिन दफ्तर जाना, काम करना, यह तो आप मोह ममता का पूजन कर रहे हैं। ईश्वर के लिये काम करना है। जो जिस-२ धर्म को अपना चुका है, जिसमें जिसकी लग्न लग चुकी है, उस पर मर मिटना ही विश्व के धर्मों को जीत लेना व अपना लेना है। राम नाम, हरि ॐ के जाप से आज तक प्राणियों का उद्धार हुआ होता तो सेठ क्यों न बन्धन से मुक्त हो जाते जिन्होंने पंडित किराये पर लिये हुए हैं। मन्दिरों में सालों से लोग बैठे हैं। सूर्य निकले भी कभी अन्धकार हो सकता है? ज्ञान और भक्ति का सूर्य जिसके हृदय में उदय हो जाए परमात्मा जिसे अपना समझ लें, वह क्या दरिद्र हो सकता है? उसकी कभी कोई भावना अटकी हुई नहीं रह सकती। एक आदमी मिलिट्री में आ जाता है फिर वह civilians (शहरियों) में चलना कब पसन्द करता है! इसी तरह भगवान का प्यारा भी निराला ही होता है। संसार के सुख ऐश्वर्य आते हैं. स्वी-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कार करता है। Palace (महल) में बैठा हुआ है तो राजाओं के पहनावे को अपना रहा है और गरीब की झोंपड़ी में है तो वैसे ही खुश है। यह भक्त ज्ञानियों के लक्षण हैं।

जैसे पेशावर से दिल्ली तक का फासला मापने के लिये कोई आदमी नहीं चलता। नक्शा बना होता है जिस पर हर एक हजार मील के पीछे एक इंच का निशान होता है। इसी तरह भगवान के विश्व को मापने के लिये हमारे शरीर के अन्दर ही सब रख दिया है। मोह ईश्वर से cut off (कट आफ) करके दुनिया को जकड़े हुए है—बन्धन है। अलग होना ही मुक्ति है।

दाराशिकोह मियां मीर साहिब के पास आता है। चटाई पर बिठा देते हैं। आप ऊंचे बैठे हैं। एक गरीब आदमी आता है। उसे पास बिठा लेते हैं। दूसरे दिन थोड़ा उपदेश करके कहते हैं, "दाराशिकोह धर्म एक अखाड़ा है। गुरू उस्ताद है। जो मूर्ख अखाड़े में आ कर सो रहे दस बजे तक घर, काम या आफिस का ख्याल भी न आए, कितना मूर्ख होगा! अन्तःकरण की सफाई होनी चाहिये। सत्य कहो तुम्हारे दिल में क्या है?" दाराशिकोह जवाब देता है—मैं सारा दिन तो झूठ पाप करता हूं लेकिन extreame (पराकाष्ठा) तक अपनी दुर्भावनाओं को नहीं ले जाता। जो मरीज डाक्टर से रोग छिपाने लग गया वो कल भी खत्म और आज भी। सो सच-सच बता क्या बात है? तेरा चेहरा कुछ प्रकट कर रहा है। कहता है—कल ५, १० आदमी मेरे साथ थे। आपने उस गरीब को अपने पास बैठाकर व मुझे नीचे बैठाकर मेरा अपमान किया। मीर साहिब पूछते हैं—क्या बड़े को ऊपर और छोटे को नीचे नहीं बिठाया जाता? सच बता लाखों करोड़ों तेरे खजाने में हैं, क्या तुझे सन्तोष है? मैं देखता हूं तू कितनी बार सत्संग miss करता है (नहीं आता), मेरे आर्डर को पीछे रखता है, दुनियां के कामों पे जान देता है। उस गरीब का पता दाराशिकोह को देते हैं कि कल इस पते पर जाकर उसे १०,००० रुपया दे आना। उसके घर पहुंचता है। आवाज देता है, उसे मिलता है व रुपया देता है कि मिया मीर साहिब ने तुझे भेजा है। बहुत कहने पर भी वह लेता नहीं, स्वीकार नहीं करता। मेरे लिए यह विष है। मेरे राहबर की आज्ञा है हमेशा अपनी कमाई खाना। जा यह विभूति जाकर किसी संत महात्मा को दो जो परोपकारी हैं। उसने वह रुपया स्वीकार न किया। अब वापस आने पर पूछते हैं—कहो भई कौन धनी है? बोल तेरे अन्दर लाखों पड़े हैं, सत्संग धर्म को पीछे रख दुनियाँ में लगा है। उसके अन्दर भगवान् की दी सन्तोष की बत्ती जग उठी है। विवेक बुद्धि से बंधी है। तात्पर्य यह है दुनियादार है किसी हालत में है हमें क्या। यदि परमात्मा की कृपा से जिन्दगी में कोई विशेषण, भगवान का gift (तोफा, देन) संकल्प विकल्प सिद्ध करना चाहते हो तो इसी तरह problem (प्रश्न) को हल कर दो।

लड़की की शादी पर इज्जत के लिये उधार भी ले लेता है। तन, मन, धन का कैसे समर्पण करते हैं। लेकिन भगवान का test (टैस्ट) का वक्त आता है तो paper blank (पेपर खाली) पहुंच जाते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आज दिनांक ६-१०-७७ बृहस्पतिवार को सुबह १० बजे स्वामी रामतीर्थ मिशन, राजपुर, देहरादून की प्रबन्धक समिति की बैठक कक्ष नं ३ में कार्यवाहक अध्यक्ष श्री स्वामी अमरमुनि जी महाराज की अध्यक्षता में सम्पन्न हुई जिसमें निम्नलिखित सदस्य उपस्थित हुए :—

नाम	हस्ताक्षर
१- श्री कृष्ण लाल भण्डारी, देहली	कृष्ण लाल भण्डारी
२- श्री बलबीर खन्ना, अमृतसर	बलबीर खन्ना
३- श्री शिवचरण दास जी सभ्रवाल	शिवचरण दास
४- श्री मंगल सेन कपूर, दे० दून	मंगल सेन कपूर
५- श्री चुन्नी लाल शर्मा, देहली	सी. एल. शर्मा (चुन्नी लाल शर्मा)
६- श्री कृष्ण चन्द्र जी मल्होत्रा, देहली	कृष्ण चन्द्र मल्होत्रा
७- श्री टेक चन्द नन्दवानी, दे० दून	टेक चन्द नन्दवानी
८- श्री चौ० त्रिलोक सिंह, दे० दून	त्रिलोक सिंह
९- श्रीमती जगरानी मेहता, दे० दून	जगरानी मेहता
१०- श्रीमती शान्ति सभ्रवाल, दे० दून (विशेष आमन्त्रित)	शान्ति सभ्रवाल
११- श्रीमती विजयाराजे जी सिन्धिया, ग्वालियर	विजयाराजे सिन्धिया
१२- श्री सुरेन्द्र लाल, ग्वालियर	सुरेन्द्र लाल
१३- श्री मेला देवी मल्होत्रा, देहली	मेला देवी
१४- श्री गोविन्द लाल बांगा, देहली	गोविन्द लाल बांगा
१५- श्री के. सी. पाल, अलीगढ़	के. सी. पाल
१६- श्री आनन्दी लाल जी बंसल अलीगढ़	आनन्दी लाल बंसल

विशेष आमन्त्रित

१७- श्री एल. आर. बग्गा, इलाहाबाद	एल. आर. बग्गा
१८- श्री खैराती लाल जी, अलीगढ़	खैराती लाल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१९- श्री काका हरिओ३म्, दे० दून	काका हरिओ३म्
२०- श्री सरदारी लाल ओबेराय, दे० दून	सरदारी लाल ओबेराय
२१- श्रीमती पद्मावती जौहर, मसूरी	पद्मावती जौहर
२२- श्री स्वामी अमरमुनि जी महाराज, दे० दून	स्वामी अमरमुनि

प्रस्ताव नं० १ :— **परमश्रद्धेय ब्रह्मलीन स्वामी गोविन्द प्रकाश जी महाराज के निधन पर शोक प्रस्ताव :—**

यह समिति स्वामी गोविन्द प्रकाश जी महाराज परमाध्यक्ष स्वामी रामतीर्थ मिशन, के अकस्मात् दिनांक १९-९-७७ को दिल्ली में ब्रह्मलीन होने पर संवेदना, वेदना सहित शोक प्रस्ताव पारित करती है। तथा जो सेवायें उन्होंने इस आश्रम की उन्नति तथा स्वामी हरिॐ जी महाराज, स्वामी रामतीर्थ जी महाराज के द्वारा लगाये हुए वेदान्तवृक्ष को प्रफुल्लित करने हेतु, जिसकी सुगन्ध आज केवल भारत में ही नहीं अपितु अन्य पाश्चात्य अध्यात्म जगत को भी आनन्दित कर रही है, अपने ज्ञानोपसना व कर्मसमुच्चय युक्त व्यक्तित्व द्वारा की उसके लिए हम उनका सदैव आभार प्रगट करते हैं।

प्रस्ताव नं० २:—

(अ) इस शोक प्रस्ताव के पारित होने के बाद कार्याधिक्य के कारण क्योंकि स्वामी अमर मुनि जी महाराज सभा से उठकर चले गये थे इस लिए सभा की कार्यवाही को सुचारू रूप देने के लिए माता माला देवी मल्होत्रा, अध्यक्षा स्वामी रामतीर्थ मिशन, स्वमी रामतीर्थ नगर दिल्ली, ने राजमाता सिन्धिया का नाम प्रस्तावित किया जिसका अनुमोदन श्री शिवचरण दास जी सभ्रवाल ने किया। यह प्रस्ताव सर्वसम्मति से पारित हुआ।

सभाध्यक्ष, राजमाता सिन्धिया, की अनुमति से स्वामी रामतीर्थ मिशन के परमाध्यक्ष पद के चुनाव पर विचार किया गया। जिसमें श्रीमती माता मेलादेवी, दिल्ली ने स्वामी अमरमुनि जी महाराज का नाम प्रस्तावित किया। जिसका अनुमोदन रा० ब० शिवचरण दास जी सभ्रवाल, देहरादून, श्री कृष्ण लाल जी भण्डारी दिल्ली, श्री लाजपतराय जी बग्गा इलाहाबाद, चौधरी त्रिलोक सिंह जी, देहरादून, लाला सरदारी लाल जी ओबेराय, देहरादून, के० सी० पाल, अलीगढ़, श्री खैराती लाल जी अलीगढ़, श्री बलबीर जी खन्ना, अमृतसर एवं दीवान सुरेन्द्र लाल जी शिवपुरी ने किया।

(ब) अध्यक्षा [सभाध्यक्षा] महोदया ने यह प्रस्ताव रखा कि चयन परिणाम की घोषणा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सार्वजनिक सभा में, जो बाहर चल रही है, की जाये, इसका अनुमोदन श्री चुन्नी लाल जी शर्मा ने किया सर्व सम्मति से यह प्रस्ताव भी पारित किया गया कि सभाध्यक्ष, राजमाता सिन्धिया प्रबन्धक समिति के साथ सार्वजनिक सभा में उपर्युक्त परिणाम की घोषणा करें। तदनुसार अध्यक्षा महोदया ने प्रबन्धक समिति के साथ उपस्थित सदस्यों के साथ स्वामी हरिओम् जी महाराज की समाधि पर प्रतिज्ञा लेने के पश्चात् सार्वजनिक सभा में घोषणा की तथा समस्त कार्यकर्ताओं सहित परमाध्यक्ष, स्वामी अमरमुनि जी महाराज के श्री चरणों में प्रणाम करते हुए आजीवन अपनी सेवायें मिशन को समर्पित करने का वचन दिया।

प्रस्ताव नं० ३ :—

सभाध्यक्षा की आज्ञानुसार श्री शिवचरण दास जी सभ्रवाल ने प्रस्ताव रखा कि स्वामी हंस प्रकाश जी से प्रार्थना की जाये कि जैसा सहयोग वे ब्रह्मलीन स्वामी गोविन्द प्रकाश जी एवं स्वामी रामतीर्थ मिशन को देते रहे हैं उसी प्रकार से भविष्य में भी परमाध्यक्ष स्वामी अमरमुनि जी एवं स्वामी रामतीर्थ मिशन को अपना सहयोग देते रहेंगे। इसका अनुमोदन सर्वसम्मति से किया गया और माता मेला देवी जी से प्रार्थना की गई कि वे इस की घोषणा सार्वजनिक सभा में करें। तदनुसार माता जी ने इसकी घोषणा सार्वजनिक सभा में की।

प्रस्ताव नं० ४ :—

बैंक तथा अन्य संस्थाओं में रामतीर्थ मिशन के एकाउन्ट्स अथवा पुराने एकान्ट्स को आपरेट करने का अधिकार देने पर विचार में यू० को० बैंक राजपुर शाखा, एस० बी० एकाउन्टस नं० १०२ तथा फिक्स डिपोजिट एकाउन्ट हैं। :—

सर्व समिति से यह पारित किया गया है कि परमाध्यक्ष स्वामी अमरमुनि जी, काका हरिओम्, रा० ब० शिवचरण दास जी सभ्रवाल व चौधरी त्रिलोक सिंह जी इन उपरोक्त चारों व्यक्तियों में से दो के हस्ताक्षर उपर्युक्त कार्यों के लिए पर्याप्त होंगे (उनके प्रमाणित हस्ताक्षर इस प्रस्ताव के साथ संलग्न हैं) परमाध्यक्ष, स्वामी अमरमुनि जी एवं श्री काका हरिओम् जी में से एक हस्ताक्षर आवश्यक हैं।

—काका हरिॐ मन्त्री

———

प्र०—सबसे अधिक सरल पुण्य कर्म क्या है ?

उ०—बड़ों को नम्रतापूर्वक नमन करो, अभिवादन शील बनो, वृद्धों की सेवा करो, यह सरल पुण्य कर्म है। इससे आयु की, बल की, सुख की और सुन्दर वर्ण की वृद्धि होती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समूल परिवर्तन

प्रश्न—मैं प्रयत्न करता हूं जीवन में पाप छूटें, बुराइयां छूटें, बुरे व्यक्तियों का साथ छूटे, । किन्तु कितना भी प्रयत्न करने पर मुझे सफलता नहीं मिली है। कृपा करके बताएं कि मैं क्या करूं ?

उत्तर—तुम क्या कर सकोगे, तुम्हारे करने से क्या होगा ? यदि तुम्हारे करने से होता तो अब तक हो गया होता, तुम प्रभु की शरण में जाओ फिर प्रभु अपने आप कर लेंगे।

एक बार किसी व्यक्ति ने अपने मित्र को विदेश से लाई हुई एक अत्यन्त सुन्दर पेटी उपहार में दे दी थी, और कहा था कि इसको अपने घर की बैठक में पूर्व की ओर मुख करके रख लेना। यह पेटी 'ज्यॉमेट्री' के हिसाब से बनी है इसलिए पूर्वाभिमुख रखने में ही इसकी शोभा है।

फिर उसके मित्र ने ऐसा ही किया, उस पेटी को अपने मकान में पूर्व की ओर घुमा कर रखा किन्तु उस कमरे में जो भी और वस्तुएं थी, उस पेटी के सामने भद्दी लगने लगी, उसने उन सब वस्तुओं को भी पेटी के हिसाब से सजाया। फिर उन वस्तुओं के हिसाब से कमरा बेमेल लगने लगा, फिर उसने उस कमरे को भी बदल डाला। किन्तु अब उसका मकान ही बेमेल लगने लगा। इसलिए उसने अपने पूरे मकान का नक्शा ही बदल डाला। अब मकान तो ठीक हो गया किन्तु सामने की बगीची उस मकान के सामने बेमेल दीखने लगी, अन्त में उसने उस बगीची को भी बदल डाला। इस प्रकार उस एक पेटी ने उसके पूरे घर का नक्शा ही बदल दिया।

ऐसा ही तुम्हारे जीवन में भी है। तुम भी अपने अन्दर उस प्यारे प्रभु को बिठा लो फिर देखो तुम्हारा बाहर भीतर स्वतः बदल जाएगा। तुम्हारे सब कर्म और विचार भी अपने आप बदल जाएंगे। किन्तु यदि तुमने प्रभु को नहीं बिठाया तो कितना भी कुछ प्रयत्न करते रहो सब व्यर्थ है।

भक्त, अपने अन्दर भगवान को बिठा लेता है, फिर वह कुछ भी नहीं करता। उसके अन्दर का भगवान उससे सब कुछ करा लेता है।

—अमृत पथ से 'साभार'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दुक्खां विच्च पा गया

चूड्डियाँ परीतां श्याम साड्डे नाल ला गया,
दुर गया मथरा सान्नूँ दुखां विच पा गया।
काड्डके सी मक्खन मैं ते छिक्के उत्ते रक्खेया,
नाल गवालां दे ओ चोरी कर खा गया।
दुक्खां विच पा गया।
दुद ते मक्खनां नाल जेन्नां श्याम पाल्लेया,
नन्द ते जसोदा नूँ नई मुखड़ा दिखा गया
दुक्खां विच पा गया।
छाड्डु गया वनां विच सखियाँ नूँ रोन्देयां,
पैल्लां नाल प्यार दे सी रास रचा गया।
दुक्खां विच पा गया।
'किशन दास' दुक्खां दे भँवर विच्च पाके,
डुब दियाँ संखियाँ नूं नई पार लगा गया।
दुक्खां विच पा गया।

—स्वामी किशन दास

वेदान्त हमें क्या सिखलाता है

१—वेदान्त हमें अमर बनाना सिखाता है, मरना नहीं, वह मृत्यु को भी जन्म देता है।

२—वेदान्त जीवन को परम पवित्र, पुण्यमय साम्य और शान्तिमय बनाता है, वह पाप और ताप को हरता है।

३—वेदान्त हमारे जीवन को आत्मा या परमात्मा के परायण बनाकर हमारे जीवन में चेतना उतार देता है, और काम, क्रोध, लोभ आदि को समूल नष्ट कर देता है।

४—वेदान्त हमें स्वर्ग के दिव्य भोगों की लालसा नहीं देता वह स्वर्गको पृथ्वी पर उतारता है।

५—वेदान्त ज्ञान की अप्रतिम, अपूर्व ज्योति जलाकर सर्वत्र अनन्त प्रकाश फैलाकर अज्ञान अंधकार को मिटा देता है।

६—वेदान्त विश्व की अमर आत्मा के दर्शन कराकर सब में प्रेम भाव पैदा करता है, वह घृणा द्वेष समाप्त करता है।

७—वेदान्त विश्व को दुःख और पाप की राशि नहीं बतलाता और न ही निराशावाद सिखलाता है, वह संसार को आनन्दमय बना देता है।

हरि ॐ तत सत्

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

★ आश्रम समाचार ★

परमाध्यक्ष श्री स्वामी अमरमुनि जी महाराज के संरक्षण में व स्वामी अद्वैतानन्द जी महाराज (ब्रह्मचारी जी), स्वामी हंस प्रकाश जी महाराज के सहयोग से पूर्वनिश्चित कार्य-क्रमानुसार दिनांक १८ की प्रातः से भारत के सुप्रसिद्ध वेदविद् ब्राह्मण पं० वेणी राम गौड जी के आचार्यत्व में काशीवासी व समीपस्य ग्रामवासी ब्राह्मणों द्वारा प्रतिष्ठित होने वाली मूर्तियों का वेदविहित प्रक्रियाओं के अनुसार पूजन प्रारम्भ हुआ। दैनिक नवग्रहादि पूजनोपरान्त वैदिक मन्त्र के उद्घोष से युक्त की जाने वाली यज्ञ प्रक्रिया को देखकर प्राचीन ऋषि आश्रमों का रूप साकार हो गया। आश्रम के सहज शान्त वातावरण में भी काफी परिवर्तन के कारण मौन शान्ति की अनुभूति संवेदित हुई।

स्वामी राम, स्वामी हरिओम् जी महाराज की इच्छा के क्रियात्मकरूप त्यागमूर्ति ब्रह्मलीन स्वामी गोविन्द प्रकाश जी महाराज की पुण्यस्मृति में, जिनकी सत्प्रेरणा से प्रेरित होकर ही गुरसम शिव स्वरूप बाबा विश्वनाथ यति जी महाराज के वरद्अभय रूप हस्तद्वय से युक्त हो श्री जितेन्द्र जी नैय्यर ने अपने पूज्य पिता शिवभक्त श्री दौलत राम जी नैय्यर की पुण्यस्मृति में शिवमन्दिर निर्माण का संकल्प लिया, रामप्रेमी जनों ने हर माह की तरह १९ की प्रातः रामचरित मानस का अखण्ड पाठ रखा।

इसी दिन रात्रि में लगभग ८ बजे से इन्द्र द्वारा सदाशिव की अगवानी में घनघोर जल वृष्टि के फलस्वरूप प्रकृति ने, जो मटमैले हरितपरिधान को धारण किये हुए थी, स्वच्छ हो में सदाशिव का प्रसन्न मुद्रा में पार्वती की तरह स्वागत किया।

२० की प्रातः मेघरहित आकाश ने सदाशिव के आकाररहित पर साकार विशुद्ध, अस्सीम स्वरूप की ओर संकेत किया। सूर्य रश्मियों से मन्दिर का कलश चमक उठा। वेद मन्त्रों के उद्घोष से आश्रम का वातावरण सचेतन सा हो उठा। इधर सदाशिव का पूजन और उधर-ज्ञान मन्दिर में शिवहृदयवाणी

(शेष आगे पृष्ठ २५ पर)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Installation of the LOrd Siva

By Swami Brahmnnanda

It was of course an auspicious and holy occasion when the Lord Sadasiva along with His family in addition to Mahavira Hanuman and the Lord of Light, Surya got installed at the Rama Tirtha Mission Ashrama Rajpur with the enthusiastic efforts of Sri Swami Amaramuni the president of the said Mission. The preparation for the ceremony commenced with ritualistic performance as per Vedic Sanatana Dharma and continued without interruption for days together for the sake of prana pratistha of the pratimas till the completion on the 20th April 1978 On the last day according to scheduled programme a huge number of people of ages faithfully gathered from far and nearby some means or other in order to participate the ceremony. Many pundits proficient in the rituals were engaged, appointed and entrusted to perform the necessary acts for the accomplishment of ceremonies which they did with the holy mantras of the Vedas. Before the commencement of the worship of the Lord murti, idol, must need prana pratistha, that is, vitalisation there of without which the worship goes futile.

Jagad guru Sankarcharya Swami Niranjana Deva Tirtha took personally part in the performance of the ceremony of prana pratistha of the deities installed in the temple constructed with the efforts of late Swami Govinda Prakash the former president and out of pious funds contributed voluntary in donation at the campus of said Ashrama. The credit goes to Baba Visvanath Yati aged about more than 100 who inspired and encouraged Swami Govinda Prakash to have a temple of Lord Vishwanath too besides Swami Rama's temple of knowledge

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

jnana madiram. Besides Sri Ananda Mayee Ma visited the Ashrama on the occasion and wished good to all the people then there. The great and well known Devarah Baba also very affectionately obliged the gathering on the day and showered his kind benediction with best wishes for the success and prosperity of Swami Amaramuni and the mission under his Presidentship.

A large number of Mahatmas of many sects arrived at the ashrama from various places and took pains to oblige the gathering. They worship the Lord Siva and other deitis, said prayers, preached and delivered lecture. All of the speakers took pains to explain and delineate significance of idol worship, laid stress on such worship of the is that of the absolute in the idol not that of the lather, who (which) is of course a symbol of Saguna brahma and symbol represent the absolute beyond the the relative knowledge. The Lord Siva who is very compassionate consequently grants and bestows what the devotees aspire and long for. The worship of Lord siva is very easy and simple and he pleases veay prompty making the devotees happy with peace prosperity health and long life. Among the speakers whom the writer recollets were Swami Kishoredas ji, Mahant Ramaprakash, Swami Sankaranada, Sri Madhavacarya, Swami Ramasvarupji, Baba Visvanath Yati and many others and they all gave their learned talks. There was blind Swami very learned in Vyakarana and Vedanta who spoke very elegantly and lucidely. Lectures of philosophy, religion, ethics, culture etc annoted and eluciated.

As for stage Swami Hansprakash, the Secretary of mission was spokesman and incharge of the stage Mahamandalesvara Swami Brahmananda, presided over the conference and gave glowing tributs to Swami Rama Tirtha, Swami Hariomji Maharaj and Swami Govidaprakash who were great saints and served the humanity so long they lived a relative life. At last the president of the mission held mike and vent lated his gratitude to the Lord Siva, the participants, who kindly gave their suppo.t and valuable time in performance of the said ceremony. He gave his thanks to all and words gurgling out were really appealing and touching.

For the calm and quiet success of performance of the ceremoney Shri Swami Amaramuni held responsible the late Swami Govindprakash who was his intimate friend unto the last. All of the speakers paid their homage to late Swami Govindprakash who inspired the

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

late Shri Daulat Ram to construct the temple on the yard of the ashram on the yard of the ashrama and tributes were paid to him too In addition they congratulated for the success of ceromony Swami Amaramuni the heir of Swami Govindprakash and Sri Jitendra Naiyer the son and heir of Sri Daulat Ram who completed the temp'e and thus carried the scheme to oompletion. The writer observed the activities, had talks with persons regarding the relevant topics and found my friend Prem and Kaka Hari Gm and Satya Prakash ete very busy. Eventually participants had a samasti bhoja given by the host Shri J Naiyer. Prasad was distributed directly or through messengers I congratulate Swami Rameśvaranunda, Swami Advaita Nanda Tirtha for their arrangements. It has really a fine completion though on the preceding night a violent haistorm wished to terrorise and disturb the scheduled programme but nothing went against the same and completed smilingly. Let us wish and hope the constant progress, prosperity and publicity of Swami Rama's message the dream of Swami Hari O Tirtha. Thls is not a complete review of the performance of the said ceremony, it is a brief report exclusion has not been intentional. This was an important occasion in the history of Hinduism.

What is Joy ?

-From the Taittireey Upnishad

Think of a youngman, well read, ambitious firm, strong, noble, give him all the wealth of the world, call him one unit of human joy.

Multiply that joy a hundred times, and call it one unit of the joy of those brought to the celestial choir by their good deeds. A man full of revelation but without desire has equal joy.

Multiply that joy a hundred times, and call it one unit of the joy of choir born sprits. A man full of revelation, but without desire, has equal joy.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Multiply that joy a hundred times, and call it one unit of the joy of the fathers, living in their eternal paradise. A man full of revelation, but without desire, has equal joy.

Multiply that joy a hundred times and call it one unit of the joy of heven-born Gods. A man full of revelation but without desire, has equal joy.

Multiply that joy a hundred time aud call it one unit of the joy of gods brought to Godhead by their good deeds. A man full of revelation, but without desire has equal joy.

Multiply that joy a hundred times and call it one unit of ruling Gods. A man full of revelation, but without desire has equal joy,

Multiply that joy a hundred times, and call it one unit of the joy of Indra, God of power. A man full of revelation, but without desire has equal joy.

Multiply that joy hundred times. and call it one unit of the joy of Brihaspati, who has taught the Gods. A man full of revelation, but without desire, has equal joy.

Multiply that joy a hundred times, and call it one unit of the joy of Prajapati, makes of God. A man full of revelation, but without desire has equal joy.

Multiply that joy a hundred times, and call it one unit of the joy of spirit. A man full of revelation, but without desire, has equal joy.

He who lives in man He who lives in sun, are one.

He who knows this, cries goodbye to the World, goes beyond elemental self, living self, thinking self, knowing self, joyous self, Here is my authority.

He who knows the spiritual joy mind cannot grasp nor tongue speak, fears nothing.'

Should he do nothing, or leave good undone, we know no remove what he does what he does not is sanctified: what he does not, what he does is sanctified.

———

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(पृष्ठ २० से आगे)

मर्यादा पुरुषोत्तम राम का पूजन। कैसा दृश्य था ? इसका उत्तर वाणी न तो द्वारा व्याख्यायित है और न ही लेखनी लिखने में सक्षम है इस दृश्य का वर्णन।

परमश्रद्धेय पुरी के जगद् गुरु शंकराचार्य श्री निरञ्जन देव तीर्थ, मातृस्वरूपा श्री श्री माँ आनन्दमयी व तपोनिष्ठ श्री देवरहा बाबा के सान्निध्य में मूर्तियों में अमूर्त प्राणों की शक्ति का संचार हुआ। सम्पन्न हुआ भारत की अध्यात्मविभूतियों के सान्निध्य में 'मिशन' के इतिहास का भावभक्तिमय एक और चरण साकार हुआ पूर्वाचार्यों का इच्छा जगत।

इस उपरोक्त समारोह में हरिद्वार, ऋषिकेश आदि पवित्र स्थलों से म० मं० स्वामी ब्रह्मानन्द जी महाराज, सूरतगिरि बंगला हरिद्वार, म० मं० स्वामी गोविन्दानन्द जी महाराज, भगवद्धाम हरिद्वार आचार्य स्वामी किशोर दास जी, स्वामी शंकरानन्द जी, श्रीमाधवाचार्य जी, डा० स्वामी श्यामसुन्दर दास जी, प्रज्ञाचक्षु कृष्णा नन्द जी, प्रीतममुनि जी, पुजारी रामचरन दास जी आदि महापुरुषों ने पधार कर शिवतत्व व शिवमहिमा का विचार पूर्वक वर्णन किया। धन्यवाद भाषण के बाद, जो श्रद्धेय परमाध्यक्ष जी द्वारा स्नेहमय शब्दों में दिया गया, ब्रह्मभोज व समष्टि भोज हुआ।

आगन्तुक दून वासी व अन्य शाखाओं से पधारे हुए रामप्रेमियों की बिदाई के उपरान्त पुनः व्यवस्था का अवलोकन महाराज श्री द्वारा हुआ। यहां इस तथ्य को स्पष्ट करना उचित होगा कि कार्यक्रम की सफलता व व्यवस्था में सहयोगी रामप्रेमी कार्यकर्ताओं के साथ ही आश्रम के कर्मठ कार्यकर्ता श्री प्रेमजी भी सराहना के पात्र हैं।

दिनाँक २१-५-७८ को श्रीमती शान्ति कुमार ने आश्रम पर निर्मित कमरों के ग्रहप्रवेश निमित आश्रमस्थों का समष्टि भोज कराया।

कार्यक्रमानन्तर महाराज श्री ने ब्रह्मलीन स्वामी प्रेमानन्द जी महाराज की पुण्यस्मृति में निमित्त महाविद्यालय के उद्घाटन समारोह में सम्मिलित होने हेतु मुकेरियाँ की ओर प्रस्थान किया। दिल्ली, लुधियाना आदि सम्मेलनों में उपस्थिति के बाद आप म० मं० स्वामी गुरूचरण दास जी महाराज के दर्शनार्थ जो दिल्ली में अस्वस्थ हैं, दिल्ली गये। 'पत्रिका' के माध्यम से राम-दरबार ईश - चरणों में श्रद्धेय-चरणों के स्वास्थ्य लाभ की प्रार्थना करता है।

—सह-सम्पादक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दूरभाष-८४२२१ राजपुर, ४२९७ देहरादून, तार का) देहरादून, रजि० नं. डी. एन. १५

-सूचना-

१-मासिक पत्रिका 'राम सन्देश' न मिलने पर अपने समपस्थ डाकखाने (पत्रालय) से पता करने के पश्चात हमें सूचित करें। क्योंकि कभी किसी कारणवश "राम सन्देश" १५ ता० तक निकलता है। इसलिए शिकायत पत्र अपनी २ ग्राहक संख्या सहित दिनांक २० के बाद प्रेषित करने का कष्ट करें।

२-आप आश्रम में किसी भी प्रकार का धन भेजते समय यह लिखना न भूलें कि वह धन किस निमित्त भेजा जा रहा है तथा चैक स्वामी रामतीर्थ मिशन के नाम पर ही भेजें।

३-यह प्रार्थना है कि जो पाठक इस पत्रिका के आजीवन सदस्य बनना चाहते हैं वे अपना सदस्यता शुल्क सम्पादक के नाम प्रेषित करें। सदस्यों को आजीवन पुनः बिना किसी शुल्क के यह पत्रिका प्रेषित की जायेगी।

४—स्वामी रामतीर्थ मिशन, राजपुर देहरादून के आजीवन सदस्यों को कार्यकारिणी की १९७७ गोष्ठी के निर्णयानुसार यह सूचित किया जाता है कि सदस्यता शुल्क वार्षिक १२ रु० के स्थान पर २० रु० कर दिया गया है तथा उन सदस्यों को मासिक पत्रिका का प्रेषण मास जनवरी १९७८ से निःशुल्क किया जायेगा। अतः सदस्य अपना वार्षिक शुल्क भेजते समय १२ रु० के स्थान पर २० रु० प्रेषित करने का कष्ट करें।

५—'राम सन्देश' के विदेशी ग्राहक अपना वार्षिक शुल्क १५ रु० भेजें। क्योंकि परमाध्यक्ष जी की आज्ञानुसार १२ रु० के स्थान पर ३ रु० वृद्धि का निणय लिया गया है।

डाक पोस्ट

ग्राहक संख्या 1-3

श्री/श्रीमती

स्थान

डाकखाना

जिला

मासिक पत्र—

"राम - सन्देश"

स्वामी रामतीर्थ मिशन

राजपुर, देहरादून (यू. पी.)

Pin-248009 भारत

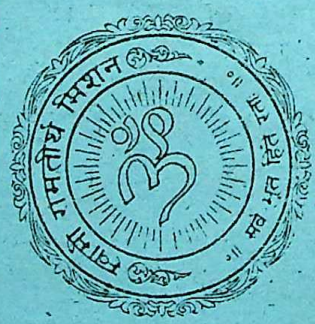

स्वामी रामतीर्थ मिशन, राजपुर देहरादून (उ०प्र०) के लिए प्रकाशक स्वामी अमर मुनि द्वारा न्यू आईडियल प्रिंटिंग हाऊस, ४ बी, नेशविला रोड देहरादून में, मुद्रित।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राम - सन्देश

पुस्तकालय
गुरुकुल काँगड़ी

नवम्बर १९८८

सस्थापक—
ब्रह्मलीन स्वामी हरिॐ जी महाराज

संवर्धक—
ब्रह्मलीन स्वामी गोविन्दप्रकाश जी महाराज

व्यवस्थापक—
स्वामी अमर मुनि जी महाराज

सम्पादक—
काका हरिॐ "निर्द्वन्द्व"

आजीवन सदस्यता शुल्क—
भारत में — १०० रु०
विदेश में — ५०० रु०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

* शुभ कामना *

समस्त रामप्रेमियों को—
दीपावली की हार्दिक शुभ कामनायें प्रेषित हैं।

---

* विषय-विज्ञान *

विषय	लेखक	पृष्ठ
नाचूँ	... स्वामी राम	१
ग़ैरमुल्क वालों से	... ,,	२
ज्ञानी की तृप्ति	... श्री स्वामी विज्ञानानन्द जी	४
भाषण	... ब्रह्मलीन श्री स्वामी हरिॐ जी महाराज	५
अनमोल रत्न !	... संकलित	८
साधन बड़ा या साहस ?	... ...	९
प्रवचन	.... ब्रह्मलीन श्री स्वामी गोविन्दप्रकाश जी महाराज	१०
हरिनाम	... डॉ० श्री नीरजाकान्त चौधुरी देवशर्मा	१२
परछिद्रान्वेषी न बनो !	... संकलित	१५
नाम का महत्व	... श्री धर्मानन्द जी शास्त्री	१६
अज्ञानता	... श्री जयप्रकाश जी	१८
श्री शङ्कराचार्य	... .	२०
क्यों नहीं तुम आज आये ?	... श्री गुणानन्द जी थपलियाल	२१
राजपूतनी की वीरता	... ...	२२
आमन्त्रण पत्र	... प्रधान— श्री आनन्दीलाल जी बंसल	२४
शोक समाचार	... ...	२५
आश्रम समाचार	... सम्पादक	२६

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

❀ ॐ ❀

'राष्ट्र के हित के लिए प्रयत्न करना ही विश्व की शक्तियों अर्थात् देवताओं की आराधना है'–स्वामी राम

वेदान्त, अध्यात्म, संस्कृति, धर्म एवं भक्ति का सजग सन्देशवाहक तथा
स्वामी राम के आदर्शों का एकमात्र लोकप्रिय मासिक—

राम सन्देश

वेदोपनिषदां तत्त्वम् सत्यं नित्यं सनातनम् ।
तत्सर्वं "रामसन्देशे" पत्रेऽस्मिन्नवलोक्यताम् ॥

वर्ष २७ | अंक ११ | राजपुर– देहरादून— नवम्बर १९७८. | वार्षिक भेंट १०) | एक प्रति ८५ पैसे

❀ नाचूँ ❀

नाचूँ मैं नटराज रे ! नाचूँ मैं महाराज ।
सूरज नाचूँ, तारे नाचूँ, नाचूँ बन महताव रे ।
तन तेरे में मन हो नाचूँ, नाचूँ नाड़ी नाड़ रे ।
बादर नाचूँ, वायू नाचूँ, नाचूँ नदी और नाव रे ।
ज़र्रा नाचूँ, समुद्र नाचूँ, नाचूँ मोघरा काज रे ।
मधुआ तलब बदमस्ती वाला, नाचूँ पी पी आज रे ।
घर लागो रंग, रंग घर लागो, नाचूँ पापा बाज रे ।
राग गीत सब होवत हरदम, नाचूँ पूरा साज रे ।
राम ही नाचत, राम ही बाजत, नाचूँ हो निर्लाज रे ।

—स्वामी राम

—❀—❀—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ग़ैरमुल्क वालों से

— स्वामी राम

अपनी उन्नति करने के लिए हिन्दुस्तानियों को गैर मुल्कवालों (विदेशियों) से बहुत कुछ सीखना है। सबसे पहली बात, जो उनसे सीखनी है, यह है कि वे लोग बच्चों को किस प्रकार शिक्षा देते हैं। क्यों कि बच्चों की शिक्षा पर ही देश की उन्नति, अवनति का दारोमदार है। बच्चों को जिस प्रकार की शिक्षा दी जायगी, उसी प्रकार का आचरण स्वभाव और ख्याल होगा। जापान में जब लड़का पहले-पहल स्कूल में भरती होता है, तो मास्टर उससे सवाल करता है। "तुम्हारा शरीर काहे से जीवित है ? लड़का कहता है "अन्न से"। मास्टर पूछता है 'कहाँ के अन्न से ? लड़का जवाब देता है "जापान के अन्न से ?" मास्टर फिर कहमें है, "तब यदि जापान में अन्न न होता, तो तुम्हारा शरीर जीवित (जिन्दा) नहीं रह सकता ? लड़का जवाब देता है "नहीं, नहीं रह सकता"। तब मास्टर कहता है' जब तुम्हारा शरीर जापानी अन्न से बना है, तो क्या जापान को अखत्यार है कि जब उसको जरूरत हो, तब वह तुम्हारा शरीर ले ले ?" लड़का बहादुरी से जवाब देता है "हाँ जापान को अखत्यार है, जब चाहे हमारे शरीर को ले सकता है।" इस प्रकार अपने देश के लिए हर वक्त प्राण देने को तैयार रहने की जापानी बालकों को पहले ही शिक्षा दी जाती है यह उसी शिक्षा का फल है कि जापान ने "रूस" जैसे प्रबल राज्य को ऐसी भारी हार दी है। हिन्दुस्तानियों को भी अपने बालकों को पहले ही से ऐसी शिक्षा देनी चाहिए। जिससे उनका देशानुराग, उनकी देश भक्ति ऐसी प्रबल हो जाय कि समय पड़ने पर वे अपने देश के लिऐ प्राण देने को तैयार रहें। शिक्षा का यही पहला सबक पहले-पहले बालकों को देना चाहिए।

पहले अपने देश वालों के साथ प्रेम तथा शान्तिपूर्वक बरताव करना यह उनकी दूसरी शिक्षा होनी चाहिए। स्कूलों ही में ऐसी शिक्षा देने का प्रबन्ध करना चाहिए। यदि स्कूलों में लड़के आपस में नहीं लड़ना सीखेंगे और प्रेम से रहेंगे, तो जवान होने पर वे एकाएक अपने देश वालों से नहीं लड़ेंगे' और प्रेमपूर्वक वर्ताव करेंगे। अमेरिका में इस प्रकार का बड़ा अच्छा प्रबन्ध है। अमेरिका में एक बार एक स्कूल के लड़कों में आपस में लड़ाई हुई बहुत कुछ मार पीट हुई, उसी वक्त प्रिंसिपल को खबर दी गई। प्रिंसिपल आये। उन्होंने न किसी लड़के का बयान लिया और न किसी को धम-काया। आते ही बाजे बजवाने शुरू किये, शान्ति के गीत गवाये। पश्चात् लड़कों को बुलाया, और झगड़े का कारण पूछा और यह दर्याफ्त किया कि किसकी शरारत से यह झगड़ा पैदा हुआ। लेकिन आश्चर्य (तअज्जुब) है, जिन लड़कों में थोड़ी देर पहले लट्ठ चले थे, उनकी जबान से अब किसी की भी शिकायत नहीं निकली इसका कारण क्या था।? प्यारो ! इसका कारण वह बाजा और गीत थे। उनको पहले जो क्रोध हुआ था, वह बाजा और गीत सुनकर शान्त हो गया यदि प्रिंसिपल आते ही

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उनके बयान लेने शुरू करते, तो इस लड़ाई का नतीजा शान्ति में खतम न होता। एक लड़का दूसरे को कसूरवार ठहराता और अवश्य ही लड़के कसूरवार निकलते। और सम्भव था कि इसका नतीजा यह होता कि कुछ लड़के स्कूल से निकाल दिये जाते, वे उन लड़को के हमेशा के लिए जानी दुश्मन (घोर शत्रु) हो जाते, उनके विरुद्ध गवाही देते। खयाल करने से इसका नतीजा बहुत बुरा पैदा हो सकता। यहाँ तक कि देश में अशान्ति फैल सकती है।

तीसरी बात लड़कों को डराना-धमकाना नहीं चाहिए। लड़कों को डराना–धमकाना बड़ी बुरी बात है। इससे लड़के डरपोक और कमजोर हो जाते हैं। हिन्दुस्तान में डराना–धमकाना बुरे लड़कों को नेक बनाने की चेष्टा है। परन्तु ऐसा करना ठीक नहीं है। लड़कों को नेक बनाने के लिए सबसे उमदा मार्ग यह है कि उनकी नज़रों में कोई बुरी बात नहीं गुज़रनी चाहिए और वीर तथा पुष्ट बनाने के लिए उनको पूरी स्वतन्त्रता देनी चाहिए। जापान में बालकों की ऐसी स्वतन्त्रता है कि वैसी स्वतन्त्रता कहीं नहीं देखी गई। वहाँ बालकों को खेलने के लिए कोई मुकर्रर जगह नहीं है। जहाँ उनकी खुशी होती है, वहाँ वे बेरो-टोक खेलते है। चाहे वह आम जगह हो या खास, बाजार हो या गली, जहाँ उनकी मरज़ी हो, वहाँ उनको कोई रोक नहीं सकता है। यहाँ तक कि वे यदि बाजार में खेलते हों और कारणवशात् वहाँ के बादशाह की गाड़ी उधर हो के निकलने वाली हो, तो मजाल नहीं है कि कोई उनसे कह दे कि "खेल बन्द करो, बादशाह आते हैं।" जब तक वे स्वयं अपना खेल बन्द नहीं करते, तब तक मिकाडो भी अपनी गाड़ी खड़ी रखेंगे। यही कारण है कि जापानियों के दिलों में भय का नाम निशान भी नहीं है।

चौथी बात यह है कि बालकों को जो कुछ पढ़ाया जाय, वह अमल में भी लाना सिखलाया जाय। हिन्दुस्तान में इस बात की बड़ी कमी है। हिन्दुस्तानी स्कूलों में जो कुछ पढ़ाया जाता है, वह अमल में लाना नहीं सिखाया जाता है। इसलिए हिन्दुस्तानी बालक युवा होने पर कानूनी जमा खर्च तो बहुत कर देते हैं। पर असली कार्यवाही कुछ नहीं कर सकते।

पाँचवीं बात यह है कि जिस विषय की ओर बालक प्रवृत हो वही विषय उसको विशेष रूप से पढ़ाया जाय। क्योंकि ऐसा करने से वह अधिक उन्नति कर सकेगा। हिन्दुस्तान में इस मुख्य प्रयोजनी बात की ओर कोई ध्यान नहीं देता। यदि किसी बालक को वकालत प्रिय है, तो माँ-बाप उसको इजींनियरिंग पढ़ने का अनुरोध करेंगे। यदि गणित शास्त्र को ओर उसकी रूचि है। तो उसको इति–हास पढ़ने के लिए कहेंगे, और यदि उसकी चित्त-वृत्ति साइंस की ओर है, तो उसे साहित्य पढ़ावेंगे। अब यह विचार करने की बात है कि जिस विषय की ओर बालक की रुचि ही नहीं, उस विषय में वह क्यों कर तरक्की कर सकता है। सुतरां बालकों की शिक्षा पर विशेष ध्यान देना चाहिए। बालकों पर ही देश की भावी भलाई का भरोसा है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक बात जो केवल हिन्दुस्तानियों में दूसरे देशों से बढ़कर अभी तक पाई जाती है। वह योग विद्या है। पर अब अमेरिका आदि देश इससे खूब उन्नति कर रहें हैं। और हिन्दुस्तानी भूल रहें हैं। अमेरिका में एफ० एमरसन साहब ने, जो जंगलों में रहता था, योग विद्या में इतनी उन्नति की है। आश्चर्य होता है। वह मोहन को बदलकर गोपाल कर सकता है। स्थल को जल, ये सब करामातें वह योग विद्या से करता है, जादू से नहीं और अब आशा है कि वे लोग योग विद्या में हिन्दुस्तानियों से बढ़ जायेंगे। सो प्यारे हिन्दुस्तानियो ! आपको सम्भलना चाहिए। पहले-पहल विद्या रूपी सूर्य का प्रकाश यहीं हुआ था। बाद को यहाँ से अरब, मिश्र, रोम, यूनान होता हुआ इंगलैण्ड पहुँचा था। वहाँ से अमेरिका होता हुआ जापान पहुँच गया। अब जापान से उसकी किरणें इधर झुकती हुई दिखलाई देती हैं।

अब आप सचेत हो जाओ। ऐसा न हो, यह सूर्य पश्चिम को ढुलक जाय और आप सोये के सोये ही रह जायँ। उठो और उठाने का प्रयत्न करो। सब अपने-अपने कर्तव्यों पर लगो और अपने देशवासियों को कर्तव्य बतलाओ। सूर्योदय के पूर्व ही अपने देशोन्नति रूपी कर्तव्यों को स्थिर कर लो। एक क्षण, एक पल भी व्यर्थ न खोओ। यदि सोच विचार में ही पड़े रहोगे, तो सूर्य पश्चिम को चला जायगा, फिर आपसे कुछ करते धरते नहीं बनेगा।

❀ ज्ञानी की तृप्ति ❀

खुले ज्ञान चक्षु से देखा जिधर है।
उधर मैं ही मैं हूँ वहाँ कुछ न फिर है॥
न बनने बिगड़ने का कोई जिकर है।
न जीने की इच्छा न मरने का डर है॥
न अच्छे बुरे की रही अब नजर है।
नफा और नुकसान में भी सबर है॥
हुआ सारा संसार अब बे कदर है।
न मिलने बिछुड़ने में कोई उजर है॥
गये सर्व चिन्ता से 'विज्ञान' तर है।
समझ आपको हो गई बे फिकर है॥

—स्वामी विज्ञानानन्द

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

❀ भाषण ❀

ब्रह्मलीन श्री स्वामी हरिॐ जी महाराज

जैसे सूर्य का अन्त नहीं वैसे उसकी किरणों का भी अन्त नहीं वह भी नित्य है। यदि इस बात को ले लिया जाय कि जीव परमात्मा का एक अंश है तो अंश अंशी से भिन्न नहीं होता। मूल केन्द्र हर वस्तु रखती है —

Mechanieal Theary (मैकैनिकल थ्योरी) के अनुसार यह बातें बताते हैं कि Mechanical engineers. (मैकैनिकल इन्जीनियर) ने सिद्ध किया है कि हर चोज अपने centre. (केन्द्र) के गिर्द घूम रही है। एक आदमी अपने परिवार को Centre (केन्द्र) बनाए घूमता है और एक सन्त परोपकार को Centra (केन्द्र) बनाए दुनिया भर में घूम रहा है।

देखो ! एक मनुष्य दिल्ली जाता है। उसका मुख्य काम (व्यापार) है। परन्तु समय मिल जाय तो सिनेमा भी देख लेता है। यह उसका गौण कार्य है। परन्तु सन्तों का उलटा हिसाब होता है। स्वामी राम के सिद्धान्तों को फैलाना तो मुख्य कार्य था और परिवार को पालना गौण कार्य।

आध्यात्मिक विद्या का प्रचार भी एक मिशन है। अभय पद का ढिंडोरा पीटने महापुरुष आये।

दत्तात्रय भगवान को आत्म साक्षात्कार करने का ध्यान लगा था। पास में जहाँ वे समाधि लगाये बैठे थे। एक बगुला एक टाँग उठाये मछली के शिकार का ध्यान लगाये बैठा था। बाजों की आवाज सुनते ही दत्तात्रय की वृति झट उठ जाती है। विचार करते हैं, हे बाज ! देख ले थोड़ी देर। आँख खोलते हैं तो अचानक देखते हैं कि बगुले को अपने शिकार पर ही नजर है। झट से बोल उठते हैं तू मेरा गुरु हुआ। मेरी भगवान की प्राप्ति के लिए इन्द्रियाँ निश्चल नहीं और तू ही धन्य है जो तेरी वृत्ति शिकार पर ही लगी हुई है।

वृति धीरे धीरे ऊपर को न जावे तो आत्मा के शिखर पर नहीं पहुँचेगी। पत्थर को पहाड़ से नीचे गिराओ फट कर गिर जावेगा। परन्तु उसी पत्थर को चढ़ाने में कितना पसीना आता है। गिरी वृति को फिर से लगाना है। यह धर्म है। मकान को गिराने के लिए दो मजदूर काफी हैं, पर बनाने के लिए काबिल इन्जीनियर। इसी तरह हमारी वृति को बनाने के लिए सन्त महात्माओं की जरूरत है। पर गिरते वक्त नहीं लगता। दरवाज साहिब में एक कारीगर तीन घन्टों में एक ईट धरता हैं और पाँच रुपये लेता हैं। जहाँ यह ईंट जुड़ेगी देखकर कितना खुश होगा परन्तु उसी बने ढाँचे को गिराते पल नहीं लगता। गिरा देख उसे कितना खेद होगा। इसी तरह तुम्हारी वृतियों को बनाया जाता है। इतने वर्षों के बाद जाकर कहीं एक दो ईटें लगती हैं, तो तुम्हारे सम्बन्धी एक ही सेकेण्ड में खत्म कर देते हैं। बचना बड़ा मुश्किल है और गिरना आसान, रूह को मुर्दा करने वाले हजारों हैं और शक्ति देने वाला कई हजारों में से स्वामी राम जैसा कोई एक। आत्महत्यारे हैं हम, आत्मविचार न करने की जिज्ञासा से मृतक हैं हम। अरे भोले ! जीवात्मा तो सदा अमर है। तू मरा कहाँ है। दुनियादारों ने यही शिक्षा दी कि तू

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मरने वाला है। महापुरुष जिन्दा कर देते हैं। स्वामी राम इन्हीं इच्छाओं को देने के लिए भगवान् वेद व्यास की तरह अवतीर्ण हुए। साइन्स के दलीलों को लेकर और वैदिक विचारों को ले यही बताया गया है कि आत्मा अजर है, अमर है। स्वरूप को पहचानना है। एक बात विचार में रखिये कि जब हमें मसूरी जाना हो तो रास्ते में पड़ाव तो आयेंगे ही। इसी तरह विवेक, वैराग्य षट् सम्पत्ति वगैरा साधनों के लिये परम ध्येय को नहीं भूल जाना।

मुझसे एक भगत ने पूछा — आगे भी तो चलोगे या इसी मन्त्र पर टिके रहना है। मैंने कहा अरे भाई! तुम्हें तो मैंने वह मन्त्र दिया जो नारद ने ध्रुव को दिया था और उसे साक्षात् विष्णु भगवान् के दर्शन हुए। मेहनत से हर कोई डरता है। साधन करते करते सड़क हमारा लक्ष्य नहीं। लेकिन सड़क पे चलते चलते लक्ष्य पे हमने पहुँचना है। राम कहते हैं— हमेशा साधक बने रहो। सिद्ध बनने की कोई जरूरत नहीं। मेरी जब स्वयं दास वृत्ति थी तो बड़ी आजादी थी। उन्नति होती थी, परन्तु स्वामी पद पर उन्नति समाप्त हो गई। मैं तो यही कहता हूँ— स्वामी न बनना, दास ही बने रहना। परन्तु यह कभी हो ही नहीं सकता कि दास स्वामी न बने। यह तो बिल्कुल स्वाभाविक चीज है। लड़की एक दिन माँ बन ही जाती है। अजर, अमर, मोक्ष पद को प्राप्त करना है तो साधना की बड़ी आवश्यकता है।

निराकार से ब्रह्मा, ब्रह्मा से विष्णु ..... होते सृष्टि का निर्माण हुआ। जीव को फिर एक दिन अपने ब्र स्वरूप में लीन तो हो ही जाना है। अन्तःकरण की शुद्धि का नाम माया है, जीव धीरे धीरे ब्रह्म कोटि में पहुँचता है। एक किरण को चन्द्रलोक, इन्द्रलोक इत्यादि से गुजरते गुजरते मृत्युलोकमें आना ही है। 'एकोऽहं बहुस्याम: प्रजायते' लो साधन नहीं करते, बातों बातों के ब्रह्मज्ञानी रह सकते हैं, अनुभव में नहीं।

एक भक्त से मैंने पूछा— सत्संग में क्यों नहीं आते? वह समझने लग गया था मैं आत्मा हूँ। हनुमान जी की तरह समझना चाहिए। किसी ने पूछा— मेरे से कितना प्यार करता है? उसने उत्तर दिया— अपने दिल मे पूछ कर देख ले। तू रोता है, बिलखता है कि जिसको तू प्रेम करता है, वह भी तेरे को प्यार करता है या नहीं? अरे! तेरी तड़प उसी से पैदा हुई। यह ख्याल मत भूलो कि पहले राम को ही तुम्हारी याद हुई थी। तभी तुमने उसे याद किया। गुरु नानक जी भी कहते हैं— "सोई जाने जिसे आप जनाई।" यह सारी फिलासाफीकल साइन्स है। राम की सेना को तो स्वर्ग जाना ही था। पर रावण की सेना भी क्यों स्वर्ग गई?

रावण की सेना सोचती थी— वह राम है, उसे तीर मारना है। ऐसे मेरा ध्यान करते हैं— वह स्वर्ग के अधिकारी हुए। कुल्हाड़ा चन्दन को काटने लग जाता है फिर भी चन्दन उसे अपनी सुगन्ध देता है। कुल्हाड़ा काटते काटते एक दिन कुन्द हो जाता है और वह चन्दन जिसे कुल्हाड़े ने काटा था, महात्माओं के मस्तक पर जा चढ़ता है। देखो, काटा हुआ किस शिखर पर पहुँचा और काटने वाला किस शिखर पर। हम सर्प हैं। सर्प प्यार करता है, चन्दन को नाश नहीं करता।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चन्दन उसे भी सुगन्धि दे देता है, लेकिन परिणाम में चोटें जरूर खानी पड़ती हैं।

मेरे गुरुदेव पूज्य स्वामी गोविन्दानन्द जी महाराज ने सन् १९३७ में शरीर छोड़ गये। मैं उस वक्त २५ वर्ष का था पर मुझे अनुभव नहीं होता था कि वे चले गये, मुझको किसकी शरण जाना है। जो सिर एक बार झुक चुका है वह फिर कब झुकेगा? न्यूयार्क का एडवर्ड लिखता है कि मैं नित्य ही कार पर स्वामीराम के लेक्चर सुनने जाता था। वह एक रिसर्चर था, लिखता है– १९०८ से १९०८ तक एक महावेत्ता स्वामी राम जैसा नहीं हुआ। तब से मैं उनका अनुयायी हूँ।

जहाँ व्यापारी को फायदा न हो, वह काम नहीं करता। इसी तरह हम भी जहाँ श्रद्धा न हो, नहीं जाते। प्रेम न हो तो वह स्वामी हमारा (स्टीयरिंग) कभी इधर न घुमावे।

साधन को न भुलाओ। साधन करते करते मानव सिद्ध हो जाता है। जब तक साधन में अधूरा है साधन परिपक्व नहीं, किसी न किसी रूप में प्रभु शक्ति भेंट करता रहता है, जो उपदेश ले लिया है, यही कल्याण करने वाला है निश्चय होना चाहिये। स्वामी राम जैसा दिव्य प्रसन्न चित्त महात्मा दुनिया भर में न हुआ। इतने उच्च कोटि का लड़पकर कर हम! हाय! हाय करते हैं। क्या लक्ष्य पर पहुँचेंगे कभी? यह सोचते है। अपने विश्वास अटल कीजिए। बल्कि छत से नीचे जितनी पिलरें खड़ी कर सको, करो। खूब मजबूत बना दो।

काक भुशुण्डि जी ने भजन के बल से कहा— "महा प्रलय में भी मैं जीवित रहता हूँ। अभी तक राम हाल नहीं बना, केवल विश्वास की कमजोरी है। दृढ़ प्रतिज्ञा कीजिये। जिसका धर्म कमजोर है, उसका जीवन कमजोर है। देखो, सुबह ठण्डी ठण्डी हवा में सोये बच्चे को जब माँ उठाती है, तो बेटा रोता जरूर है। पर माँ हिचकोले देती है व कहती है— "उठ", हम भी तुम्हारा भला चाहते हैं। आयु रूपी सूर्य सब का ही समाप्त होने वाला है, लेकिन हम कहीं भगवान् की कृपा से वञ्चित न रह जायें, माँ के गर्भ में फिर जन्म न लेना पड़े। वह तड़प—वह प्यार, वह लगन—वह इश्क पैदा हो जाना चाहिये।

स्वामी रामकृष्ण परमहंस का नाम एक विवेकानन्द ने अमर कर दिया, मोतीलाल का एक जवाहर ने, एक भी सच्चा राम भक्त हो जाये तो और क्या चाहिये।

प्रश्न— स्वामी राम ने कैसे शरीर छोड़ा?

मानसिक साइन्स वालों ने यह सिद्ध कर दिया था कि "यह पुरुष देर तक जीवित नहीं रह सकता, यह शरीर से उठा रहता है।" यह हस्तियाँ देर तक नहीं रह सकतीं। राम ने गंगा से निकलने की कोशिश की, परन्तु उसी समय गोडे पर चोट आ जाने के कारण बर्फानी पानी से जब न निकल सके तो वहीं पर पद्मासन लगा कर ६०, ८० चक्कर आते हैं, जल बहा ले जाता है। वे आखिरी पृष्ठ पर लिखते हैं— राम जब शरीर छोड़ेगा, अपनी इच्छा पर। एक और जगह राम ने लिखा— अब राम सोने-चाँदी के सलाखों में रहेगा। सूर्य, चाँद, सितारागणों में चमकेगा। मैनेजर किसी से छुट्टी थोड़े लेता है। क्लर्क को १० से ६ तक काम करना पड़ता है। राम के तो दिव्य कर्म, दिव्य जन्म और दिव्य ही मरण था। पर दिव्य रूहें काम के लिये आती हैं। इन्होंने आत्महत्या नहीं किया। उनकी तो कुण्डली बता रही है— ३३–३६ वर्ष में जल से भय है। शरीर तो प्रारब्ध भोग के अनुसार चला ही जाता है। ज्ञानी का हो, चाहे अज्ञानी का।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अनमोल रत्न !

दीपो भक्षयते ध्वातं कज्जलं च प्रसूयते ।
यदन्नं भक्षयेन्नित्यं जायते तादृशी प्रजा ।।

(चाणक्य-नीति ८ । ३)

अर्थ :— दीपक अन्धकार का भक्षण करता है और परिणामस्वरूप काजल को उत्पन्न करता है। इसी प्रकार मनुष्य जैसा अन्न खाता है, वैसी ही उसकी बुद्धि और सन्तानें होती हैं।

दृष्टिपूतं न्यसेत्पादं वस्त्रपूतं पिवेज्जलम् ।
सत्यपूतं वदेद् वाचं मनःपूतं समाचरेत् ।।

(श्रीमद्भागवतम् ११ । ८ । १६)

अर्थ :— मनुष्य को आगे देख कर पैर रखना चाहिए, कपड़े से छान कर जल पीना चाहिए, सत्य से पवित्र हुई वाणी बोलनी चाहिए और पवित्र मन से विचार कर आचरण करना चाहिए।

हीयते हि मतिस्तातः हीनै सह समागमात् ।
समैश्च समतामेति विशिष्टैश्च विशिष्टताम् ।।

(सुभाषितरत्नभाण्डागारम् ८६ । ९)

अर्थ :— हीन मनुष्यों के सम्पर्क में आने से बुद्धि हीन हो जाती है, समान कोटि के मनुष्यों के सम्पर्क से बुद्धि समान रहती है और विशिष्ट पुरुषों के सम्पर्क में रहने से बुद्धि विशिष्ट होती है।

ड् दोषाः पुरुषेणेह हातव्या भूतिमिच्छता ।
निद्रा तन्द्रा भयं क्रोध आलस्य दीर्घसूत्रता ।।

(महाभारत ५ । ३३ । ८३)

अर्थ :— अपनी उन्नति चाहने वाले मनुष्य को इन छः दोषों का त्याग कर देना चाहिये— अधिक सोना, तन्द्रा, भय, क्रोध, आलस्य और दीर्घसूत्रता यानी थोड़े समय में होने वाले काम को अधिक समय तक करन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साधन बड़ा या साहस ?

साधन बड़ा या साहस, इसका निर्णय ढूँढने के लिए नारवे के एक उत्साही युवक थोर हेयर डेहले ने एक उदाहरण लोगों के सामने प्रस्तुत किया। उपदेश करने की अपेक्षा यह तरीका उसे अच्छा लगा कि उदाहरण प्रस्तुत करके लोगों को अपनी स्वतन्त्र चेतना द्वारा किसी निर्णय पर पहुँचने का अवसर दिया जाय। यह उत्साही युवक साहस को प्रधान मानता है और कहता है साहसी या तो साधन प्राप्त कर लेता है अथवा न्यूनतम साधनों से भी आगे बढ़ने और सफलता पाने का रास्ता निकाल लेता है।

थोर का प्रयोग यह था कि 'सरकंडे' की नाव के सहारे भी कठिन दीखने वाली लम्बी समुद्र यात्रा सफलतापूर्वक सम्पन्न की जा सकती है। इस लोहे विशालकाय यन्त्र सज्जित जहाजों के जमाने में सरकंडे जैसे दुर्बल साधनों से बनी नाव की क्या तुलना हो सकती है। पर उसके उपयोग से यह तो साबित किया ही जा सकता है कि मनुष्य का पुरुषार्थ और मनोयोग इतना प्रबल है कि साधन न होने पर भी उसके द्वारा साधन सम्पन्नों जैसे कर्तृत्व दिखाये जा सके।

नारवे के उपरोक्त युवक ने इथोपिया की कैडझील में काम करने वाले मछियारों की सहायता से पहली सरकंडों से बनी नाव बनाई। यह उतनी अच्छी नहीं बनी और अपना लक्ष्य पूरा न कर सकी। वह ४३५२ मील चलकर अतलांतिक सागर में अपना दम तोड़ गई। पर इससे थोर निराश नहीं हुआ। आरम्भिक असफलताओं से उसका मन जरा भी छोटा नहीं हुआ। हिम्मत हारने की तो इसमें बात ही क्या थी। सफलता एक बार के ही प्रयत्न से मिल जाया करे तो फिर उसे कोई भी प्राप्त कर लिया करे ? साहस की परीक्षा तो असफलता की कसौटी पर ही होती है।

हेयर डेहल ने दूसरी नाव लैटिन अमेरिका के बोलोविया क्षेत्र में स्थित नितचाचा झील में काम करने वाले मछियारों की सहायता से बनाई। यह भी सरकण्डों की ही थी। इस नाव में विभिन्न देशों के सात अन्य यात्री भी अपने सामान सहित सवार हुए। १७ मई १९७० को मोरक्को (अफ्रीका) के साफी बन्दरगाह से यह नाव रवाना हुई और १२ जुलाई ७० को दक्षिणी अमेरिका के बारण्डोस क्षेत्र के 'ब्रिज' टाउन बन्दरगाह पर पहुँची।

इस यात्रा में भी थोर दल को कई बार समुद्री तूफ़ानों और विशालकाय जल जन्तुओं से टकराना पड़ा। कठिन दिनचर्या को अपनाये बिना तो यह यात्रा हो ही नहीं सकती थी। थोर कितने ही स्थानों से समुद्र जल के नमूने भर कर लाये और उन्होंने संयुक्त राष्ट्र संघ को यह नमूने प्रस्तुत करते हुए कहा कि समुद्री जहाज जिस कदर समुद्र के तल पर विषाक्त चिकनाई छोड़ रहे हैं उसके फल-स्वरूप कुछ ही दिन में समुद्री जल जीवों पर संकट उत्पन्न हो जायगा और बादलों में वह विषाक्त अंश मिल कर सार्वजनिक स्वास्थ्य के लिये हानिकारक सिद्ध होगा।

सरकण्डे की नाव ने अपनी यात्रा का उद्देश्य पूरा कर लिया। अब उसे ओसलो (नारवे) के कोनटिकी संग्रहालय में इसलिए सुरक्षित रखा गया है कि दर्शक साधनों के अभाव में भी साहस की प्रबलता का महत्व समझ सकें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रवचन

ब्रह्मलीन श्री स्वामी गोविन्दप्रकाश जी महाराज

ओंकार विन्दु संयुक्तं नित्यं ध्यायन्ति योगिनः ।
कामदं मोक्षदं चैव ओंकाराय नमोनमः ।।

जनता जनार्दन के रूप में मेरी प्रिय आत्माओ ! यह केवल मानव मात्र का ही सौभाग्य नहीं, अपितु सारे देश का सौभाग्य है। जिस देश के अन्दर ऐसी विभूतियों की पुण्य-स्मृतियाँ मनाई जाती हैं। जहाँ पर देश के आदर्श व्यक्ति, देश के संचालक, देश को वास्तविक राह पर लाने वाले हैं। ये लोग समय-समय पर अपने मनोभावों के अनुसार शास्त्र के अन्दर के सिद्धान्तों को सुना कर देश की जनता को कृतकृत्य करते थे। सबसे पहले मनुष्य अपनी हैसियत पहचान ले, उत्तम तो यह है कि पहले शक्ति को पहचान ले, जिस कलेवर का अभिमान कर रहा है उसको पहचान ले। उसके बाद जब अपने कलेवर को पहचान जायेगा, तो हो सकता है कि जिससे समस्त ब्रह्माण्ड प्रकाशित हो रहा है, उसे भी पहचान ले। पुत्र ने माँ को बताया कि मुझे चन्द्रमा दिखा दो। माँ ने पहले सामने के वृक्ष को दिखाया, फिर एक विशेष शाखा को। फिर शाखा के पत्तों के बीच में उस चन्द्रमा को दिखा देती है और उसे वह नजर पड़ जाता है। जिस तरह चन्द्रमा को दिखाने में हम बच्चे की निगाह को कई चीजों से पार करके चन्द्रमा को दिखा देते हैं और बच्चा आसानी से देख लेता है, उसी प्रकार पंच भौतिक शरीर की स्थिति को हम पहचान जायँ, तो जिस सत्य से यह जगत् प्रकाशित हो रहा है उस तक भी मेरे को पहुँचने में विलम्ब नहीं। यह शरीर किसी का अजर-अमर नहीं रहा। बड़े-बड़े राजा महाराजा आये और आकर नष्ट-भ्रष्ट हो गये—

कह रहा है आसमाँ यह सब समाँ कुछ भी नहीं,
जिनके महलों में हज़ारों रंग के फ़ानूस थे।
घास उनकी क़ब्र पर बाक़ी निशाँ कुछ भी नहीं,
तख़्तवालों का पता देते हैं बाक़ी निशाँ कुछ भी नहीं ।।

यह शरीर तेरा अवलम्बन नहीं, शरीर की रक्षा करना केवल तेरा धर्म नहीं है। दुनिया तेरा लक्ष्य नहीं है। इस शरीर के अन्दर जो प्रकाश रहा है, उसे पहिचानो। "न तत्र सूर्यो भाति न तारकम्", "सर्वं हृदये विभाति" नचिकेता को उपदेश देते हुए कहते हैं कि तू स्वर्गलोक, यहाँ तक कि ब्रह्मलोक का भी जो पदार्थ माँगे, वह मिल सकता है। नचिकेता ने कहा—नहीं। मुझे स्वर्गलोक, ब्रह्मलोक आदि विश्व के किसी भोग-विलास की इच्छा नहीं। तुम मुझे उस आत्मा का उपदेश दो जिसके प्रकाश को लेकर सूर्य-चन्द्रमा भी सारे संसार को प्रकाशित कर रहे हैं। वही तेरा स्वरूप है। ऐ प्रभु प्रेमियो ! आप संसार के अन्दर जिस सुख की खोज में लगे हुए हैं, वह शारीरिक अभिमान से प्राप्त नहीं हो सकता। मनु ने कहा है कि 'क्यासी इति पुरुषः'। अगर व्यक्ति अपने स्वरूप को पहचान ले कि मैं वास्तविक सच्चिदानन्द हूँ। जितने प्राणियों में यह आत्मा प्रकाशित हो रही है, वह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मेरी आत्मा है। "तत्र कः मोहः कः शोकः"। जो व्यक्ति समस्त प्राणियों के अन्दर रहने वाली आत्मा को अपनी आत्मा समझता है और अपने अन्दर रहने वाली आत्मा को संसार की आत्मा समझता है, वह अपने स्वरूप में स्थित है। वहाँ पर मोह-शोक नहीं हो सकता। गरमी का मौसम है। एक लकड़हारा जंगल के अन्दर से लकड़ियों को काट कर गट्ठा सर पर रख कर आता है। दो बज चुके हैं, लकड़ियों का ढेर एक वृक्ष के नीचे रखता है। प्यास ने उसे व्याकुल कर दिया। जलाशय के पास पानी पीने गया, तो देखता क्या है कि एक हीरा चमक रहा है। पहले उसने अपनी प्यास बुझाई। फिर हीरे के लोभ ने उसे व्याकुल कर दिया। उसने सोचा कि गोता लगा कर जवाहिरात प्राप्त कर ले और जीवन भर की दरिद्रता से मुक्त हो जाये। लँगोटी लगा कर उसने गोता लगाया और शाम तक लगाता ही रहा, परन्तु हीरा उसके हाथ में न लगा तब हताश होकर बैठ गया।

महर्षि याज्ञवल्क्य जी उपदेश दे रहे हैं कि दुनिया की किसी वस्तु के द्वारा उस आत्मा की प्राप्ति नहीं हो सकती। वह केवल अनासक्त कर्मों और त्याग से प्राप्त हो सकती है। भगवान् कृष्ण ने अर्जुन को संन्यास और त्याग की परिभाषा इन दो शब्दों में गीता में बताई है :—

"सर्व कर्म फल त्यागं संन्यासं कवयो विदुः।"

यदि कोई अपनी अहंता, ममता का परित्याग कर चुका है, तो वह सच्चा त्यागी है। जिसने यह कहा कि मैंने इस वस्तु को छोड़ा, उस वस्तु को छोड़ा; उसने कुछ नहीं छोड़ा। लकड़हारा हिम्मत हारकर पेड़ के नीचे बैठ गया। वहाँ पर घूमते हुए ऋषि, महर्षि, तत्ववेत्ता आ गये। उन्होंने पूछा— ऐ पुत्र ! तेरी आँखों पर उदासी क्यों छाई हुई है ? कारण क्या है ? उसने महात्मा जी को सारा हाल कह सुनाया। महात्मा जी ने कहा— जा सावधान हो जा ! अब तुझे मैं उस वस्तु का उपदेश देना चाहता हूँ जिसका यमराज ने नचिकेता को उपदेश दिया था। महात्मा जी की आज्ञा का पालन करना मनुष्य का कर्तव्य है। यदि महात्मा जी की आज्ञा को स्वीकार करेगा, तो लाभ होगा। वे बोले जिस वृक्ष के नीचे तू बैठा हुआ है उसके ऊपर चढ़ना। जिस टहनी के ऊपर एक पक्षी का घर बना हुआ है वह रतन उसी घोंसले के अन्दर मौजूद है। इस प्रकार लकड़हारा उस टहनी के पास जाता है और उस चमकते हुए हीरे को लेकर उस महात्मा के चरणों में गिर गया और कहने लगा कि मैं तो उसके प्रतिविम्ब को जो नदी पर पड़ रहा था, देख रहा था और उसे पाने के लिए हजारों गोते लगाए और कई घंटों तक परेशान रहा। इसे आप अपने जीवन में घटाइए।

ऐ विषय-विकारों में सुख, शान्ति ढूँढने वालो ! वास्तविक सुख, शान्ति की खोज करो और समझो तथा उसे प्राप्त करो, जिसके लेषमात्र को लेकर यह समस्त विश्व सुखाभास मालूम पड़ता है। वास्तविक आनन्द उस सच्चिदानन्द को अपने स्वरूप के पहचानने में है। जैसे यह शरीर प्रकाशित हो रहा है, इन्द्रियाँ प्रकाशित हो रही हैं; उसको जानने के लिए, उसके वास्तविक ज्ञान के लिए सद्गुरु की शरण पकड़ो और अपना कल्याण करो।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हरिनाम

डॉ० श्री नीरजाकान्त चौधुरी देवशर्मा, एम्० ए०, एल–एल० बी०

आज कलियुग के प्रचण्ड ताण्डव की नाना प्रकार की विडम्बनाओं के बीच परम पुरुष वासुदेव को पाने का क्या कोई उपाय है ? यह प्रश्न सबके सम्मुख है। इसका उत्तर शास्त्र एवं सन्त वचनों के आधार पर यह है कि उपाय है, सहज और सुगम है; उसमें अर्थव्यय नहीं होता। अनायास, श्रद्धायुक्त होकर, चलते–फिरते, बैठते–उठते, खाते–पीते, सोते–जागते, जिस—किसी अवस्था में हो, जिह्वा की सहायता से श्री भगवान् का नाम–जप या कीर्तन, उनका चित्रदर्शन या लीला–ध्यान, कान की सहायता से नाम–श्रवण सहज उपाय है।

कलेर्दोषनिधे राजन्नस्ति ह्येको महान् गुणः ।
कीर्तनादेव कृष्णस्य मुक्तबन्धः परं व्रजेत् ॥
(श्रीमद्भा० १२ । ३ । ५१)

श्री शुकदेव जी कहते हैं— 'हे राजन् ! दोषों के आकर कलियुग में एक महान् गुण यह है कि कृष्ण नाम-कीर्तन के द्वारा मनुष्य सारे बन्धनों से मुक्त होकर परम धाम में गमन करता है ।'

कृते यद्ध्यायतो विष्णुं त्रेतायां यजतो मखैः ।
द्वापरे परिचर्यायां कलौ तद्धरिकीर्तनात् ॥
(श्रीमद्भागवत १२ । ३ । ५२)

'सत्ययुग में विष्णु के ध्यान से, त्रेता में यज्ञ के द्वारा, द्वापर में परिचर्या के द्वारा—अर्चना से जो फल होता है, कलियुग में अविकल वही फल श्रीभगवान् के नाम-कीर्तन के द्वारा प्राप्त होता है ।'

ध्यायन् कृते यजन् यज्ञैः त्रेतायां द्वापरेऽर्चयन् ।
यदाप्नोति तदाप्नोति कलौ संकीर्त्य केशवम् ॥
(विष्णुपुराण ६ । २ । १७)

व्यास जी कहते हैं— 'सत्ययुग में अति क्लेश-साध्य ध्यानयोग के द्वारा, त्रेतायुग में नाना प्रकार के यज्ञों के अनुष्ठान के द्वारा और द्वापरयुग में बहुत पूजा–अर्चा आदि के द्वारा जो फल प्राप्त होता है, वही फल कलियुग में हरिनाम–कीर्तन के द्वारा मनुष्य प्राप्त कर सकता है।

यत्कृते दशभिर्वर्षैस्त्रेतायां हायनेन तत् ।
द्वापरे तच्च मासेन ह्यहोरात्रेण तत्कलौ ॥
(विष्णुपुराण ६ । २ । १५)

'सत्ययुग में दस वर्ष, त्रेतायुग में एक वर्ष, द्वापरयुग में एक मास परिश्रम करके तपस्या, ब्रह्मचर्य अथवा जपादि के द्वारा जो फल प्राप्त होता है, कलिकाल में मनुष्य एक दिनरात की साधना में वही फल प्राप्त कर लेता है।'

विष्णु-नामसंकीर्तन— वैदिक उपासना है

बहुतों की धारणा है कि भगवान् का नाम–कीर्तन सम्प्रदायिक और अर्वाचीन है। निम्नोक्त ऋक्–मन्त्र से उनकी भ्रान्ति दूर हो जायगी—

(क) तमु स्तोतारः पूर्व्यं यथाविद
ऋतस्य गर्भं जनुषा पिपर्तन ।
आस्य जानन्तो नाम चिद् विवक्तन
महस् ते विष्णोः सुमतिं भजामहे ॥
(ऋक्सं० १ । १५६ । ३)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस श्रुति का उल्लेख करते हुए श्रीशंकराचार्य अपने 'विष्णुसहस्रनामों के भाष्य में लिखते हैं—

"श्रुति इत्यादिभिर्विष्णोर्नामसंकीर्तन सम्यग् ज्ञानप्राप्तये विहितम्। तमेव स्तोतारः पुराणं यथाज्ञानेन सत्यस्य गर्भं जन्मसमाप्तिं कुरुत। जानन्तः आ अस्य विष्णोः नामापि आवदत अन्ये वदन्तु मा वा हे विष्णो वयं ते सुमतिं शोभनं महः भजामहे, इति श्रुतेरभिप्रायः।"

इस मन्त्र का अभिप्राय यह है कि 'हे स्तुतिकारीगण! सत्य के सारस्वरूप उस पुराणपुरुष को यथार्थतः जानकर गर्भ (जन्म) की समाप्ति करो। इन विष्णु के नामों को जानकर उनका उच्चारण भी करते रहो। दूसरे उनका कीर्तन करें या न करें, हम तो हे विष्णो! आपके सुन्दर तेज और सुमति का भजन करते हैं।'

(ख) ऋतस्य पदं कवयो निपान्ति गुहा
नामानि दधिरे परांसि।
(ऋक्सं० १०।५।२)

'ज्ञानी पुरुष सर्वोत्कृष्ट भगवन्नामों को हृदय में सत्यरूप में धारण करके रक्षा करे।' प्रतिपल भगवान् का नाम-संकीर्तन करने से ध्रुवा स्मृति का उदय होता है और वह सदा सत्य बोलने के संकल्प को दृढ़ करती है।

शंकराचार्य का नाम-संकीर्तन में पूर्ण विश्वास था। जो लोग समझते हैं कि मध्वाचार्य या महाप्रभु चैतन्यदेव के पूर्व भारत में भागवद्धर्म या नाम-कीर्तन नहीं था, वे भ्रम में हैं।

शंकराचार्य ने अपने विष्णुसहस्रनाम-भाष्य में "पवित्राणां पवित्रं" इस पद की व्याख्या (पद्मस्तु पुमान् ध्यातो दृष्टः कीर्तितः, स्तुतः, सम्पूजितः, प्रणतः पाप्मनः सर्वान्निर्मूलयतीति) में क्रमशः श्रीहरि के चिन्तन, ध्यान, श्रवण, नाम-कीर्तन, स्मरण, प्रणामविषयक श्लोक उद्धृत किये हैं। शंकराचार्य अपने भाष्य में कहते हैं—

"एवमादिवचनैः श्रद्धाभक्त्यारभावेऽपि नामसंकीर्तनं समस्तं दुरितं नाशयतीत्युक्तम्, किमुत श्रद्धादिपूर्वकं सहस्रनामसंकीर्तनं नाशयतीति। 'मनसा वा अग्रे संकल्पयत्यथ वाचा व्याहरति।' यद्धि मनसा ध्यायति तद् वाचा वदति।' इति श्रुतिभ्यां स्मरणं ध्यानं च नामसंकीर्तनेऽन्तर्भूतम्।"

अर्थात् इन वाक्यों द्वारा कहा गया है कि श्रद्धा भक्ति के अभाव में भी नाम-संकीर्तन करने पर सब पाप नष्ट हो जाते हैं। अतः श्रद्धापूर्वक सहस्रनाम-संकीर्तन करने पर पाप-नाश होने में संदेह ही क्या है? उन्होंने वेद से प्रमाण दिये हैं। श्रुति में लिखा है, पहले मन में संकल्प करे, फिर वाक्य द्वारा उसे प्रकट करे। जो मनमें चिन्तन करे, उसे वाणी द्वारा बोले।'— इससे प्रमाणित होता है कि स्मरण और ध्यान भी नाम-संकीर्तन के अन्तर्गत है। मन्त्र-जप भी नाम-संकीर्तन है। शंकर ने अन्यत्र—

हरेर्नामैव नामैव नामैव मम जीवनम्।
कलौ नास्त्येव नास्त्येव नास्त्येव गतिरन्यथा॥

—इस प्रसिद्ध श्लोक को नारदपुराण से उद्धृत किया है। तथापि साधारण रूप से लोगों में विश्वास है कि यह महाप्रभु चैतन्यदेवकृत है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कलि का तारक ब्रह्मनाम महामन्त्र

जितं तेन जितं तेन जितं तेनेति निश्चितम् ।
जिह्वाग्रे वर्तते यस्य हरिरित्यक्षरद्वयम् ॥
(विष्णुधर्मोत्तरपुराण)

जपतः सर्ववेदांश्च सर्वमन्त्रांश्च पार्वति ।
तस्मात् कोटिगुणं पुण्यं रामनाम्नैव जायते ॥
(पद्मपुराण)

कलियुग का तारक ब्रह्मनाम—

हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे ।
हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे ॥

—यह राधातन्त्र और राधाहृदय ब्राह्मण-पुराण में उपदिष्ट है। महाप्रभु श्रीकृष्णचैतन्यने अग्निपुराण और ब्रह्माण्डपुराण से इसका संग्रह किया है। इसमें भगवान् के सोलह नाम हैं। इसके द्वारा षोडशकला-आधृत जीव का आवरण भेद होता है। ब्रह्मा ने—'कलिसन्तरण उपनिषद्' में नारद से—

हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे ।
हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे ॥

—इन षोडश नामों का उपदेश करके कहा है कि 'जापक इस मन्त्र का शुचि या अशुचि, किसी भी अवस्था में साढ़े तीन करोड़ जप करके सद्यः मुक्त हो जाता है। कलि में यह समस्त मानव-जाति का तारक मन्त्र है।'

यहाँ ध्यान देने की बात यह है कि कलि के तारक महामन्त्र में हरि, राम और कृष्ण—ये तीन नाम हैं। इनमें 'हरि' आठ बार, 'राम' चार बार और 'कृष्ण' चार बार आता है। भगवान् के सोलह नाम और किसी मन्त्र में नहीं पाये जाते।

हम लोग परम सौभाग्यवान् हैं, जो हमारा इस कलियुग में जन्म हुआ है। हमने भगवान् श्रीरामचन्द्र और श्रीकृष्णचन्द्र को पा लिया है। जब राम-नाम भूतल पर नहीं था, तब कोई लौकिक काव्य भी नहीं था। जगत् ऊसर, मरुस्थल के समान था।

श्रीराम और श्रीकृष्ण के जीवन में सब कुछ मधुर है। हम उनकी उस मधुर लीला का आस्वादन करके भक्तिरस में आप्लुत हो रहे हैं। भगवान् श्रीकृष्ण केवल पाँच हजार वर्ष पूर्व इस भारतवर्ष में १२६ वर्षों तक उपस्थित रहे।

श्रीपाद रूपगोस्वामी ने विदग्धमाधव'(१।१२) में कृष्ण-नाम की बड़ी ही भावपूर्ण स्तुति की है, जो इस प्रकार है—

तुण्डे ताण्डविनी रतिं वितनुते तण्डावलीलब्धये
कर्णक्रोडकडम्बिनी घटयते कर्णार्बुदेभ्यः स्पृहाम्।
चेतः प्राङ्गणसङ्गिनी विजयते सर्वेन्द्रियाणां कृतिं
नो जाने जनिता कियद्भिरमृतैः कृष्णेति वर्णद्वयी ॥

"कृष्ण'— यह दो अक्षरों का नाम जब मुख में ताण्डव (नृत्य) करता है, तब अनेक मुखों की प्राप्ति के लिये अभिरुचि जगा देता है। (यह इच्छा होती है कि एक की जगह अनेक मुख हो जाते तो कीर्तन का अधिक आनन्द उठाया जाता) जब वह नाम कानों के क्रोड (अङ्क) में अङ्कित होता है, तब अरबों कानों की स्पृहा उत्पन्न कर देता है (अर्थात् यह अभिलाषा होती है कि यदि अरबों कान होते तो उनके द्वारा नामामृत का अधिक पान किया जाता)। जब कृष्ण-नाम हृदय के प्राङ्गण में उतरता है, तो वह सारी इन्द्रियों के व्यापार को बन्द करके स्वयं सर्वोपरि हो जाता है। न जाने ये कृष्ण-नाम के दो अक्षर कितने अमृतों से निर्मित हुए हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लघुकथा—

परछिद्रान्वेषी न बनो !

एक मुनि ने एक त्रिकालदर्शी कौआ पाला था। वह भूत, भविष्य और वर्तमान तीनों कालों की बातें बताता था। मुनि को अपने अलौकिक काक पर बड़ा अभिमान था। उसके बल पर वे स्वयं सर्वज्ञ होकर दूसरों को काक-विद्या का चमत्कार दिखाते फिरते थे। एक दिन वे अपने विचित्र पक्षी को लिए हुए एक महाराजा के दरबार में पहुँचे। वहाँ उन्होंने कौए से राज कर्मचारियों की गुप्त बातों का पता लगाकर राजा के सामने मुख्य-मुख्य अधिकारियों से कहना शुरू किया कि तुमने अमुक स्थान पर चोरी की है, जिसमें अमुक अमुक व्यक्ति भी सम्मिलित हैं। तात्पर्य यह है कि किसी पर उन्होंने धन की चोरी का लांछन लगाया, किसी पर काम की चोरी और किसी पर बात की चोरी का।

कौए ने अपने स्वभाव के अनुसार सबके दोषों का ही निरीक्षण किया था, इसलिए मुनि जी ने सबके दोषों का दिग्दर्शन कराके भरी सभा में सबको लज्जित और अपमानित किया। महाराज ने उनका कौशल देखकर उन्हें धन आदि से सम्मानित करके ठहरा लिया। कौए से पूछ-पूछकर मुनि सबकी पोल खोलने लगे। एक भी छोटा या बड़ा ऐसा राज सेवक नहीं मिला जो निर्दोष हो। मुनि ललकार कर सबसे कहते थे कि मेरी काक-विद्या मिथ्या नहीं, तुम सबके सब चोर हो, झूठे हो, असावधान हो, राजा भी अपने कर्मचारियों की त्रुटियाँ जानकर उनसे रुष्ट हो गया।

रात में जब मुनि सो गये, तो नौकरों ने मिलकर उस परछिद्रान्वेषी कौए को मार डाला। सवेरे मुनि जी उसको मरा पाकर अपना सिर पीटने लगे। उनकी तो मानो आखें ही फूट गईं। वे मरे हुए पक्षी को लेकर महाराजा के पास पहुँचे और बोले— राजन् ! आपके कर्मचारी बड़े दुष्ट हैं, उन्होंने मेरे इस पाप पारखी कौए को मार डाला। यह मर गया है, नहीं तो मैं इससे पूछकर हत्यारों का नाम भी बता देता।

महाराज ने मुनि को सान्त्वना देते हुए उनसे अपना मन्त्री बनने का अनुरोध किया। मुनि बोले—राजन् ! यह संसार ही बुरा है; मैं एकान्त वन में ही सुख से रहूँगा। यहाँ रहने पर कल मेरी भी यही दशा होगी जो आज काक की हुई है।

यह कहकर मुनि वन को चल गये !

(संकलित)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नाम का महत्त्व

श्री धर्मानन्द जी शास्त्री

इस असार संसार में सार वस्तु है तो एक मात्र "प्रभु" है। क्योंकि अन्य वस्तुयें परिवर्तनशील हैं। जो वस्तुयें परिवर्तनशील हैं. वे त्रिकाल में भी सारमय नहीं हो सकती हैं। वे तो सदैव असार ही रहेंगी। अतः सार वस्तु जो परमात्मा है, उसे ही अपनाना चाहिए।

इस वास्तविकता का अनुभव कर के ही परम सन्त श्री शहन्शाह जी महाराज ने कहा है—

हरि सुमिरन बिन हे "शाहन्शाह" सकल वस्तु है छाई।

अर्थात्— बिना भगवन्नाम स्मरण किये जितनी भी वस्तुओं का संचय करते जाओ, सब राख सम ही हैं।

इसलिये यदि मानव जन्म सफल बनाना है और भव-वारिधि से पार होने की वास्तविक इच्छा है तो हरदम, हर घड़ी और प्रतिपल भगवन्नाम को जपते जाना चाहिए। इसी से उद्धार सम्भव है।

स्मरण रहे, जिस जिस ने भगवन्नामरूपी अनमोल हीरे का संचय किया, वह इस युग में धवल-कीर्ति से धवलित हुआ।

अतएव प्रति स्वांस में हरिनाम का स्मरण करें, उससे भूल कर भी विमुख न रहें। इसी में मानव जीवन की सार्थकता है।

भगवन्नाम का बड़ा भारी महत्व है। जिसने इस महत्व को जाना, उसके समस्त पाप नष्ट ही जानो। स्कन्दपुराण में स्पष्ट कह दिया है—

गोविन्देति तथा प्रोक्तं भक्त्या वा भक्ति-वर्जितैः।
दहति सर्वपापानि युगान्ताग्निरिवोत्थितः॥

अर्थात्— जो कोई भक्तिपूर्वक अथवा भक्तिहीन होकर भी भगवन्नाम का जाप करता है, उसके समस्त पाप इस तरह भस्मीभूत हो जाते हैं जैसे प्रदीप्ताग्नि समस्त ब्रह्माण्ड को भस्मसात् कर देती है। गोस्वामी तुलसीदास जी की लेखनी ने भी यही प्रदर्शित किया है कि इस कलियुग में भवसागर पार होने के लिये न जप की आवश्यकता है और न यज्ञ की। केवल राम नाम का जाप ही सार है। यथा—

कलियुग सम युग आन नहिं, जौं नर कर विश्वास।
गाइ राम गुन गन विमल, भव तर बिनहिं प्रयास॥

वास्तव में विवेकबुद्धि से विचार किया जाय, तो इस कलिकाल में नाम-जपन में ही मानव का हित है। परन्तु ऐसा देखने में नहीं आता। क्योंकि आज के मानव की विचित्र स्थिति है। वह मन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में सोचता कुछ है, जिह्वा से कहता कुछ और आचरण करता कुछ और ही। यदि मन-वच-कर्म से जीवन को सही मार्ग पर ले जावे, तो उसमें और भगवान् में तनिक भी भेद न समझें।

मीरा नाम जपने में लगी रही, तो ससुराल वालों के द्वारा विविध यातनायें देने पर भी उसको वे यातनायें सुखरूप में अनुभव होती रहीं। भक्त प्रह्लाद का इतिहास सर्व विदित है।

भगवन्नाम का स्मरण वह औषधि है जिससे कि मानव के शारीरिक, मानसिक और दैविक दुख कूच कर जाते हैं। इसके बिना चौरासी लाख योनियों की बीमारियाँ चिपटी ही रहेंगी। सन्त सूक्ति है :—

बिना हरि नाम के सुमिरे नहीं होवेगा निस्तारा।
न सुमरेगा तो भूले मन फिरेगा मारा ही मारा॥

भगवान् श्रीकृष्ण जी ने तो यहाँ तक कह दिया है कि :—

अन्तकाले च मामेव स्मरन् मुक्त्वा कलेवरम्।
यः प्रयाति सः मद्भावं याति नास्त्यत्र संशयः॥

अर्थात् — जो प्राणान्त समय में भी मेरा स्मरण करते हुए प्राण त्याग करता है, वह मुझे ही प्राप्त होता है। इसमें कोई सन्देह नहीं। अजामिल का जीवन-इतिहास इस भगवदुक्ति का ज्वलन्त उदाहरण है।

अतः जो आत्मकल्याण को चाहता है, वह विशुद्ध और एकाग्र मन से भगवन्नाम का जाप करे; क्योंकि इस कलिकाल में नाम जप पर ही विशेष जोर दिया गया है। यथा :—

हरेर्नाम हरेर्नाम हरेर्नामैव केवलम्।
कलौ नास्त्येव नास्त्येव नास्त्येव गतिरन्यथा॥

भाव यह है कि इस कलियुग में मानव जीवन सफल हो सकता है तो एक मात्र भगवन्नामरूपी औषधि का सेवन करने से ही हो सकता है। यह वह औषधि है जो मानसिक और आन्तरिक राग-द्वेष आदि रोगों को समूल नष्ट कर देती है।

अतः बुद्धिमान मानव को चाहिये कि इस औषधि का सेवन यथाशक्ति अवश्यमेव करे।

—❀•❀—

सारे क्लेशों, दुःखों, शोकों की एक ही दवाई है— प्रभु की शरण ग्रहण करना, उनको भक्ति करना, उन पर पूरा विश्वास रखना।

— स्वामी विवेकानन्द

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अज्ञानता

श्री जयप्रकाश जी

आज के युग में मानव किस ओर जा रहा है, यह जान कर भी सभी अनजान हैं। यह प्रश्न सभी के मानस पटल पर गूंजता है। यदि इस पर विचार करें तो सारी बातें आसानी से समझ में आ जायेंगी।

जिस सर्वशक्तिमान् परमात्मा ने मनुष्य को चोला दिया, नाना प्रकार के साधन मनोरञ्जन के लिए पैदा किये। जब तक मनुष्य की बुद्धि विकसित नहीं होती, अपने भले बुरे की पहचान नहीं कर लेता, तब तक वह बन्धन में रहता है। इसके विपरीत जब वह साधन-सम्पन्न एवं शक्तिमान् हो जाता है, तो वह किसी को भी अपने समान नहीं बनने देना चाहता है, अहं प्रवृत्ति बढ़ जाती है उस समय परमात्मा को साक्षी मानना तो दूर उसकी सत्ता पर भी अविश्वास करने लगते हैं। भौतिक सुखों को ही सुखा का मूल समझने लगते हैं।

'ईश्वरोऽम् भोगी सिद्धोऽम् बलवान् सुखी'

वाली उक्त कहावत उसमें चरितार्थ होने लगती है। मानव अपने द्वारा किए हुए पिछले कर्मों को भूल जाता है। अज्ञानता का पर्दा उसके दिल और दिमाग पर पड़ जाता है। वह नहीं सोचता कि जो शरीर आज इतना बड़ा हुआ है, आज से पहले कैसा था। पैरों से चल नहीं सकते थे, भूख लगने पर खाना भी नहीं मांग सकते थे, तकलीफ होने पर रोने के अलावा कोई चारा नहीं था, शैशवास्था में ये सभी दुर्गुण हैं, इसके पश्चात् शरीर बड़ा हुआ, विषयों की चिन्ता बढ़ी, कर्तव्य, अकर्तव्य का ध्यान ही नहीं रहा, वृद्धावस्था आयी, शरीर निर्बल हुआ, गले में कफ, जोड़ों में दर्द, शक्ति स्फूर्ति समाप्त हुई। ये मनुष्य का जीवन है, जब से यह शरीर उत्पन्न हुआ कभी एक जैसा नहीं रहा, कोई न कोई दुःख, तकलीफ, परेशानी, किसी न किसी प्रकार की लगी ही रहती है। सम अवस्था में तो कभी रहता ही नहीं है। 'इस शरीर पर इतना अहम् यही हमारी अज्ञानता है। जिस पर मानव जानबूझ कर पर्दा डाले हुए है। अपनी कमजोरी को छिपाने के लिए नास्तिकता की ओट ले लेते हैं। परन्तु सत्य सत्य ही है। चौरासी लाख योनि वाली बातों पर कोई विश्वास करने को नहीं होता लेकिन यह सत्य है कि मनुष्य का पुर्नजन्म होता है। "शरीर मरता है आत्मा नहीं", यदि आत्मा ही नहीं रहती तो उस सर्वव्यापक परमात्मा की सत्ता पर विश्वास करना असम्भव हो जाता, जो कि एक कटु सत्य है।

'पुर्नजन्म होता है आजकल ऐसे अनेक प्रमाण मिल चुके हैं, जो कि पुर्नजन्म की सत्ता को सिद्ध करते हैं।'

गाजियाबाद में एक इन्कम टैक्स आफिसर के घर में सुभाष नामक बालक ने जन्म लेकर अपने पिछले जन्म की सारी बातें बताईं। पिछले जन्म में वह लखनऊ में एक मुसलमान नवाब था। जिसका नाम 'जान मोहम्मद खां था, लखनऊ ले जाने पर उसने अपने पिछले जन्म के बीबी बच्चों को तथा बिना बतलाए, पुरानी हवेली को पहचान लिया, इसी तरह के अनेकों प्रमाण मिल चुके हैं। जो कि पुर्नजन्म की वास्तविकता को सही रूप में प्रकट करते हैं। अनेकों योनियों में भटकते-भटकते भी जीव अपने लक्ष्य को नहीं पहुँच पाया, समय-समय पर अनेकों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महापुरुषों ने इस धराधाम पर जन्म लेकर मनुष्य को पतन के गड्ढे में गिरने से बचाया, पर आज उन महापुरुषों की वाणियों को, सन्देशों को न मानकर, पाश्चात्य सभ्यता को अपनाकर विनाश के गर्त में गिरते जा रहे हैं. कर्मों के बन्धन में बँध कर अनेकों योनियों में भरमता रहता है, परन्तु परमात्मा बड़े दयालु हैं। उनसे जीव की दुर्दशा, कष्ट नहीं देखे गये. परमात्मा दया करके जीव को मनुष्य का जन्म देता है जिस समय जीव गर्भ में दुःखी होकर रोता है, आर्त्त होकर भगवान को पुकारता है. कि हे भगवान् मुझे इस काल कोठरी के नरक से बाहर निकालो। परमात्मा से उसकी यह दशा देखी नहीं जाती, क्योंकि परमात्मा दया-सिन्धु करुणासागर कहलाते हैं। वे अपने तेज द्वारा गर्भ में प्रकट होते हैं। वे जीव के कर्मों की ओर न ध्यान करके उसके दुःख को अपना दुःख समझते हैं। जीव ब्रह्म का साक्षात्कार करके परम-सुख को प्राप्त होता है। जीव को आत्मिक शान्ति प्राप्त होती है, वो अपने सारे गर्भ के कष्टों को भूल जाता है और भगवान् के चरणों में गिरकर अपना अपराध स्वीकार करता है कि प्रभु मुझे यहाँ से बाहर निकालो। मैं वादा करता हूँ कि इस जन्म में मैं आपका ही भजन करुँगा परन्तु भगवान् कहते हैं कि हे जीव, तू अनेकों जन्मों से इसी तरह के वादे करता आया है पहन्तु तूने एक बार भी स्मरण, ध्यान, पूजा, इत्यादि नहीं किया, विषयों के चक्कर में उलझ कर भौतिक सुखों में ही शान्ति का अनुभव किया, तेरे कर्म ऐसे तो नहीं थे, जो तुझे मनुष्य का तन नहीं मिलता, लेकिन मैं दया-वश तेरा पिता होने के कारण तूझे दुःखी नहीं देख सकता। "जा मैं तूझे मनुष्य अनमोल चोला मुफ्त में भेंट कर रहा हूँ, वादा करो कि इस चोले को दाग न लगने दोगे"। जीव प्रभु के समक्ष भजन करने का वादा करता है। इसी को ही गर्भ का वादा कहते हैं।

जैसे ही प्रभु अन्तर्ध्यान होते हैं जीव का जन्म हो जाता है और जैसे-जैसे बड़ा होता जाता है, चंचल माया के कारण आस्तिकता को छोड़कर भौतिक-वाद को अपनाकर नास्तिक बनता जाता है, जो कि सारे अनर्थों और दुःखों की जड़ है, यदि मनुष्य थोड़ा-सा ही आस्तिकता की ओर, आध्यात्मिक की ओर अग्रसर हो जाये किसी दैवी शक्ति के आगे घुटने टेक दें, कुछ देर एकान्त में बैठकर विचार करे, अन्तर्मुख हो जाये तो विचार बदलेंगे। मन में एक अनोखी अनुभूति सी होंगी, तो विचार पैदा होगा कि मैं कौन हूँ, कहाँ से आया तथा कहाँ जाना है। मन में जब उत्कंठा होगी तो विषय को समझने की शक्ति पैदा होगी विचार ऊँचे होंगे, जिज्ञासा उत्पन्न होंगी।

स्वार्थ का त्याग करके परस्वार्थ पर ज्यादा ध्यान देना होगा। प्रभु का चिन्तन सन्तों का समा-गम, हरि कथा, जीवों पर दया द्वारा ही एवं अटूट श्रद्धा एवं विश्वास से ही लक्ष्य की प्राप्ति होगी एवं मन में आध्यात्मिकता आने के कारण मानसिक शान्ति का उदगम होगा। भौतिक वाद से हटकर आध्यात्मिक वाद की ओर बढ़ेंगे तभी शेष जीवन में सुधार होगा और हमें सही दिशा की प्राप्ति होगी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्री शङ्कराचार्य (लगभग ११५० वर्ष पहले)

शिवगुरु और विशिष्ठा को पुत्र-प्राप्ति नहीं होती थी। दोनों रोज शङ्कर की पूजा करके भगवान् से पुत्र माँगते थे। इस पर उनके एक पुत्र पैदा हुआ। उन्होंने उसका नाम शंकर रक्खा। लेकिन थोड़े दिनों बाद शिवगुरु की मृत्यु हो गई। घर में माँ और बेटा रह गये। धीरे-धीरे शंकर बड़ा होकर पढ़ने लगा। वह पढ़ने में बहुत होशियार था। बचपन में ही उसने शास्त्र कंठस्थ कर लिये थे।

शंकर का साधु हो जाने का बहुत जी होता, पर माँ साधु होने के लिए मना करती थी। एक बार माँ बेटे नदी पर गए। वहाँ माँ कपड़े धोने लगी और बेटा नदी में नहाने लगा। इतने में मगरमच्छ ने शंकर का पैर पकड़ लिया। यह देखकर माँ घबरा गई। उसने रोना-पीटना शुरू किया। बेटा बोला— 'माँ, तू रो मत। मुझे साधु होने की आज्ञा दे दे, तो मगर मेरा पैर छोड़ देगा!' माँ ने कहा— 'भले ही, साधु होकर भी तू जिन्दा रहता हो, तो तुझे मैं साधु बनने की आज्ञा देती हूँ!' मगर ने शंकर का पैर छोड़ दिया। इसके बाद वह साधु हो गया। साधु होकर उसने शास्त्र पढ़ने शुरू किये। फिर तो शंकर महान् पंडित बन गया। वह लोगों को शास्त्र समझाने लगा और उसका नाम शंकराचार्य पड़ गया।

उस समय अपने देश में मंडनमिश्र नामक एक और पंडित थे। उनकी पत्नी भारती देवी भी बहुत होशियार थीं। एक बार शंकराचार्य मंडनमिश्र के यहाँ गये। दोनों पंडितों के बीच चर्चा चली। दोनों एक दूसरे से भारी भारी प्रश्न पूछते, लेकिन दोनों में से हारता कोई न था। तब उनके शास्त्रार्थ के समय भारती देवी को न्यायाधीश बनाया गया। उन्होंने फूलों की मालाएँ बना कर दोनों पंडितों के गले में पहनाईं। भारती देवी बोलीं— 'जिनकी माला पहले मुरझायेगी, वही हारे हुए माने जायेंगे!' इस चर्चा में मंडनमिश्र की माला पहले मुरझा गई। मंडनमिश्र हारे और शंकराचार्य जीते।

एक बार उन्होंने अपनी माता की बीमारी के समाचार सुने। संन्यासी अपने घर तो जा नहीं सकता, परन्तु शंकराचार्य फौरन ही घर गये। वहाँ उन्होंने माता की खूब सेवा की और उन्हें धर्म की बातें समझाईं। थोड़े दिनों बाद माता का देहान्त हो गया।

शंकराचार्य बालपन में संन्यासी बने थे, इससे कई एक ब्राह्मण चिढ़े हुए थे। इससे उनकी माता की मृत्यु के समय किसी भी ब्राह्मण ने उनकी मदद न की। लेकिन शंकराचार्य क्या इस तरह डर जायँ? वे अकेले ही माता को श्मशान में ले गये और चिता चुन कर उन्हें जलाया। इसके बाद फिर उन्होंने देश में फिरना शुरू किया।

शंकराचार्य ने भारत की चारों दिशाओं में चार मठ स्थापित किये। इन चारों मठों की यात्रा से लगभग सारा देश देखा जा सकता है। * * *

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्यों नहीं तुम आज आये ?

श्री गुणानन्द जी थपलियाल

नयन दर्शन के लिये थे, आज कितने तड़फड़ाये—
क्यों नहीं तुम आज आये ?

बैठ प्रिय पथ पर अकेला, कल्प-सा दिन है बिताया।
थी मुझे जिसकी प्रतीक्षा, मीत मेरा वह न आया।
'आ गए' आभास देती, पाद आहट सघन छाया।
प्रात से सन्ध्या हुई, तो सोचता हूँ मैं सर झुकाए—
क्यों नहीं तुम आज आए ?

कुछ नई ऋतु-वाटिका से, फूल चुन-चुन कर लाया।
प्रेम का गजरा तुम्हीं को, आज मैंने था बनाया।
चहक कोयल ने, रसीला गीत क्यों कर है सुनाया।
आज मम के मोर नाचे, आज घन आकाश छाये—
क्यों नहीं तुम आज आए ?

बैठ तरु की छाँव में मैं, मिलन-वंशी था बजाता।
कल्पना के अर्द्ध स्वर में, प्रिय मिलन के गीत गाता।
जब विकल होता कभी मन, धैर्य तब उसको बँधाता।
एक युग तो हो चुका है, आस फिर भी हूँ लगाए—
क्यों नहीं तुम आज आए ?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक शौर्यपूर्ण ऐतिहासिक कहानी —

राजपूतनी की वीरता

सूर्य वन्शी राजपूत भगवान् राम के वंशज हैं। राजपूतों को जितनी श्रद्धा चित्तौड़ के दूर्ग के साथ है, जाति भक्त हिन्दू भी उसका कर्म सम्मान नहीं करते। यह पवित्र किला राजस्थान के गौरव का उज्ज्वल प्रतीक और सूर्य वंशी खानदान के प्रभाव व समृद्धि का एक चमकता चिह्न है। सन् १३०३ में ये अभेद्य दुर्ग पठान आक्रमणकारी अलाउद्दीन खिलजी के अधिकार में चला गया था। वह आसानी से इस दुर्ग को नहीं जीत पाया, बल्कि उसे एक लम्बे समय तक इसका घेराव करना पड़ा तथा भयङ्कर संग्राम में भारी रक्तपात करके ही वह इस पर कब्जा कर सका था। राजपूत वीरों के साथ साथ महारानी पद्मनी भी शत्रु के साथ लोहा लेती रही थी। किंतु जब दुश्मन को पराजित न किया जा सका तो इसी किले में कई हजार महिलायें अपनी इज्जत की रक्षा करती हुई जौहर करके शहीद हो गईं, किन्तु अपनी आन को बट्टा नहीं लगने दिया। महाराणा भीमसिंह भी अन्तिम श्वास तक शत्रु का मुकाबला अपने योद्धा राजपूतों के साथ करते रहे मगर जब उनके सैनिकों की संख्या बहुत कम रह गई और यह स्पष्ट हो गया कि उनका साथ विजय-श्री नहीं दे रही, तो अपने वंश को कायम रखने के विचार से उन्होंने अपने सुपुत्र अजयसिंह और बड़े भाई के दूध पीते बच्चे अरसी को दुर्ग से बाहर निकाल दिया, अजय सिंह अपने छोटे भाई अरसी के साथ रेगिस्थान तथा जंगलों में कई दिनों तक भटकने के पश्चात् अन्ततः अरावलीपर्वत श्रृङ्खला के भीलवाड़ा नामक स्थान पर पहुँच गए, जहाँ भील-वाड़ा के ठाकुर के महल में उनको आश्रय मिल गया और उनका सब प्रकार से पालन-पोषण होने लगा। अरसी की शिक्षा के लिए महिलायें व कई ब्राह्मण भी रख दिए गए, किन्तु एक सच्चे राज-पूत की तरह उसे घुड़सवारी, शिकार और तलवार चलाने में ज्यादा आनन्द मिलता था।

भीलवाड़ा में रहते हुए अरसी जवान हो गया, एक दिन जब वह उण्डवा के जंगल में अपने शिकार का पीछा कर रहा था, तो वह वनपशु बाजरे के खेत में जा घुसा। खेत के मचान पर एक युवती बैठी थी। उसने बाजरे का एक पेड़ उखाड़ा और चाकू से उसे इस प्रकार काटा कि उसमें तेज धार बन गई, ज्योंही आखेट उसके मचान के निकट पहुँचा उसने उसी पुराने ढंग के हथियार से उसको मार गिराया। अरसी और उसके साथियों को उस सुन्दरी की बहादुरी पर भारी आश्चर्य हुआ, वे लोग एक नदी के तट पर बैठे इस घटना पर बातचीत कर रहे थे कि इतने में मिट्टी का एक ढेला वायु में उड़ता हुआ आया और अरसी के घोड़े की अगली टाँग पर आ लगा, जिससे घोड़ा लँगड़ा हो गया। उन्होंने इधर उधर देखा, तो इस परिणाम पर पहुँचे कि यह ढेला भी उसी लड़की ने फेंका है। कुछ क्षण के बाद लड़की स्वयं उन लोगों के पास नदी के तट पर पहुँची और अपनी गलती के लिए क्षमा माँगी। अरसी ने उसे माफ कर दिया और वह लौट गई।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

युवती चली गई, किन्तु अरसी के दिल में उसकी याद पूरी तरह जम गई। जब नौजवान राजकुमार शिकार खेल कर अपने कैम्प की ओर जाने लगा तो वह लड़की उसे फिर दिखाई पड़ी। अब उसके सिर पर दूध का घड़ा था और हाथ में एक रस्सी, जो भैंस के बच्चे के गले में बन्धी हुई थी। नवयुवक राजकुमार को कुछ शरारत सूझी। उसने अपने एक साथी को इशारा किया— तो वह घोड़ा दौड़ा कर उसके बहुत निकट से बढ़ने का प्रयत्न करने लगा, लड़की कुछ पीछे हटी और उसने तुरन्त एक रस्सी बढ़ते हुए घोड़े की टाँगों में फँसा दी, फिर क्या था— सवार घोड़े के साथ ही जमीन पर औंधे मुँह आ गिरा। इस प्रकार राजकुमार और उसके सभी साथी खूब हँस पड़े।

अरसी अब पूरी तरह उस लड़की पर आसक्त हो चुका था, युवती की वीरता का उसके दिल पर काफी प्रभाव हुआ। अतः उसने उस वीरांगना के सम्बन्ध में जाँच कराई, तो पता चला कि यह एक राजपूत की पुत्री है।

राजकुमार अरसी ने अब दृढ़ निश्चय कर लिया कि वह इस रूपवती के साथ अपना विवाह करायेगा। किन्तु कन्या का पिता इसलिये रजामन्द न हुआ कि अपनी पुत्री को दूर स्थान पर विवाहने को तैयार नहीं था। उसकी इच्छा तो उसे नजदीक के ही किसी ग्राम में विवाहने को थी, ताकि जब चाहे वह उससे मिल लिया करे।

राजकुमार अरसी ने अपनी कोशिशें जारी रखीं, अतः एक दिन वह साधारण राजपूत के वस्त्रों में लड़की के घर पहुँचा और कन्या की माता से उसका रिश्ता माँगा। लड़की ने अब राजकुमार को पहचान लिया और उसने अपनी माता से इस विवाह की स्वीकृति ले ली।

कुछ दिनों के बाद राजकुमार अरसी का विवाह उस बाला से हो गया। विवाह के एक वर्ष बाद युवती ने जिस बालक को जन्म दिया, उसका नाम था— "वीरबल हमीर"।

हमीर एक अद्वितीय बहादुर और अपनी हठ का धनी शासक था। उसी महावीर सिसोदिया ने चित्तौड़ का दुर्ग अपनी तलवार और बेजोड़ वीरता के बल पर मुगलों से आजाद करा लिया था। आक्रमणकारियों के दूसरे हमले तक बड़ी शान से हमीर के वंशज चित्तौड़ पर शासन करते रहे थे। काश राजपूतों की सुप्त वीरता व देश-प्रेम फिर जाग उठे और बहादुर क्षत्राणियाँ भी हमीर जैसे महावीर पुत्रों को जन्म देकर अपने पुरखों के बलिदानों के इतिहास को अमर बनाती रहें।

— ❀ • ❀ —

दुखद समाचार

चण्डीगढ़ निवासी डॉ० श्री पी० सी० भारद्वाज के आकस्मिक निधन हो जाने पर स्वामी रामतीर्थ मिशन देहरादून, प्रभु के चरणों में सामीप्य वास दान की कामना करता है तथा शोकातुर परिवार को साहस, धैर्य और शान्ति के लिए ईश्वर से प्रार्थना करता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ॐ

❀ आमन्त्रण पत्र ❀

२१वाँ स्वामी रामतीर्थ आध्यात्मिक—

विराट् सम्मेलन

सभी रामप्रेमियों को सूचित किया जाता है कि अलीगढ़ शहर में अव्यवस्था हो जाने जाने के कारण २१–१०–७८ से २४–१०–७८ तक होने वाला सम्मेलन स्थगित कर दिया गया है।

अतः अब सम्मेलन परम पूज्य श्री १०८ स्वामी अमर मुनि जी महाराज की छत्रछाया में दि० २५–११–७८ से २८–११–७८ तक बड़े समारोह के साथ सम्पन्न होगा।

अतएव आप सभी रामप्रेमियों से हमारा स्नेहानुरोध है कि सम्मेलन में पधार कर हमें सेवा का अवसर दें तथा सम्मेलन की शोभा बढ़ायें।

—: निवेदक :—

प्रधान	मुख्यमन्त्री	प्रचार मन्त्री
आनन्दीलाल बंसल	हंसराज सचदेवा	रमेशचन्द ठक्कर

स्वामी रामतीर्थ मिशन, हरिॐ नगर, अलीगढ़ (उ० प्र०)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वर्गीय श्री कृष्णलाल भण्डारी जी

सभी राम-प्रेमियों को इस समाचार से दुःख होगा कि १६ सितम्बर, १९७८ की रात्रि में स्वामी राम, स्वामी हरिॐ जी और स्वामी गोविन्दप्रकाश जी के महान् व्यक्तित्व में दृढ़ आस्था रखने वाले परमप्रिय श्री कृष्णलाल भण्डारी जी का दिल्ली में देहावसान हो गया। परमोत्साही, सहृदय और निष्ठावान श्री भण्डारी जी मिशन के सभी केन्द्रों में लोकप्रिय थे, स्वामी रामतीर्थ मिशन, देहरादून की प्रबन्धकारिणी समिति के वे एक प्रमुख सदस्य थे, दिल्ली मिशन के संरक्षक के रूप में उन्होंने निज उदारता एवं विशालता से सभी प्रकार के कार्यों में सहयोग किया। वे अपनी आस्थाओं के लिए जूझने से कभी न चूकते और इसके साथ हृदय की कोमलता के कारण अपने महानाचार्यों की सुकीर्ति को दृढ़तर बनाने के लिए महान् से महान् त्याग करने में भी किसी से पीछे न रहते।

ऐसे माननीय सहयोगी के देहावसान पर दिल्ली के मिशन ने ही नहीं वरन् अलीगढ़ तथा अन्य केन्द्रों ने भी गहरा शोक व्यक्त किया है।

राम दरबार श्रीमती निर्मला भण्डारी जी, सर्वश्री गिरधर भण्डारी, अनिल भण्डारी, सुनील भण्डारी, श्री कैलाश तलवाड़ एवं श्रीमती मधु तलवाड़, माननीय श्री कपूर जी और सभी सगे-सम्बन्धियों के प्रति सहानुभूति व्यक्त करते हुए स्वर्गीय श्री भण्डारी जी की पुण्यात्मा के उत्तरोत्तर उत्थान एवं कल्याण के लिए सच्चिदानन्द भगवान् से प्रार्थी है।

शोक समाचार

स्वामी रामतीर्थ मिशन राजपुर–देहरादून की प्रबन्धक समिति के सदस्य, मिशन के कर्मठ कार्यकर्ता, तपोनिष्ठ, धर्मनिष्ठ, अनन्य गुरुभक्त, ब्रह्मलीन श्री स्वामी गोविन्दप्रकाश जी महाराज के अनन्य शिष्य अलीगढ़ निवासी श्री के० सी० पाल के आकस्मिक निधन पर मिशन रामदरबार हार्दिक सम्वेदना प्रकट करता है और परम पिता परमात्मा के चरणों में सामीप्य वास दान की प्रार्थना करता है तथा ईश चरणों में निवेदन है कि इस आघात से सन्तप्त हृदययुक्त, परिवारस्थ सभी सदस्यों, श्रीमती पाल एवं शोकातुर पुत्रगण गुरुसरनसिंह पाल, सर्वजीतसिंह पाल, कामेत्र पाल, जितेन्द्र पाल को इस वेदना के सहन करने की शक्ति प्रदान करें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आश्रम समाचार

परम पूज्य आचार्य प्रवर ने आश्रम पर आयोजित प्रथम रविवारीय सत्संग में अपने अमृतमय प्रवचन एवं समस्त रामप्रेमियों को शुभ आशीर्वाद दिया। तत्पश्चात् दि० १ अक्टूबर को ही रात्रि में दिल्ली के लिये प्रस्थान किया।

दि० २ अक्टूबर को प्रातः दिल्ली स्थित स्वामी रामतीर्थ मिशन में पहुँचे। दि० ३ अक्टूबर को आश्रम के अनन्य भक्त श्री हरवंशलाल जी जौली के घर श्री रामचरित मानस का अखण्ड पाठ रखा गया। दिन० ४ को प्रातः रामायण-पाठ का भोग पड़ा तथा महाराज श्री के अमृतमय प्रवचन के पश्चात् पूर्णाहुति हुई। रामायण-पाठ में अनेक रामप्रेमियों ने भाग लिया।

दि० ४ की रात्रि को दिल्ली से चलकर इलाहाबाद दि० ५ को पहुँचे। वहाँ पर दि० ६ को श्री लाजपत राय वग्गा के सुपुत्र के विवाहोत्सव में सम्मिलित होकर वर-वधू को आशीर्वाद दिया।

इलाहाबाद में महाराज श्री ने ३ दिन तक विश्राम किया तथा भगवान् राम मन्दिर में अपने प्रवचनों के द्वारा सभी रामप्रेमियों को आनन्दित किया।

दि० ८ को इलाहाबाद से चलकर दि० ९ की प्रातः दिल्ली वापस आये और दिल्ली में श्री धर्मवीर जी मल्होत्रा के वसन्त विहार स्थित प्लाट में मकान का शिलान्यास किया। दि० १० को रात्रि में पटियाला के लिये प्रस्थान किया। वहाँ पर ब्रिग्रेडियर श्री एस० एल० चड्ढा की सुपुत्री के विवाह निमित्त श्रीरामचरित मानस के रखवाये गये पाठ में भाग लिया। दि० ११ को २ बजे पटियाला से कैथल में मनाये जा रहे "श्री स्वामी सारशब्दानन्द जयन्ती महोत्सव" में आपने भाग लिया। २ दिन तक इस विशाल महोत्सव में आपने कैथल एवं बाहर से आये हुए सभी रामप्रेमियों को अपने मधुरतम प्रवचनों के द्वारा लाभ पहुँचाया।

दि० १३ को कैथल से दिल्ली पहुँचे और वहाँ पर श्रीमती माता मेलादेवी जी के सुपुत्र श्री नीलकमल के विवाह निमित्त रखे गये पाठ की पूर्णाहुति की। दिनांक १४ को सायंकाल पटियाला पहुँचकर ब्रिग्रेडियर श्री एस० एल० चड्ढा की सुपुत्री के शुभविवाह के अवसर पर वर-वधू को शुभ आशीर्वाद दिया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दि० १५ को पटियाला से चलकर दिल्ली पहुँचे और वहाँ पर श्रीमती माता मेलादेवी जी के सुपुत्र श्री नीलकमल के शुभ विवाह में सम्मिलित होकर नवदम्पति वर-वधू को आशीर्वाद दिया। दि० १६ को ही दिल्ली में माता मेलादेवी जी के घर श्री नीलकमल के एट होम में सम्मिलित हुए। दि० १७ को आपने दिल्ली मिशन में ही सत्संग किया और दि० १८ को अलीगढ़ निवासी श्री के० सी० पाल का आकस्मिक निधन सुनकर अलीगढ़ पहुँचे तथा शोकातुर परिवार को धैर्य-साहस रखने एवं के० सी० पाल की आत्मशान्ति के लिए प्रभु के सामीप्य वास दान की प्रार्थना की। दि० २० को श्रीमती विमला बजाज द्वारा स्वर्गीय श्री बजाज सा० की स्मृति में रखे गये पाठ की पूर्णाहुति में तथा हवन एवं भण्डारे में सम्मिलित हुए।

दि० २० की रात को दिल्ली पहुँचे और वहाँ पर त्यागमूर्ति श्री १००८ म. मं. स्वामी गुरुचरणदास जी महाराज अध्यक्ष भारत साधु समाज की छत्रछाया में मनाया जाने वाला वार्षिक अखिल भारतीय विराट् भक्ति ज्ञान सम्मेलन (सनातनधर्म सभा पन्तनगर दिल्ली) में भाग लिया और दि० २२ की रात्रि में सम्मेलन की पूर्णाहुति के पश्चात् देहरादून के लिए प्रस्थान किया तथा दि० २३ की प्रातः आश्रम पर पहुँचे। दि० २३–२४ को आश्रम पर विश्राम किया एवं सभी आश्रमस्थ कार्यकर्ताओं को दिशानिर्देश दिया।

महाराज श्री की उपस्थिति में दि० २४ को श्रीमती शान्ति कुमार जी की माता जी के द्वारा आश्रम में भण्डारा हुआ। दि० २५ को आचार्य प्रवर ने अमृतसर के लिए प्रस्थान किया। जहाँ पर मनाये जा रहे अखिल भारतीय निर्मल वेदान्त सम्मेलन तथा गीता भवन दुर्ग्याणा में विराट् भक्ति सम्मेलन में भाग लेकर सभी रामप्रेमियों को अमृतमय उपदेश के द्वारा लाभ पहुँचाया तथा अमृतसर स्थित शाखा स्वामी रामतीर्थ मिशन माडल टाउन अमृतसर में ३ दिन सत्संग किया। तत्पश्चात् दि० ३० की रात्रि को अमृतसर से चलकर दि० ३१ को प्रातः दिल्ली पहुँचे और दि० ३१ अक्टूबर से मनाये जाने वाले वार्षिक स्वामी रामतीर्थ आध्यात्मिक विराट् सम्मेलन की अध्यक्षता की।

— सम्पादक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

* प्रेम *

प्रेम का अर्थ है व्यवहार में अपने पड़ोसियों के साथ, उन लोगों के साथ जिनसे आप मिलते-जुलते हैं, एकता और अभेदता का अनुभव करना।

* * *

प्रेम कला भी है और विज्ञान भी। वैज्ञानिक आविष्कार तो केवल महान् सूर्य, प्रेमाग्नि या एकता के भाव की चिनगारियाँ, स्फुलिङ्ग मात्र हैं।

* * *

विधानों का एक मात्र विधान प्रेम है। प्रेम में निवास करना ही अपने प्रति सच्चा रहना है।

* * *

सच्चा प्रेम सूर्य के समान आत्मा को विकसित कर देता है। मोह मन को पाले के समान ठिठुरा कर संकुचित कर डालता है।

* * *

प्रेम को मोह मत समझो। प्रेम और है तथा मोह और है। इन्हें एक समझना भूल है।

* * *

जीवन के संघर्ष में किसकी विजय होती है? प्रेम की!

—स्वामी राम

बुक पोस्ट

ग्राहक संख्या .....

श्री/श्रीमती .....

स्थान .....

डाकखाना ... ...

जिला ... ...

मासिक पत्र—

"राम–सन्देश"

स्वामी रामतीर्थ मिशन

राजपुर, देहरादून (उ. प्र.)

Pin–248009 भारत.

स्वामी रामतीर्थ मिशन, राजपुर देहरादून (उ० प्र०) के लिए प्रकाशक स्वामी अमर मुनि द्वारा शहन्शाही सर्वहितकारी प्रेस, राजपुर (देहरादून) में, मुद्रित।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राम - सन्देश

सितम्बर १९७८

संस्थापक—
ब्रह्मलीन स्वामी हरिॐ जी महाराज

संवर्धक—
ब्रह्मलीन स्वामी गोविन्दप्रकाश जी महाराज

व्यवस्थापक—
स्वामी अमर मुनि जी महाराज

सम्पादक—
काका हरिॐ "निर्द्वन्द्व"

आजीवन सदस्यता शुल्क—
भारत में — १०० रु०
विदेश में — ५०० रु०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

* विषय-विज्ञान *

विषय	लेखक	पृष्ठ
चेतावनी	... श्री स्वामी हरिदास जी	१
विवाहित जीवन	... स्वामी राम	२
बहुसन्तति का अभिशाप	... श्री स्वामी गंगेश्वरानन्द जी उदासीन	४
प्रवचन	... ब्रह्मलीन श्री स्वामी हरिॐ जी महाराज	७
छठी भक्ति	... श्री स्वामी शुकदेवानन्द जी सरस्वती	९
स्वतन्त्रता का दुरुपयोग	... ब्रह्मलीन श्री स्वामी गोविन्दप्रकाश जी	१२
शाश्वत शान्ति का मार्ग	... श्री जयनारायण जी 'मल्लिक' एम० ए०	१४
मन पछताता रह जाता है !	... श्री गुणानन्द जी थपलियाल	१६
सहशिक्षा : उचित-अनुचित	... आयोजक— श्री जगमोहन जी कुटेला	१७
सूक्ति-कण	... भगवान् बुद्ध की वाणी	१९
तेरा कौन !	... श्री रवि "कान्त" जी	२०
कर्मयोगमयी आराधना	... श्री स्वामी अमरमुनि जी महाराज	२१
तुम्हारे चरण !	... श्री हरिकृष्णदास जी गुप्त 'हरि'	२२
गुरु - महिमा	... संकलित	२३
विराट् आध्यात्मिक सम्मेलन — अलीगढ़	... ...	२४
आश्रम समाचार	... सम्पादक	२५

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

❀ ॐ ❀

'राष्ट्र के हित के लिए प्रयत्न करना ही विश्व की शक्तियों अर्थात् देवताओं की आराधना है'—स्वामी राम

वेदान्त, अध्यात्म, संस्कृति, धर्म एवं भक्ति का सजग सन्देशवाहक तथा
स्वामी राम के आदर्शों का एकमात्र लोकप्रिय मासिक—

राम सन्देश

वेदोपनिषदां तत्त्वम् सत्यं नित्यं सनातनम् ।
तत्सर्वं "रामसन्देशे" पत्रेऽस्मिन्नवलोक्यताम् ॥

वर्ष २७
अंक ९

राजपुर–देहरादून— सितम्बर १९७८.

वार्षिक भेंट १०)
एक प्रति ८५ पैसे

❀ चेतावनी ❀

हरि के नाम कौ आलस क्यौं,
करत है रे, काल फिरत सर सांधें ।
हीरा बहुत जवाहर संचे,
कहा भयौ हस्ती दर बाँधें ॥
बेर - कुबेर कछू नहिं जानत,
चढ़ौ फिरत है काँधें ।
कहि 'हरिदास' कछू है न चलत, जब
आवत अन्त की आँधें ॥

— स्वामी हरिदास

—❀—❀—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विवाहित जीवन

स्वामी राम के विचार

(संग्राहक— श्री भारत बन्धु जी शर्मा, दिल्ली)

विवाहित जीवन, आँखों पर लगाने वाले चश्मे (ऐनक) के समान है; जिसके द्वारा हम सब कुछ देखते हैं, किन्तु जिसे हम किसी प्रकार से भार नहीं मानते। यह जीवन हमारी उन्नति के लिए किसी प्रकार से बाधक न होकर, सहायक होता है। जैसे चश्मा हमारे नेत्रों तथा दृष्ट पदार्थों के बीच कोई परदा नहीं बनता वरन् उनको स्पष्टरूप से दिखलाता है। पति तथा पत्नी के मध्य किसी प्रकार का परदा (अवरोध) नहीं होना चाहिए। उन्हें तो एक दूसरे में समूची सृष्टि के दर्शन करने चाहिए। यह तभी सम्भव होगा जब वेदान्त की शिक्षा के अनुसार के मध्य आध्यात्मिक सम्बन्ध स्थापित हो और शरीर से ऊपर उठ कर उनके मध्य निश्चित आत्मिक सूझबूझ हो। इस प्रकार वे दोनों अपने व्यक्तित्व, अपनी प्रवृत्तियों, बाह्य प्रभावों, रीति रिवाजों, अनुकूलता आदि से ऊपर होकर एक दूसरे में आत्मदेव के दर्शन करते हैं।

हमारी श्वास-प्रक्रिया प्रतिक्षण रहने पर भी हमें इसका अनुभव नहीं होता, यद्यपि यह हम से निकटतम घटित हो रही है। ऐसे ही विवाहित दम्पति के मध्य पूर्ण समझदारी होनी चाहिए, जिससे वे इस जीवन को भार न समझें वरन् स्वतन्त्र होने की अनुभूति करते रहें। दोनों की विचार धारायें एक दूसरे के लिए किसी प्रकार की बाधा नहीं बननी चाहिए। आजकल हम देखते हैं कि पति की आध्यात्मिक प्रगति में पत्नी के विचार रुकावट बन जाते हैं। ऐसे ही पति के विचार भी पत्नी पर भार रूप बने रहते हैं।

हमारे देश में लोग आँखों में सुरमा, काजल आदि डालते हैं ताकि उनकी दृष्टि (निगाह) तेज़ हो। सुरमा, काजल आदि नेत्रों में होते हुए भी दृष्टि में बाधक नहीं होते। जब भी हमें इनके नेत्रों में होने का ज्ञान होता है कि इनमें अथवा नेत्रों में कोई दोष है। इस प्रकार जब हमारा ध्यान अपने पेट की ओर सहसा चला जाता है तो हमें इसमें कोई दोष मालूम होता है। यह प्रकृति का नियम है।

राम के गृहस्थ जीवन के दिनों में एक बार उनकी पत्नी ने प्रश्न किया कि क्या आप कभी मुझे स्मरण करते हैं ? राम ने तुरन्त नकारात्मक उत्तर दिया और कहा कि राम तुम्हें कभी स्मरण नहीं करता है। वास्तव में स्मरण उसे किया जाता है जो व्यक्ति विशेष से भिन्न हो। क्या हम कभी अपने नेत्रों, कानों, हाथों आदि को स्मरण करते हैं ? कदापि नहीं। कारण यह है कि ये तो हमारे अपने अभिन्न अंग हैं। जब दो व्यक्तियों का परस्पर नैकट्य हो जाता है और उनमें तनिकमात्र अन्तर नहीं रहता। तब एक दूसरे को स्मरण का प्रश्न ही नहीं उठता। यह बात स्पष्ट की जानी चाहिए।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हमारे किसी मित्र से प्राप्त हुआ पत्र हमारे लिए अति प्रिय होता है। हम अनेक बार उसकी चर्चा करते हैं। वह पत्र हमारे लिये इस कारण विशेष महत्व रखता है कि वह हमारे मित्र से प्राप्त हुआ है।

ऐसे ही पति-पत्नी भी दो पत्र हैं, जो परमात्मा से प्राप्त हुए हैं। इनके शरीरों को प्रेम तथा सम्मान की भावना से देखा जाना चाहिए, क्योंकि ये पत्र अथवा मित्र दैवी प्रसाद हैं, किन्तु हमको इससे अधिक महत्व देना उचित नहीं है। इसका कारण यह है कि दोनों के शरीरों में भगवान् के दर्शन होने पर ही इनका अस्तित्व सकारण होगा। यदि इनमें रात्रि को मिलाप होता है तो पत्नी अथवा पति को परस्पर आध्यात्मिक सम्बन्ध की अनुभूति होनी चाहिए। यदि उस समय ऐसा मानना संभव न हो तो कम से कम दिन में इस अभाव की पूर्ति की जानी चाहिए। परस्पर निकटतम होने के समय उन्हें यह अनुभव करना चाहिए कि उनका भगवान् से मिलाप हो रहा है। उनकी भावना इस प्रकार होनी चाहिए कि वे दोनों आध्यात्मिक प्रकाश से आलिंगन कर रहे हैं। इसको आप प्रसन्नता अथवा पूर्ण पवित्रता की संज्ञा दे सकते हैं. इसका आशय है समूचे विश्व को अपनी बाहों में समेट लेना और यह भावना रखना कि हे बुद्धिस्वरूपा अध्यात्म मेरे समीप आओ ! मैं तुम्हें स्वीकार करता हूँ। इस प्रकार प्रत्येक पदार्थ को अध्यात्म का प्रतीक मानना चाहिए, अपनी दृष्टि में एकत्व तथा विवाह में कोई भेद नहीं होना चाहिए अर्थात् आप अध्यात्म-शक्ति से आलिंगन कर रहे हैं। हमारे विचारों का आधार प्राणी मात्र को निज शरीर एवं अपना मूलाधार मानना चाहिए। यह विचार अथवा भावना सर्वदा मन में बनी रहनी चाहिए। जहाँ वेदान्त आपको शारीरिक मिलाप की भावना का त्याग करने को प्रेरित करता है, वहाँ यह आपको यह भी निर्देश देता है कि एक शरीर को दूसरे शरीर पर भार नहीं बनने देना चाहिए और अध्यात्म-मिलाप को सदा बनाये रखना चाहिए। सदा यह अनुभव करते रहिये कि आध्यात्मिक जीवन, प्रेम एवं एकत्व का समुद्र ढाठें मार रहा है और मैं वही हूँ ! वही हूँ ! वही हूँ ! इतना होने पर आपको निज सहचर, सहचरी में वास्तविकता के दर्शन होने लगेंगे वरन् आपको पेड़ों, नदियों और समूची सृष्टि में निजात्मा के दर्शन होने लगेंगे।

— ❀ • ❀ —

जब कोई बुरा भला कहे, कड़वा वचन बोले, गाली दे, काम बिगाड़ दे, हमारा विरोध करे, शरीर रोगी हो; ऐसे अवसरों पर ही धैर्य की आवश्यकता होती है। जब सब काम अपनी इच्छानुसार, अपने अनुकूल हो रहे हों, तब प्रसन्न रहना कौन बड़ी बात है।

—स्वामी विवेकानन्द

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बहुसन्तति का अभिशाप

महामण्डलेश्वर श्री स्वामी गंगेश्वरानन्द जी उदासीन

अमृतत्व की प्रापक त्याग प्रधान भारतीय संस्कृति की विशेषता है मानव को संयम की ओर मोड़ना, भोग की ओर नहीं। भोगों की लालसा और उसके लिये चलने वाली छीना झपटी ही संसार की समस्त अव्यवस्थाओं और अशान्तियों की जड़ है। कितना ही भोग भोगें, लालसा शान्त होने को नहीं, आग में घी की तरह उत्तरोत्तर बढ़ती ही जायगी।

प्रश्न होगा, फिर भी हमारी संस्कृति ने मानव को गृहस्थाश्रम का उपदेश क्यों दिया, जहाँ भोगों के उपभोग की पूरी छूट है ? बात यह है कि मानव की सहज सिद्ध दुर्बलता को ध्यान में रखते हुए उसके साधारण पूर्त्यर्थ सितशर्करामिश्र कटुक औषध है। अन्ततः संयम पर सुदृढ़ होने के लिये ही आश्रम है। यही कारण है कि शास्त्रों ने एकमात्र प्रथम पुत्र को 'धर्मज' पुत्र कहा है और द्वितीयादि पुत्रों को 'कामज' पुत्रों में गणना की। दक्षिण में तो आज भी दायक अधिकारी प्रथम पुत्र ही होता है। इसका अभिप्राय यही कि मानव नियत समय तक ही गृहस्थाश्रम में किन्हीं विशेष संयमों के साथ रहे। वंश का तन्तु अक्षुण्ण रखने के लिये सीमित सन्तान उत्पन्न करे। फिर सपत्नीक वानप्रस्था ग्रहण कर पूर्ण संयत जीवन बिताने में जुट जाये। इस तरह परिवार, समाज और राष्ट्र सर्वत्र सुव्यवस्था बनी रहती है।

इसके विपरीत बहु-प्रजा होने पर पिता तो जीवन भर उनके पालन पोषण में कष्ट उठाता ही है, सन्तानों को भी अनेक विपत्तियों का सामना करना पड़ता है, भले ही वे कितने योग्य क्यों न हों। यह अभिप्राय निम्न लिखित व्यक्त करता है।

बहुप्रजस्य पुत्रस्य सुवाचोऽपि सदा विपत्।
सीदन्निन्द्रं मधुच्छन्दा वस्त्वयाचदृचोत नः॥

अर्थात्— बहुप्रजावान पिता का पुत्र भले ही महान् विद्वान, वक्ता हो; उसे सदैव विपत्ति का सामना करना पड़ता है। यही कारण है कि दरिद्रता से पीड़ित मधुच्छन्दा ऋषि को इन्द्रदेव (उत नः १. ४. ६) इस ऋचा द्वारा धन की याचना करनी पड़ी। संक्षेप में कथा इस प्रकार है :—

महर्षि विश्वामित्र के सौ पुत्र हुए। उनमें एक मधुच्छन्दा भी थे, जो आगे चल कर अनेक मन्त्रों के द्वारा ख्यातनामा ऋषि बने। उनका गौरव तो इसी से स्पष्ट है कि उनके द्वारा दृष्ट मन्त्र से ही वेद का आरम्भ होता है।

ऋषि मधुच्छन्दा वेद शास्त्रों के अच्छे ज्ञाता और ऋचाओं के सुमधुर गायक थे। फिर भी सदैव दारिद्र्य से पीड़ित रहते। स्वाभिमानी विद्वान कभी किसी के समक्ष लांगूलचालन नहीं करता और लक्ष्मी के लाडले प्रायः वही भाषा समझते हैं। इस अखंड विद्वान को अपनी विद्वता पर गर्व था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लेकिन हम किसी के हों तो वह हमारी रक्षा करें। जैसे रात पड़ती है तो बिल के साँप, बिच्छु, कीड़े, मकौड़े सभी बाहर आ जाते हैं, परन्तु सूर्य्य के चढ़ने पर सब छिप जाते हैं। इसी प्रकार अज्ञान रूपी रात्रि में दुःख, भय, चिन्ता, राग, द्वेष रूपी सर्प व बिच्छू निकल आते हैं और जब ज्ञान रूपी सूर्य्य उदय होता है, तो सब भाग जाते हैं। ओ भोले! तेरा कोई नहीं इस जग में।

चार प्रकार के मनुष्य होते हैं— एक तो स्वयं डुबकु-डुबकु कर रहे हैं, दूसरे जो स्वयं पार हो जाते हैं, तीसरे १०, २०, १०० को ले पार होते हैं और चौथे हजारों का उद्धार करते हैं। महापुरुष तो कहते हैं जो गुरुमुख नहीं हैं, स्वयं डुबकु-डुबकु कर रहे हैं। उनका तो दर्शन करना भी पाप है। दूसरे कोई-कोई माई का लाल है, जो स्वयं पार हो जाता है और तीसरे सन्त कोटि के हैं, जो कुछ एक को लेकर पार होते हैं और चौथे राम-कृष्ण अवतार, जो कई हजारों का उद्धार करते हैं।

सभ्यता का त्याग नहीं करना चाहिये। स्वामी राम जब अमेरिका में पहुँचते हैं, तो गुरुदेव को लिखते हैं— "सत् गुरुदेव, ॐ! आपको दया-दृष्टि से आप ही अपने भीतर से बोलते हैं, उपदेश देते हैं। भाव भक्ति का परित्याग नहीं करना— राग रहित हो वर्तना है।

मुख्य भक्ति, वर्तन वैराग्य, निश्चय ज्ञान।

सन्त भी डाक्टर की तरह पहचान करता है कि शरणागत एक जन्म का योगी है, दो जन्म का या बिलकुल नहीं।

देखिये! सूर्य्य की एक किरण पड़ने पर मैं अपने को हरिॐ कहता हूँ, आप कृष्णचन्द्र, वह रामचन्द्र इत्यादि इत्यादि। परन्तु समुच्चय तो सूर्य्य है, जिसकी समस्त किरणें हैं।

ध्याता अपने आप ध्येय रूप हो जाता है। बच्चे को माँ पहले एक आना देते भी झिझकती है कहीं खो न दे। धीरे धीरे बड़ा होने पर रुपया दे देती है। इसी प्रकार पाँच, दस का नोट, फिर सौ का। यहाँ तक कि धीरे धीरे खजाने की चाबियाँ तक दे देती है। इसी प्रकार भगवान् धीरे धीरे ज्यों ज्यों अधिकारी बनता (करता) है, योग्य बनाता है, देता चला जाता है। स्वामी राम कहते हैं:— "अधिकारी बनो, सफलता स्वयं ही आ जाती है।"

घी, दूध को बहुत लाभकारी माना जाता है। शास्त्रों ने भी अमृत कहा है। लेकिन जिसका पेट खराब हो, उसे नहीं खाना चाहिये। इसी प्रकार ठीक आत्मज्ञान है तो अमृत, परन्तु अधिकारी के लिये। शेरनी का दूध पीने वाले में पच्चास वर्ष तक बल रहता है। परन्तु उसका दूध दुहा केवल सोने के पात्र में ही जाता है।

रामकृष्ण परमहंस के सिर पर खड़े महात्मा तोतापुरी जी कहते हैं— "बेटा! ब्रह्मज्ञान चाहिये?" उत्तर देते हैं— "मैं माता से पूछ आऊँ।" माता के पास जाते हैं। माता कहती है— "मैंने ही तो भेजा था — तुम अधिकारी हो गये हो।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वशिष्ठ जी राम जी के प्रति कह रहे हैं :— हे राम जी ! तुम्हारी ही महानता वशिष्ठ का रूप धारण धर कर सामने बैठी है। गोपियों का तो रूहानी प्यार है। कहती हैं :—

"तिनक तिनक दूध दे के घर घर नाच नचाया।"

तुकाराम के यहाँ भगवान् छः महीने बर्तन साफ़ करते रहते हैं। जूठा खाते हैं। एक दिन जूठा न बचने के कारण भोजन नहीं खाते। तुकाराम जाति पूछते हैं, तो उत्तर देते हैं— आपको काम से मतलब है या जाति से ? झटके से शंख, गदाधारी रूप चतुर्भुज साक्षात्कार हो जाता है।

तुकाराम सारा धन मुफ्त खिला खिला कर लुटा देते हैं। एक दिन ऐसा आता है जब कुछ नहीं रहता उसके पास। स्त्री के अङ्ग अङ्ग में पीड़ा हो रही। संसार एक तरफ़ है और तुकाराम एक तरफ़। तब भगवान से पूछा कि प्रभु आप उस मुश्किल समय में क्यों न आए ? उत्तर देते हैं— तेरी स्त्री के रोम रोम में पीड़ा रूप में, घर में दरिद्रता रूप में, मैं ही तो आया था। भक्तों का टैस्ट अवश्य होता है, पर नाश नहीं होने देता।

परमात्मा की कीमत खुदी दर गर्ज करना है। जैसे छोटे छोटे नाले यमुना में जाते हैं, यमुना गंगा में और गंगा समुद्र में जाती है, पर समुद्र में गंगा का नाम नहीं रहता। इसी तरह जीव जीव संख्या से परमात्मा संख्या हो जाती है। छोटी चीज बड़ी में जब घुल मिल जाती है, तो उसी का रूप बन जाती है। हनुमान जी की तरह अटल निश्चल होना चाहिए।

—❀•❀—

कुशल व्यापारी और साधक

श्रवण, मनन और निदिध्यासन का उपयोग ठीक एक लाभप्रद स्कीम के समान होता है। जिस प्रकार एक उद्योगपति किसी जगह जा वहाँ लाभ देनेवाले उद्योगों के बारे में श्रवण करता है व तुरन्त ही उस स्कीम को अमल में लाने की चेष्टा करता है। वह कारखाना जिसके कि बारे में वह श्रवण करके आया था, दो तीन वर्षों में ही तय्यार कर बना देता है। धीरे-धीरे उससे लाभ भी प्राप्त करना शुरू कर देता है। बहुत से लोग तो ऐसे होते हैं कि जो सुनते तो हैं, किन्तु उसे अमल में नहीं लाते, जिससे उनकी स्कीम बातों में ही रह जाती है। ठीक इसी प्रकार की हालत उन साधकों की भी है जो कि अध्यात्म का श्रवण करके अपने जीवन में उसे अमली जामा पहनाते हैं। दूसरे कई लोग ऐसे भी होते हैं जो कि सुनते तो बहुत हैं, किन्तु उसे अमल में न लाने के कारण, कोरे के कोरे ही रह जाते हैं। श्रवण के बाद मनन व मनन के बाद निदिध्यासन करने की नितान्त आवश्यकता होती है। ऐसा व्यक्ति अपने लक्ष्य की तत्काल प्राप्ति कर लेता है। स्कीम का सुनना श्रवण है व उस पर ठीक रास्ते से विचार करना मनन है, तथा उसे अमल में लाना, निदिध्यासन ही है। उससे लाभ उठाना उसका अन्तिम फल है। यही बात अध्यात्मविद्या की भी है। उसे सुन कर, उस पर पूर्ण रूप से विचार करते हैं। सोचे हुए सत्य पदार्थ रूपी ब्रह्म का ध्यान करके फिर साक्षात्कार करते है।

— हरिकिशनदास अग्रवाल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

७ अगस्त १९५३ (सायं) लाला दुर्गादास जी की कोठी में ब्रह्मलीन स्वामी हरिॐ जी महाराज का दिया गया :—

प्रवचन

माताओ, देवियो व सज्जनो !

डी० सी० का बेटा भी बिना काम्पीटीशन के, टैस्ट के, डिग्रियों के डी० सी० नहीं बनता। इसी प्रकार सब का पिता परमात्मा है— बिना टैस्ट के भक्त को पास नहीं करता। तन, मन, धन की आहुतियां देनी हैं। जैसे जुवारिया जुआ खेलते खेलते जायदाद भी लुटा देता है, लेकिन दाव लगाता चला जाता है। आश लगी रहती है, कैसा दाव लग जाये कि मालोमाल हो जाऊं। इसी तरह भक्त भी जान की बाजी लगाता चला जाता है न जाने किस दाव से, किस समर्पण से प्रभु प्राप्ति हो जाये। तन, मन, धन की आहुतियां देता चला जाता है। जैसे लड़की की शादी के साथ ही दहेज आ जाता है, इसी प्रकार भक्ति के साथ ही सांसारिक सुख स्वयं आ जाते हैं।

बीज अपने आपको खोने पर गुलज़ार रूप में खिलता है, परन्तु जीव डब्बों में तो सजना चाहता है, पर मिट्टी में हस्ती को नहीं मिलाना चाहता। जीव जैसे जैसे धर्म का त्याग करता है, वैसे वैसे भगवान् नष्ट भ्रष्ट कर देते हैं।

छत पिलरज के सहारे खड़ी रहती है। यदि उनमें से एक पिलर न हो, तो भी छत गिरेगी नहीं। दो के न होने पर भी छत गिरती नहीं। तीन न हों, तो भी छत खड़ी रहती है। परन्तु यदि एक भी न हो, तो यह फट कर गिर ही जाती है। इसी प्रकार एक प्राणी में भी भक्ति हो, तो कुल खड़ा रहता है; नहीं तो नष्ट भ्रष्ट हो जाता है।

स्मरण रहे, जो भी कुल फलता-फूलता है या तो कोई पूर्व जन्म का पुण्य होता है या कुल में कोई राम भक्त होता है। परिवार के लोग ही बाद भक्ति का आच्छेदन कर देते हैं— मगरमच्छ, मगरमच्छियां हैं पास में।

विवेक किसे कहते हैं ? सत्य-असत्य के निर्णय को। सन्त ज्ञानेश्वर अपनी ज्ञानेश्वरी गीता में लिखते हैं— "एक बार सब पाप मिल कर भगवान् के दरबार में गये। पूछा क्या बात है, क्यों आये हो ?" बोले— "हम सच सच बोल देते हैं कि हम तेरे पाप हैं।" ऐ मूर्ख ! चोर चोरी करने छिप कर ही जाता है। छिप कर तुम भी चुपचाप उनके सम्बन्धी बन कर जाया करो।"

ऐ जीव ! तेरे ही बच्चे तेरे तन, मन, धन को खा जाने वाले हैं। पौधा छोटा होता है, तो कोमल कोमल होता है। बकरी आती है, एक ही बार में खा जाती है। हमारे सम्बन्धी बकरी के तुल्य हैं, जो हमारी कोमल कोमल शुभ भावनाओं को एक ही बार में हड़प कर जाते हैं। परन्तु यदि कोमल पौधा बढ़ कर वृक्ष बन जाता है, तो उसे कौन खा सकता है ? इसी प्रकार यदि हम अपनी भावनाओं को इतना ऊँचा व बलिष्ट बना लें, तो कौन हमें गिरा सकता है ? सब सुखदाता राम हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कभी किसी के आगे झुकना या हाथ पसारना उन्होंने सीखा ही नहीं। अतएव प्रायः उन्हें दारिद्र्य का क्लेश बना रहता।

उन्हें पैतृक सम्पत्ति भी इतनी नहीं मिली, जिसके बल दारिद्र्य से उठ कर मुकाबला करते और स्वाभिमान स्थिर बनाये रख पाते। पिता के सौ पुत्र थे। भला सम्पत्ति के सौ हिस्से हों, तो एक के हाथ क्या लगे ?

अतः दुर्भाग्यपूर्ण एक दिन ऐसा आया, जब उनके परिवार का जीवन दूभर हो गया। विवशतः बेचारे चोटी के विद्वान को इन्द्र से याचना करनी पड़ी और तदर्थ उन्होंने (उत नः) इस ऋचा का प्रयोग किया। इन्द्र ने स्तुति से प्रसन्न हो उन्हें पर्याप्त धन दिया और उनका संकट टल गया। किन्तु यह याचना उन जैसे विद्वानों की दृष्टि में अशस्त्र वधसा थी।

माँगनो भलो न बाप सों।

इस वैदिक कथा से यह उपदेश मिलता है कि अपना जीवन भव्य बनाना हो और याचना जैसी विपदा से बचना हो, तो कभी बहुप्रज नहीं होना चाहिए। इस विषय में संयम का सहारा लेना परमावश्यक है।

कथान्तर्गत ऋचा :—

उत नः सुभगां अरिवोचेयुर्दस्म कृष्टयः।
स्यामेन्द्रस्य शर्मणि।

(ऋग्वेद १. ४. ६)

अर्थ— शत्रुओं का क्षय करने वाले हे इन्द्रदेव ! शत्रु भी हमें उत्तमोत्तम धन से युक्त कहा करें। जब शत्रु हमें सर्वोत्कृष्ट धनवान कहेंगे, तो मित्रगण द्वारा समृद्ध बताने में पूछना ही क्या ? इस प्रकार धन सम्पन्न हो हम इन्द्रदेव की कृपा से सुलभ सर्वविध सुखों का लाभ करें। धन तो सभी माँगते हैं, इसलिये धन माँगना उतनी अधिक विपदा नहीं। किन्तु यहाँ तो मधुच्छन्दा को दारिद्र्यवश दैनिक जीवन निबाहना भी कठिन हो रहा था। तब बेचारा विलख-विलख कर (सीदन्) इन्द्रदेव से धन माँगने लगा। यह किसी स्वाभिमानी विद्वान के लिये महती विपत्ति है, यह भाव है।

कथा का सूत्र :—

प्रस्तुत कथा ऋग्वेद १. ४. ६ की ऋचा पर आधारित है।

अपनी खोई शक्ति को प्राप्त करने के लिये "मैं कर सकता हूँ, मैं ज़रूर करूँगा" ऐसा निश्चय करो और देखो कि तुम में एक नई चेतना, नवीन अनुभव आ रहा है। दुनिया बदलती हुई दिखाई दे रही है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

छठी भक्ति

श्री स्वामी शुकदेवानन्द जी सरस्वती

"छठ दमशील विरति बहु कर्मा।
निरत निरन्तर सज्जन धर्मा॥"

जब साधक की पाँच भक्तियाँ पुष्ट हो जाती हैं, तो उन सबके फलस्वरूप विचार शक्ति उत्पन्न होती है जो कि ज्ञान की नींव है। अर्थात् जिसके आधार पर ज्ञान स्थिर होता है। इसी लिये तो कहा है—

"विचारः परमं ज्ञानम्"

अर्थात्— विचार ही परम ज्ञान है। विचार की जननी बुद्धि है। जीव के भीतर अनादि काल से देवासुर संग्राम होता चला आ रहा है। दैवी स्वभाव बुद्धि से संचालित होता है और आसुरी स्वभाव मन तथा इन्द्रियों द्वारा संचालित होता है। जब तक बुद्धि मलिन और निर्बल बनी रहती है उस समय तक आसुरी स्वभाव का बोलबाला रहता है, इस प्रकार की अवस्था में मन और इन्द्रियाँ विषय भोगों में लिप्त रहते हैं। इसके विपरीत सन्तों के संग-प्रभाव से, भगवत्-कथा के श्रवण से, सद्गुरु की सेवा से, भगवान् के चरित्र-गान और विश्वासपूर्वक मन्त्र-जाप से बुद्धि निर्मल और बलिष्ठ हो जाती है, कारण यही है कि यह सभी साधन बुद्धि की खुराक हैं। इस प्रकार बुद्धि के बलवान होने पर वह मन और इन्द्रियों को उनकी मनमानी क्रियाएँ नहीं करने देगी, वरन् स्वयं ही उन पर अपना शासन करेगी। कारण कि यथार्थ में शरीररूपी रथ की बुद्धि लगाम है तथा इन्द्रियाँ घोड़े और मन सारथी है और यह नियम है कि जब तक सारथी बलिष्ठ और चतुर नहीं होगा वह घोड़ों को कदापि ठीक प्रकार से चला ही नहीं सकता, वरन् ऐसी अवस्था में घोड़े उसे रथ सहित किसी गहरे गर्त में गिराकर चकनाचूर कर सकते हैं। हाँ तो जब साधक की बुद्धि भजन के द्वारा बलिष्ठ और निर्मल हो जाती है तो वह अपने मन और इन्द्रियों की समस्त क्रियाओं का निरीक्षण करने लगती है और यदि उसका मन व इन्द्रियाँ असावधानी से पापों में प्रवृत्त होने लगती हैं तो उसे पश्चात्ताप और लज्जा का अनुभव होता है। वह सोचता है कि मैं भगवान् का भक्त कहाता हुआ भी पाप कर्म कर रहा हूँ, तो यह पाखण्ड और दम्भ नहीं तो और क्या है? इस प्रकार स्वाभाविक ही यह शनैः शनैः अपने मन और इन्द्रियों का निग्रह करता है और जब तक पूर्णतया उन पर शासन नहीं कर लेता चैन से नहीं बैठता। बुद्धि की आज्ञानुसार मन और इन्द्रियों का संचालन ही दम कहलाता है। मन इन्द्रियों का विषय भोगों में प्रवृत्त न होना वरन् भगवान् की आज्ञानुसार ही उनका प्रवृत्त होना सच्चा दम है, अर्थात् भोगों का बाहुल्य होते हुए भी उनमें लिप्त न होना। जिस प्रकार ठेके से अफीम मात्रा में लेकर ही उसका उपयोग कर सकते हैं और अधिक पास रखने पर सरकारी विधान के अनुसार दण्ड-भागी हो सकते हैं। इसी प्रकार भोगों को मात्रा के अन्दर ही भोग करना भगवान् की आज्ञा पालन करना है। जिस

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जिस इन्द्रिय का जो विषय है उसको विषय केवल मात्रा में ही देना और वह भी इसलिये कि भजन और भगवत्प्राप्ति के लिए शरीर की रक्षा आवश्यक है। कोई यह न समझे कि इन्द्रियाँ उसी समय वश में हो सकती हैं जबकि इन्द्रियों के समस्त कार्य रोक दिये जायँ, ऐसा हो ही नहीं सकता। कारण कि प्रकृति बलात् तुमसे कार्य करा लेगी, जैसे हम आंखों से देखेंगे ही, कानों से सुनेंगे ही, नासिका से सूघँना और त्वचा से स्पर्श करना ही होगा, इत्यादि। साधक को केवल यह निश्चय करना होगा कि वह बुद्धि के द्वारा निश्चित करे कि उसे इन आँखों के द्वारा क्या देखना है और किस भावना से देखना है तथा कानों से क्या सुनना है। इन सभी बातों को ठीक और परिपूर्ण ज्ञान के लिये उसे सन्तों की शरण और सच्छास्त्रों का सहारा लेकर मन इन्द्रियों को ऐसा बना लेना चाहिये कि उनसे शास्त्र विहित ही कर्म बनें, शास्त्र विरुद्ध नहीं। साधन के पूर्ण होने पर ऐसा होगा कि स्वप्न में भी उनका मन और इन्द्रियाँ कुमार्ग पर नहीं जायँगी। वह नेत्रों से सदैव सन्तों और भगवान के श्री विग्रह के दर्शन करेगा। वह परस्त्री को या तो देखेगा ही नहीं और यदि देखेगा भी तो मातृ–भावना से ही देखेगा। गन्दे नाटक, उपन्यास न पढ़ कर; धार्मिक ग्रन्थ तथा गीता और रामायण का ही पठन करेगा। नाच, तमाशा और सिनेमा न देख कर, सर्वत्र अपने प्रभु की रचना देखकर ही मुग्ध होगा। उसके नेत्र सदैव भगवान् की रूप-माधुरी के प्यासे रहेंगे और वह संसार के झूठे सौन्दर्य की ओर उदासीन भाव से ही दृष्टिपात करेगा। भक्त शिरोमणि पूज्यपाद गोस्वामी तुलसीदास जी श्रीरामचरित मानस में लिखते हैं :—

"लोचन चातक जिन करि राखे।
रहहिं दरश जलधर अभिलाषे॥"

"निदरहिं सिंधु सरित सर वारी।
रूप बिन्दु जल होहिं सुखारी॥"

वह अपने कानों से पराई निन्दा अथवा अश्शील बातें न सुनकर सदैव सन्तों के उपदेश तथा भगवत् चर्चा सुनने में रत रहता है और कभी कथा से तृप्त नहीं होता—

"जिनके श्रवण समुद्र समाना।
कथा तुम्हारि सुभग सरि नाना॥"

"भरहिं निरन्तर होहिं न पूरे।
तिन्हके हृदय सदन तब रूरे॥"

वह जिह्वा से निरर्थक वार्तालाप न करके सदैव भगवान् की लीला और गुणों का गान करने में ही अपने समय की सार्थकता समझेगा और प्रत्येक वस्तु को भगवान् को भेंट कर प्रसाद समझकर सेवन करेगा—

"तुमहिं निवेदित भोजन करहीं।
प्रभु प्रसाद पट भूषण धरहीं॥"

यदि किसी साधक की मन इन्द्रियाँ भगवान् का भजन करते हुए भी वश में नहीं हो रही हैं तो स्पष्ट है कि उसकी उन्नति रुक गई है और उसने छटी भक्ति में प्रवेश नहीं किया है। देखने में ऐसा मालूम होता है कि मन इन्द्रियाँ का निग्रह तो कोई भक्ति नहीं है, भक्ति तो भगवान् की लीला, कथा श्रवण करना अथवा गान करना ही है, जैसा कि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उपरोक्त पाँच प्रकार की भक्तियों में बताया गया है। ठीक ही है, किन्तु इन पाँचों भक्तियों का फल यह छठी भक्ति यम है। कारण यही है कि यदि साधक की मन-इन्द्रियाँ ही वश में न हुए और उनके द्वारा संसार-हित के शुभ कार्य न हुए तो अन्य भक्तियों से लाभ ही क्या हुआ। इस प्रकार उसे तो अपने पापों के कारण नीच योनियों में जाना पड़ेगा और अनन्तकाल तक दुःख भोगने पड़ेंगे, इसी कारण अन्य भक्तियों की अपेक्षा यह छठवीं भक्ति श्रेष्ठ है। भगवान् ने कई स्थानों पर कहा भी है कि मैं केवल ऊपरी और दिखाऊ भक्ति से प्रसन्न नहीं होता, मैं उसी को प्राप्त होता हूँ जिसने पूर्णरूप से इन्द्रियों का दमन कर लिया है। स्थित-प्रज्ञ के लक्षण बताते हुए भगवान् श्रीकृष्णचन्द्र जी अपने प्रिय भक्त अर्जुन से कहते हैं कि हे अर्जुन ! जिसकी इन्द्रियाँ वश में हैं, उसकी बुद्धि स्थिर जानो और स्थिर बुद्धि वाला ही मेरी प्राप्ति कर सकता है।

तानि सर्वाणि संयम्य,
युक्त आसीत् मत्परः।
वशे हि यस्येन्द्रियाणि,
तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता ॥

स्थिर बुद्धि वाला ही श्रद्धालु बनकर ज्ञान की प्राप्ति में समर्थ हो जाता है, इसीलिये एक स्थल पर श्रीगीता जी में भगवान् श्रीकृष्ण ने कहा है कि श्रद्धालुओं को ज्ञान के द्वारा मेरी प्राप्ति होती है और वह ज्ञान इन्द्रिय दमन करने वालों को ही प्राप्त होता है।

श्रद्धा वाँल्लभते ज्ञानं,
तत्परः संयतेन्द्रियः।
ज्ञानं लब्ध्वा परां शान्ति–
मचिरेणाधिगच्छति ॥३९॥

छठवीं भक्ति में प्रविष्ट साधक दम के साथ जैसे जैसे मन और इन्द्रियों को वश में करता जायगा उसके अन्दर शील स्वभाव उत्पन्न होगा और वह मन इन्द्रियों के द्वारा होने वाले बहुतेरे व्यर्थ और अनर्थ कार्यों से उपराम होगा। यही भाव "विरति बहु कर्मा" से झलक रहा है। उसके द्वारा जो भी क्रिया होगी वह सन्तों और सज्जनों जैसी होगी। अतएव यह कहना कि वह सज्जनों के धर्म में निरन्तर रत रहता है, ठीक उतरता है। सन्त और असन्त के शरीर में वाह्य दृष्टि से विशेष भेद दृष्टिगोचर नहीं होता, भेद तो केवल उनकी क्रिया में होता है। सन्त और सज्जनों की प्रत्येक क्रिया शुभ, संसार के कल्याण के निमित्त तथा स्वार्थ, कामना और अहङ्कार से रहित होती है। इसके विपरीत असन्तों की प्रत्येक क्रिया में कपट, दम्भ, पाखण्ड, स्वार्थवृत्ति और अहङ्कार छिपा रहता है। सन्तों के दैवी स्वभाव का वर्णन भगवान् श्रीकृष्णचन्द्र जी ने गीता के सोलहवें अध्याय में विस्तारपूर्वक किया है। जिनमें दैवी-सम्पदा के ये २६ लक्षण होते हैं, वे ही सच्चे सन्त हैं।

जब साधक क्रमशः उन्नति करता हुआ सन्तों के ऐसे लक्षणों से पूर्ण हो जाता है, तब उसकी दृष्टि में सब जगत वासुदेवमय हो जाता है। निरन्तर उन्हीं गुणों का अभ्यास करता हुआ अपनी स्थिति से स्वप्न में भी चलायमान नहीं होता।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वतन्त्रता का दुरुपयोग

ब्रह्मलीन श्री स्वामी गोविन्दप्रकाश जी वेदान्ताचार्य

प्रत्येक प्राणी पराधीन जीवन को दुःख का कारण समझता हुआ स्वतन्त्रतापूर्ण जीवन को ही सुखी समझता है। दैववशात् यदि उसे स्वतन्त्रता मिल जाती है तो वह उसका ऐसा दुरुपयोग न करे। पराधीन जीवन के दुःखों से भी बढ़ कर कष्ट सागर में गोते खाने लगे।

इस अनन्त ब्रह्माण्ड में जड़ चैतन्य सब अपने अपने मार्ग पर चल रहे हैं। न कोई किसी का अवगुण निकालता है और न कोई अपने कर्तव्य से दिल चुराता है। सब जीवधारियों में बुद्धि का दम भरने वाला सर्व श्रेष्ठ प्राणी मनुष्य ही ऐसा है जो अपने को उन्नति पथ पर चलाने के बहाने भ्रष्टमार्गगामी होकर अपना पतन कर रहा है।

ज्ञान का सहारा लेकर अभिमानवश अपनी मनमानी करना चाहता है। इसलिए इसने पंच महाभूत की दुर्दशा कर डाली है और फलस्वरूप अपने को इतना पराधीन बना लिया है कि एक मील पैदल चलना भी इसके लिये असम्भव सा हो गया है। थोड़ी सी ठण्ड से इसे निमोनिया हो जाता है। मतलब यह है कि इसने प्रकृति के ऊपर अत्याचार करके अपने को अनाचारी बना लिया है।

ज्यों ज्यों ज्ञानाभिमान की वृद्धि होने लगी, लोग अपने पैरों पर खड़े होने लगे, त्यों त्यों अपने लोभ में पड़ने लगे; जिससे प्राणिमात्र त्रस्त हो गये और आज पेट भरने के लिये :—

"नाना योनि समुत्पन्ना पच्यन्ते पाप कर्मभिः"

अर्थात् पापाचार, अत्याचार, अनाचार और व्यभिचार आदि पाप कर्मों द्वारा ही अपनी रक्षा करते हैं।

आजकल पढ़े लिखे लोगों में ईश्वर विरोधी विचारों का प्रवाह बढ़ रहा है। कई देशों में जैसे— रूस में तो वहिष्कार ही कर दिया था किन्तु आजकल पुनः उपासना-गृह बनने लगे हैं और उपासना करने की भी स्वतन्त्रता मिल गई है। परन्तु हमारे भारतवर्ष में भी ईश्वर विरोधी विचारों का प्रचार होने लगा है।

सूर्य को सूर्य न मानने से या उस पर धूल फेंकने से सूर्य का कुछ भी अपकार नहीं होता। न तो सूर्य का अस्तित्व खतरे में पड़ता है और न वह गंदला ही होता है। हाँ वह धूल जब जमीन पर गिरती है तब उन्हीं भले आदमियों की आँखों में गिरकर उन्हें अन्धा बना देती है और पीड़ा पहुँचाती है। यही दशा ईश्वर विरोधी की होती है।

मनुष्य की स्वतन्त्रता का यह अभिप्राय है कि वेद-शास्त्र निर्णीत जीवन की उन्नति के साधनों पर विचारपूर्वक आरूढ़ हो सके और ईश्वर को स्वीकार करने से दया, क्षमा, परोपकार, उदारता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आदि दिव्य गुणों के विकास के साथ ही साथ मनुष्य ब्रह्मानन्द को प्राप्त हो जाता है। उसका स्वार्थ परमार्थ के रूप में परिणत हो जाता है और वह सेवा और त्याग की अवधि तक चला जाता है।

कुछ दिनों पूर्व देश की स्वतन्त्रता के साथ मनुष्यों ने अपनी स्वतन्त्रता का यह उपयोग किया कि खून की नदियाँ बह गईं, बड़े बड़े अत्याचार हुए, दीन-दुर्बल अबलाओं को भी असंख्य अत्याचारों की चक्की में पिस जाना पड़ा। इन लड़ाई झगड़ों और रक्तपात तथा कुकर्मों का प्रधान कारण स्वतन्त्रता का दुरुपयोग ही समझा गया। असल बात यह है कि मनुष्य जाति ने मनुष्यता को खो दिया।

इसलिए मनुष्य की स्वतन्त्रता का यह अभिप्राय है कि वह वेद-शास्त्र तथा ईश्वर पर श्रद्धा एवं विश्वास रखता हुआ दया, क्षमा, परोपकार, उदारता, त्याग, संयम, सत्यादि सद्गुणों की वृद्धि करने के साथ साथ लोभ–मोह–पाखण्ड–द्वेषभाव–अमानुषता आदि पर स्वतन्त्र रहते हुए विजयी हो और स्व-कर्तव्य का पालन करता हुआ परस्पर मैत्री, एकताभाव, देश में शान्त वायुमण्डल का प्रसार आदि शुभ कर्मों को करना ही वास्तव में स्वतन्त्रता का सदुपयोग है अन्यथा जीवन को दुःखों में डालकर सर्वदा सन्तप्त, अशान्त रहना ही स्वतन्त्रता का दुरुपयोग है।

धूम्रपान का जीवन पर दुष्प्रभाव !

न केवल धूम्रपान, अपितु धूम्रपान की शैली भी मनुष्य की आयु पर प्रभाव डालती है।

ब्रिटेन के दो शोधकर्ताओं ने ५५,००० अंग्रेज मजदूरों का अध्ययन करके यह निष्कर्ष निकाला है कि फेफड़े के कैंसर से मरनेवालों में सर्वाधिक संख्या उन सिगरेट पीनेवालों की थी, जिनमें लगातार अपने मुह में सिगरेट लटकाये रखने की लत पड़ गयी थी तथा जो मुह से धुआँ फेंकते समय भी सिगरेट को अपने मुह से नहीं निकालते थे। धूम्रपान को छोड़ चुके अथवा सर्वथा धूम्रपान न करनेवालों की अपेक्षा इस प्रकार धूम्रपान करनेवालों की मृत्यु–संख्या १४ गुना अधिक थी।

',साईंस" नामक पत्रिका में अपने शोध के तथ्यों का विवरण देते हुए इंगलैंड के प्रसिद्ध डाक्टर जी० जेड० ब्रेट ने लिखा है कि "एक हजार सिगरेट पीनेवालों में १.२ तथा न पीनेवालों में प्रति हजार ०.३ व्यक्ति प्रतिवर्ष फेफड़ों के कैंसर से मरते हैं। उपर्युक्त रीति से धूम्रपान करनेवालों की मृत्यु–संख्या धूम्रपान न करनेवालों से आठ गुना तथा कम धूम्रपान करनेवालों से तीन गुना अधिक होती है।"

(नादर्न इण्डिया पत्रिका" से साभार)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शाश्वत शान्ति का मार्ग

प्राचार्य श्री जयनारायण जी 'मल्लिक' एम्० ए०, साहित्याचार्य, साहित्यालंकार

आज का मानव-जीवन अशान्त है। अनवरत संघर्ष के बीच वह कुछ टटोल सा रहा है—वह शाश्वत शान्ति चाहता है। पर यह शान्ति मिलेगी कैसे ? पाश्चात्य संसार एक ओर तो विज्ञान के द्वारा प्रकृति पर विजय प्राप्त करना चाहता है और दूसरी ओर भोग वासना की चकाचौंध में आनन्द प्राप्ति का व्यर्थ प्रयास भी कर रहा है। जीवन में वैषम्य इतना बढ़ गया है कि इसकी प्रतिक्रिया के रूप में साम्यवाद कभी कभी झाँकी दे जाता है। प्राच्य जगत् की दशा भी सन्तोषप्रद नहीं। यहाँ भी विद्या विवाद के लिये, धन अभिमान के लिए और शक्ति दूसरों को पीड़ा पहुँचाने के लिये एकत्र की जाती है। विद्वान् को हठी नहीं होना चाहिये। विद्या तो एक प्रकाश है, उसकी सहायता से सत्य का अन्वेषण करना चाहिये। जिसके हाथ में विद्यारूप दीपक है, वही यदि दूसरों को पथ-भ्रष्ट करे, सच्चा मार्ग न दिखलाये, तो वह विद्या का दुरुपयोग ही होगा। एक मूर्ख यदि भूल करता है तो वह केवल अपने आप नष्ट होता है, उससे राष्ट्र की विशेष क्षति नहीं होती, किन्तु यदि एक विद्वान् भूल करता है तो वह अपने साथ बहुतों को डुबो देता है; क्योंकि उसके अनुयायी अनगिनत रहते हैं। विद्वानों की निःस्वार्थ भाव से मानवता की सेवा और सत्य का अन्वेषण करना चाहिये। मानव जीवन का लक्ष्य है—दुःख की निवृत्ति और सुख की प्राप्ति, पर यह हो कैसे ? असंख्य दार्शनिक, वैज्ञानिक, राजनीतिज्ञ, कवि और कलाकार आये और मानवता के पद पर दीपक जला कर चले गये। असंख्य दीपों की चकाचौंध में दुर्बल, त्रस्त मानवता किंकर्तव्यविमूढ़ हो गयी। वह क्या करे ? किधर जाय ? भिन्न भिन्न दीप भिन्न भिन्न मार्गों की ओर संकेत कर रहे हैं। स्मृतियों में, दर्शनों में, पुराणों में भिन्न भिन्न उपायों की झलक है। मानवता किस निश्चित पथ का अवलम्बन करे ?

श्रुति पुरान बहु कहेउ उपाई।
सुलभ न अधिक अधिक अरुझाई॥
(मानस ७।११६।३)

मानव जीवन में दुःख की समस्या का समाधान करने के लिये असंख्य महामानव इस भूतल पर अवतीर्ण हुए और उन्होंने जीवन को सुखी, समुन्नत और परिष्कृत बनाने की भरपूर चेष्टा की। सृष्टि के आरम्भ में ही लोगों ने देखा कि जीवन की सबसे बड़ी यातना मृत्यु है, अतः जीवन को सुखी बनाने के लिये मृत्यु पर विजय प्राप्त करना आवश्यक है। विद्वान् लोग अमरत्व के अन्वेषण में लग गये। भवसागर अथवा त्रिगुणात्मिका प्रकृति का मन्थन हुआ। इस विराट् विश्व में विष के रूप में तम, मदिरा के रूप में रज तथा अमृत के रूप में सत्व दृष्टिगोचर हुआ। भवसागर के मन्थन से अनेक रत्न निकले। अमृत का घड़ा भी निकला। भौतिकवादी और अध्यात्मवादी दोनों के सहयोग से अमृत का पता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लगाया गया। दोनों के दो दृष्टिकोण थे। एक अपने इसी भौतिक शरीर को अमर करना चाहता था, दूसरे ने देखा कि प्राणी जड़ और चेतन—दोनों का समन्वय है। जड़ तो विकारी और परिणामवादी है। प्रत्येक क्षण वह बदलता रहता है, उसके रूप में आमूल परिवर्तन का ही नाम तो मृत्यु है। चेतन को जड़ के सम्पर्क से सर्वथा अलग कर देना ही तो अमरत्व की प्राप्ति है। प्रथम दल ने स्थूल शरीर को दीर्घायु रखने की भरपूर चेष्टा की। उसने देखा कि लोग शरीर के भिन्न भिन्न अवयवों के जीर्ण होने से, समुचित भोजन और व्यायाम नहीं मिलने से, रोग-कीटाणुओं के आक्रमण से शरीर-यन्त्र बिगड़ जाता है और प्राणी मर जाता है। रसायनशास्त्र ने रसों का, आयुर्वेद ने औषधियों का और हठयोग ने आसनों एवं व्यायामों का आविष्कार किया, जिनसे मनुष्य सैकड़ों वर्षों तक जी सकते थे तथा अपने रूप और यौवन को अक्षुण्ण रख सकते थे। सोमरस के सेवन से वृद्धों में भी कान्ति और यौवन आ जाते थे। प्राणायाम और ब्रह्मचर्य से शरीर के विकास में पर्याप्त सहायता मिलती थी।

आज हमारी संस्कृति पर पाश्चात्य देश का एक धूमिल वातावरण छा गया है। यवनिका के उस पार में स्वार्थ और भोग-विलास का विशाल नर्तन है। दुनिया भोग-लालसा के शिखर पर चढ़ने के लिये तेजी से दौड़ रही है। विज्ञान नये-नये चमत्कार दिखा रहा है। राजनीति और अर्थशास्त्र भौतिक तथा सामाजिक जीवन का विश्लेषण कर रहे हैं। भोग-लालसा के शिखर पर जब वासना जोरों से चीत्कार करेगी—'मुझे नवीन भोजन दो, मैं संसार के सारे भौतिक पदार्थों का रस चख चुकी, वे अब फीके पड़ गये।' तब मानवता सोचेगी—'ततः किम् ?' तब वह सँभलेगी और अनुभव करेगी कि वह अनुचित मार्ग पर थी। जीवन में त्याग और तपस्या एवं स्नेह और बलिदान की जितनी बड़ी आवश्यकता है, उतनी भोग-वासना की नहीं। सावन, भादों की अँधेरी रातों में काले काले बादल उमड़ घुमड़ कर कुछ काल के लिये भले ही आकाश को आच्छन्न कर लें, पर इससे सूर्य का लोप नहीं हो जाता। शीघ्र ही प्राची के प्रांगण में ऊषा देवी अरुण-राग-रञ्जित नवीन परिधान धारण कर हेमकुम्भ ले इस शिथिल भूतल पर अमृत की धारा उँडेल देती है। मानवता जब भोग-वासना की ओर झुक जाती है, तब उसका नाम हो जाता है—'पशुता' और मानवता जब उलट जाती है, तब उसका नाम हो जाता है—'दानवता'। पशुता मानवता की कमजोरी है और दानवता मानवता की मौत। मानवता के अन्तर्गत जो पशुता घुस गयी है, वह उसे ऊपर उठने नहीं देती, उल्टे उसे भोग वासना की ओर घसीटती है। हमें इस पशुता का परित्याग करना है। मानव हृदय में सदैव देवासुर-संग्राम होता रहता है देवता मनुष्य को निम्नस्तर से उच्चस्तर पर ले जाना चाहते हैं, असुर मनुष्य को पाप, हिंसा और असत्य की ओर घसीटते हैं। धीर पुरुष प्रयत्न करके देवपक्षके श्रेय की ओर चला करते हैं और अधीर प्रेय में ही पड़े रहते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मन पछताता रह जाता है !

श्री गुणानन्द जी थपलियाल

हर प्रात मुझे बहकाता है ,
कुछ प्रलोभन दे जाता है ।
दिन भर उड़ता प्राण-पखेरू ,
संध्या को फिर थक जाता है ।
मन पछताता रह जाता है ।।

हर रात मुझे भरमाती है ,
नींद न नयनों में लाती है ।
मैं जब किरणें ढूँढा करता ,
घना अंधेरा छा जाता है ।
मन पछताता रह जाता है ।।

मधुमास मुझे बहलाता है ,
चिर - सुख सा सहलाता है ।
मैं जब तक इसको दुलराऊँ ,
यह ऋतु-पट में खो जाता है ।
मन पछताता रह जाता है ।।

हर बात मुझे उकसाती है ,
दिन-रात मुझे हुलसाती है ।
मैं जब तक कुछ पाने बैठूँ ,
तब तक जीवन ढल जाता है ।
मन पछताता रह जाता है ।।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सहशिक्षा : उचित-अनुचित

आयोजक— श्री जगमोहन जी कुटेला

जीवन अबाध गति से चलता है। गति की निरन्तरता पीछे तो क्या; अगल-बगल देखने का अवसर भी नहीं देती है। इसके बावजूद व्यस्तता के प्रबल वेग में बहते-बहते जहाँ कहीं तनिक किनारा मिला, विश्राम मिला, पाठकों ने अपने विचार भेजे। जहाँ तक सम्भव हो सका कुछेक ने भेंट-वार्ता का समय भी दिया। जहाँ तक 'सहशिक्षा' के औचित्य का प्रश्न है, किसी ने भी, न हो, नहीं कहा। जब कि स्थिति यह है कि सहशिक्षा अनिवार्य रूप से हो या फिर कहें कि है, तब निश्चय ही इसमें कुछ दोष भी हैं। इतना तो है ही कि इसके अन्तर्गत कई सुधारों एवं सामाजिक कुरीतियों के दमन का प्रश्न अवश्य निहित है।

हल्द्वानी की एक छात्रा कु० दीपा बल्यूटिया, चीफ़ प्रीफेक्ट बिष्ट छात्रावास, नैनीताल ने एक भेंट में कहा— 'हालांकि सामाजिक परम्पराओं को तोड़ना ही हमारा उद्देश्य नहीं है, फिर भी कुप्रथाओं के दमन के लिये सक्रिय कदम उठाने ही होंगे। सहशिक्षा में जब मैं डिग्री क्लास में आयी तो कुछ भी अजीब नहीं लगा, क्योंकि व्यक्तिगत सम्बन्धों से आपस में अपनापन लाया ही जा सकता है। पिकनिक हो या कोई भी सामूहिक उत्सव, अवश्य हो। ताकि सहशिक्षा के अन्तर्गत लड़के-लड़कियां एक दूसरे को समझें। इस प्रकार बुराई उत्पन्न होने का प्रश्न ही नहीं उठेगा। जरूरत है, शिक्षा कैसी दी जाती है।

पन्तनगर के श्री रवितेज सिंह गोरखा के विचार में सहशिक्षा के अन्तर्गत प्रतिबन्धों का इतना अभाव अवश्य होना चाहिए कि हम नैतिक रूप से पतित होने के लिए बाध्य न हो जायें। करप्शन! करप्शन तो तभी होता है जब उसकी बुराइयों और अच्छाइयों को शिक्षा न दी जाये।

काशीपुर की एक पाठिका कु० मधु मेहरोत्रा का कहना है कि "परस्पर व्यवहार और विचार विनिमय अनुचित नहीं है", विचारणीय प्रश्न यह नहीं कि सहशिक्षा हो या न हो, प्रसंग तो निर्वाह का है। किशोरावस्था में हमारी शिक्षा प्रबुद्ध और अनुभवी आचार्यों द्वारा होनी चाहिये। जनमानस में शुद्ध और प्रतिबद्ध संस्कार उत्पन्न करने आवश्यक हैं। अपरिपक्व बुद्धि वालों के लिये सहशिक्षा विष है।

नेपाल के एक पाठक श्री विनोद जी ने विचार प्रेषित किये कि जिसे हम जान चुके हों उससे सहसा ही अपनत्व हो जाता है और सहशिक्षा के अन्तर्गत अपनत्व के बिना केवल उस पागलखाने का अर्थ लिया जाता है जो ज्यों-ज्यों ठीक होता जाता है वह त्यों-त्यों बुद्धिमत्तापूर्ण मूर्खतायें करने लगता है।

अल्मोड़ा के पाठक श्री जगदीश चन्द्र के अनुसार सहशिक्षा का अर्थ व्यापक है, सम्बन्धों को मजबूत एवं स्वस्थ बनाने का यह सर्वोत्तम साधन है। गदरपुर के श्री हरीलाल भी यही कहते हैं।

फैजाबाद के श्री बी. डी. पन्त जो बी. एस. सी. के छात्र हैं, का विचार है कि आज के समाज को

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ध्यान में रखते हुए हम यह कह सकते हैं कि सहशिक्षा की प्रवृत्ति प्रगति का एक प्रतीक है। क्योंकि जो भी वस्तु आवरण में छिपी हो, उसकी वास्तविकता कम ज्ञात रहती है। संशय अधिक रहता है। मौलिकता से भटक कर हम अपने ही बुने तानों-बानों में सत्य का आभास करते हैं।

नैनीताल की एम० ए० (फाइनल) की छात्रा कु० रेनु पन्त के विचार में— हालांकि सामाजिक बन्धनों को तोड़ पाना सम्भव नहीं है फिर भी कुरीतियों का बहिष्कार करना ही होगा। सहशिक्षा के अन्तर्गत हमें सेक्स के भेद को हटाना है तो रूढ़िवादिता की सीमाओं को लाँघना ही होगा। अच्छा हो यदि ऐसा वातावरण पैदा किया जाय कि कालेज कम्पाउंड और गली-मोहल्ले में लड़के-लड़कियों के सम्बन्धों का एक ही अर्थ लिया जाय, यानि या मित्रवाद।

लंघम हाउस होस्टल नैनीताल के प्रमुख छात्राधिकारी श्री मोहनचन्द्र पांडे के विचार में सहशिक्षा के अभाव में करप्शन फैलेगा और सामाजिक सन्तुलन बिगड़ जायगा। दूसरी ओर सहशिक्षा जब है तो सेक्स आकर्षण तो होगा ही। प्रश्न उठता है परस्पर सम्बन्ध कहाँ तक? अधिक प्रतिबन्ध चरित्र का पतन करते हैं। जैसे-विद्यालयों में लड़के-लड़कियों को अलग-अलग बैठना, फीस देने के पृथक् समय व स्थान। वास्तव में यह सब द्वेष की भावना को जन्म देता है। स्वस्थ साधनों द्वारा दोनों में अपनत्व स्थापित करना होगा। सहशिक्षा की सफलता के मार्ग में बाधाओं के लिये बहुत हद तक शिक्षक वर्ग उत्तरदायी है।

कुछ प्रश्न ऐसे थे कि जिन पर हमारे सभी विचार-प्रेषक एकमत थे, सभी का इस विषय पर व्यापक दृष्टिकोण रहा, सब ही के शब्दों में निराशा के चिह्न एवं आशा की किरण थी। पारस्परिक सम्बन्ध खुलकर हों, रोजगार मिलने की सम्भावना रहे ताकि कालेज केवल मस्ती का अड्डा मात्र न रहे आदि विषयों पर सभी एकमत थे।

अन्त में केवल इतना ही कहना है कि यदि हमें सहशिक्षा को सार्थक करना है तो समस्याओं के सामने आना ही होगा। विद्यार्थी अच्छे हैं तो बुरे भी। अच्छाई को ग्रहण करना होगा, चरित्र उच्चादर्शी बनाना होगा। स्वेच्छाचारिता सदैव निन्दनीय है। यह हम कदापि नहीं चाहेंगे, न ही सम्भव ही है कि समाज के नियमों का उल्लंघन हो, लोगों के साथ चलते-चलते भी तो कदम आगे बढ़ाया ही जा सकता है।

— ० —

जब अपनी बुराइयों की ओर दृष्टि जाने लगती है तो मन की मैल साफ होने लगती है। फिर जैसे जैसे मन की मैल साफ होने लगती है वैसे वैसे ही अपना रूप दिखाई देने लगता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कर्मयोगमयी आराधना

श्री स्वामी अमरमुनि जी महाराज

दामोदर मास (कार्तिक मास) का प्रातः काल का समय था। इन्द्रयाग का महोत्सव समीप था। सभी लोग उसकी तैयारी में थे, अतः माता यशोदा स्वयं दधिमन्थन कर रही थी। महाराज नन्द जी की गेहनी माता यशोदा दधि मन्थन कर रही थीं। माता यशोदा गेहनी है। सद्गेहनी, नन्द बाबा की गेहनी, गोपीगेहनी है। उसे कार्य करने में कोई संकोच नहीं। कार्य तो उसे आह्लादप्रद है। कार्य तो उसका सहज स्वभाव है। कर्मविभोरता ही तो सच्चा योग है। जिससे प्रभु सर्वाधिक प्रसन्न होते हैं।

"स्वकर्मणा तमभ्यर्च्य सिद्धिं विन्दन्ति मानवाः।"

आज माता यशोदा दधि मन्थन के द्वारा श्री आनन्द कन्द भगवान् श्रीकृष्ण चन्द्र जी का आराधन कर रही है, ध्यान योग कर रही है। कर्मयोग का यह पवित्र स्वरूप अद्भुत है। उसके सामने दूसरा योग नहीं। इसके समान कोई पवित्र समाधि नहीं। माँ का अत्यधिक कार्यशील स्वरूप है।

कमरे में रेशमी लहंगा कसकर डोरी से बन्ध हुआ है। कर्मयोगिनी माँ कर्मयोग के रहस्य को जानती है। कर्मयोग में आलस्य और प्रमाद का कोई स्थान नहीं। वह समाधिस्थ हो कर्म में तत्पर है। कर्मयोगस्थ माँ भगवान् श्रीकृष्ण जी के बाल चापल्य पर आधारित गीत गा रही है। मधुर गीतों द्वारा आनन्दकन्द भगवान् का स्मरण कर रही है, मानों भगवान् का आवाहन कर रही है।

भला कर्मयोगस्थ माँ के बुलाने पर भगवान् क्यों न आयें। कर्मयोगी के बुलाने पर न आकर क्या निष्क्रिय व्यक्ति के बुलाने पर आयेंगे? नहीं, वह तो स्वयं अत्यन्त चपल हैं। अभी अभी तो कीर्तन में लगे हैं। कभी भी तो निठल्ले नहीं बैठते। कोई न कोई कार्य करते ही रहते हैं। उनके कार्यों की धूम तो गोकुल में मची है। सभी गोपियाँ तो उनके क्रीडामय कार्यों पर गीत बनाकर गाती हैं।

माँ भी स्मरण कर रही है, कर्म और प्यारमय गीत के द्वारा भगवान् को बुला रही है। भला ऐसी पुकार को सुन कर भगवान् क्यों न आते। वह तो दौड़े दौड़े आते हैं। वह आये। पहले हृदयस्थल में आये, भगवान् के अन्तर्दर्शन से माता आनन्द विभोर हो उठी। रोमांच हो गया, शरीर प्यार, विह्वल हो उठा। रस्सी तो इस समय स्वभाव से, अभ्यास से अपने आप खींची जा रही है। माँ दर्शन करती है, हृदयपटल पर भगवान् श्रीकृष्ण का, बाबा का, नन्दनन्दन का, यशोदानन्द का।

हृदय में प्रभु के साक्षात्कार के अनन्तर बाह्य दर्शन में देर नहीं लगती। हृदय में दर्शन भूमिका है बाह्य दर्शन की, भगवान् के अन्तर्दर्शन से माँ का वात्सल्य भाव उमड़ा, प्यार की पवित्र आँच से हृदय द्रवित हो उठा। गाय का हृदय वत्स के वात्सल्यभाव से द्रवित हो दूध रूप में बहने लगता है। गाय उसे रोक नहीं सकती, वह सहज स्वभाव है, सहज क्रिया है, माँ का हृदय भी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वात्सल्य भाव से द्रवित हो दूध रूप में स्तनों से प्रभावित हो रहा है। यह दूध— दूध नहीं, प्यार भी नहीं, अपितु परम पवित्र प्यार है। उसकी प्यास प्राणीमात्र है। भगवान् में तो यह प्यास और भी बलवती है। वह तो एकले ही हैं। जीव तो अनन्त हैं, भगवान् एक। जीवों को अपने भाई जीवों का प्यार सख्यभाव सहज स्नेह प्राप्त है। भगवान् का एकाकीपन सम्भव है। अखरता है। तभी तो उनके समान दूसरा न होने पर स्नेह के लिये जीवों से प्यार पाने के लिये गोकुल में पधारे हैं। वैकुण्ठ को छोड़कर दिव्य स्वरूप को छिपाकर बाल रूप धारण कर आये हैं। ताकि मैं भी जीवों के साथ मिलकर पारस्परिक प्यार के आनन्द को पा सकूँ। ऐश्वर्य युक्त स्वरूप के आगे तो सभी दब से जाते हैं। बड़े व्यक्ति के प्यार का वह पवित्र स्वरूप नहीं होता, जो समाज से होता है। तभी तो भगवान् बालक रूप धारण कर आये हैं, मनुष्य के शिशु रूप को बना कर आये हैं, जीव रूप धारण किये हैं। यही तो प्यार ब्रह्म का स्वरूप है। अस्ति-भाति-प्रिय ही तो ब्रह्म है और नाम रूप मिथ्या।

आज प्रभु दौड़े आ रहे हैं, गोकुल की रज में दौड़े आ रहे हैं, धूलि-धूसरित दौड़े आ रहे हैं, इस पवित्र वात्सल्य भाव से द्रवित हृदय के प्रेम स्वरूप को प्राप्त करने के लिये।

दौड़े आते हैं प्यासे, प्यार के प्यासे। कहीं इस प्यारमय दूध की एक बून्द भी तो न गिर जाये भूमि पर। सभी खेल दौड़ कर आते हैं— आते हैं माँ की गोद में, भुजाओं में और हठ करते स्तनपान का। बड़े नटखट हैं— दधि-मन्थन नहीं करने देते। हार कर माँ गोद में लेती है— कर्मयोग में बाधा पड़ी, किन्तु योग्य से प्राप्तव्य वस्तु मिल गई।

तुम्हारे चरण !

श्री हरिकृष्णदास जी गुप्त 'हरि'

नाथ ! तुम्हारे चरण मेरा सर्वस्व हैं। मुझ दीन-हीन-अकिंचन के ये ही एक मात्र आश्रय हैं। इन तक ही, बस, मुझ अगति की गति है।

मेरे श्रान्त-क्लान्त चरण इन परमगति-प्रदाता चरणों का अनुसरण करके, इनके अनुगामी होकर- भले ही घुटरुओं चलते शिशुके सदृश ही गिरते-पड़ते, पल-पल मंजिल के निकट पहुँच रहे हैं।

मेरे हारे थके हाथ— शिथिल पड़कर इन सुकुमार चरणों को चाँपकर बिना कुछ भी किये, सम्पूर्ण करणीय कर्म कर चुके हैं; इनकी मुट्ठियाँ भरकर सहज ही सब मुट्ठी में भर चुके हैं।

मेरा मूढ़ता-ग्रस्त मस्तिष्क ज्ञान-कन्दुक से खेलते इन चरणों को अपने में आसीन करके ज्ञान की महान् महिमा से महिमान्वित एवं अपूर्व गरिमा से गौरवान्वित हो उठा है।

मेरा रस-शून्य हृदय इन रसार्णव चरणों को अपने से चिपटाकर स्वयं रस-निर्झर हो उठा है, प्यासा स्वयं अब जन-जन की— जन-जन के कण-कण की प्यास बुझा रहा है।

— ❀ • ❀ —

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गुरु-महिमा

मा नः पाशं प्रतिमुचो गुरुर्भारो लघुर्भवः ।
वधूमिव त्वा शाले यत्र कामं भरामसि ॥

— अथर्ववेद ९-३-२४

हे परमात्मन् ! हमारी ग्रीवा में अविद्या की डोरी मत डालें । कृपया अपनी माया का हमारे फँसाने के लिये प्रसार न करें । अपितु गुरु विग्रह धारण कर या गुरु शरीर केन्द्र में प्रविष्ट हों । हमारे भार को हल्का करें । हम अनन्त जन्मों से माया में फँस कर माया कलित विविध प्रकार संसार के दुःखों का बोझा उठा रहे हैं । वह भार प्रतिक्षण बढ़ता ही जा रहा है । नये-नये कर्मों के फलभोग के लिये विविध योनियों में जीवात्मा को भटकना पड़ रहा है । आप उस भार को हल्का बना दो अर्थात् हृदय में ब्रह्म विद्या की प्रचण्ड अग्नि प्रदीप्त कर समस्त कर्म राशि को तूल की तरह भस्म कर दो । कर्मों के विनाश होने से कर्मों के फल शरीर धारण करने का अवसर ही उपस्थित न होगा । फिर विविध दुःख भार मुझे कभी स्पर्श न कर सकेगा । हे प्रभो ! मैं बहुत तंग आ गया हूँ । अधिक समय तक इन दुःखों की गठरी उठाना सहन नहीं किया जा सकता । संसार के अन्ध कूप में गिरे हुए मुझ अनाथ साधक को भुजा पकड़ कर शीघ्र ही निस्तार करें ।

मैं नव विवाहिता नारी की तरह तुझे वस्त्राभरण आदि प्रदान से सजाता हूँ अर्थात् भक्ति भाव से आपकी विविध प्रतिमाओं की सपर्या करता हूँ । जिस आपके पूजन करने पर हम साधक मनोवांछित मनोरथ को सम्पादन करते हैं ।

श्रेयश्च प्रेयश्च मनुष्यमेतस्तौ सम्परीत्य विविनक्ति धीरः ।

— कठोपनिषद्

इस असत् जगत् में श्रेय और प्रेय, हित और प्रिय मनुष्य के सामने परस्पर मिले हुए ही आते हैं । गुरु के बिना उन्हें बिलगाना असम्भव है ।

तद् विज्ञानार्थं स गुरुमेवाभिगच्छेत् समित्पाणिः श्रोत्रियं ब्रह्मनिष्ठम् ।

— मुण्डकोपनिषद्

तत् पदार्थ को विशेष रूपेण ज्ञान के लिये वह जिज्ञासु पाणि में समिधा लेकर शब्द ब्रह्म में निष्णात और परब्रह्म स्वरूप में भलीभाँति स्थित गुरु के ही समीप प्रणिपात, परिप्रश्न और सेवा भाव से जावे ।

तद्विद्धि प्रणिपातेन परिप्रश्नेन सेवया ।
उपदेक्ष्यन्ति ते ज्ञानं ज्ञानिनस्तत्वदर्शिनः ॥

— श्रीमद्भगवद्गीता

प्रणिपात, प्रश्न, सेवा के द्वारा उस तत्त्व को जान । ज्ञानी और तत्त्वदर्शी महात्मा तुझे ज्ञान का उपदेश करेंगे ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ॐ

स्वामी रामतीर्थ मिशन अलीगढ़

का

विराट् आध्यात्मिक सम्मेलन

—: 卐 :—

सब राम दरबार व सदस्यों को सूचित किया जाता है कि स्वामी रामतीर्थ मिशन अलीगढ़ का विराट् आध्यात्मिक सम्मेलन पूज्यपाद महामण्डलेश्वर श्री १०८ स्वामी अमरमुनि जी महाराज के संरक्षण में ता० २१ अक्टूबर से २४ अक्टूबर सन् ७८ तक मनाया जा रहा है।

अतः सब रामप्रेमियों से प्रार्थना है कि इष्टमित्र बन्धु बान्धव एवं परिवार सहित पधार कर सम्मेलन की शोभा बढ़ावें।

—: निवेदक :—

प्रधान	मन्त्री	प्रचार मन्त्री
आनन्दीलाल बंसल	हंसराज सचदेव	आचार्य रमेशचन्द्र ठक्कर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आश्रम समाचार

परमाध्यक्ष जी महाराज का श्री गीताभवन देहरादून में प्रवचन ३-९-७८ को तथा श्री गुरु रामराय दरबार का कार्यक्रम ५-९-७८ को सम्पन्न हो गया। इस मास आश्रम में परमपूज्य वेदान्ताचार्य ब्रह्मलीन श्री स्वामी गोविन्दप्रकाश जी महाराज की प्रथम पवित्र वर्षी १९-९-७८ को मनाई जा रही है।

सभी राम प्रेमियों का परम कर्तव्य है कि वह इस पवित्र अवसर पर आश्रम में पधार कर परम पूज्य ब्रह्मलीन श्री स्वामी जी महाराज के निमित्त होने वाले इस पवित्र आयोजन में ज्ञानामृत, प्रसादामृत को पान करते हुए अपनी अपनी स्नेहमयी, कृतज्ञतामयी वाक्य पुष्पाञ्जलि उनके चरणों में अर्पित करें।

६ अगस्त का साप्ताहिक सत्संग आश्रम में बड़े सुन्दर रूप से सम्पन्न हुआ। इस अवसर पर तपोमय ज्ञानस्वरूप श्री बाबा विश्वनाथ यति जी, ब्रह्मचारीजी, श्री काका हरिॐ जी, श्री सत्यप्रकाश जी के सुमधुर ज्ञानप्रद प्रवचनों से सभी रामप्रेमी आनन्द विभोर हो उठे। उपस्थित राम प्रेमियों को जनसमूह जो पहले कभी इतवार को आश्रम में नहीं दिखाई पड़ा था। अन्त में परमाध्यक्ष श्री स्वामी अमर मुनि जी महाराज ने अपने शुभाशीर्वाद में गुरु स्थान के दर्शनों के महत्त्व पर प्रकाश डाला। गुरु स्थान का सहभोजन परम पवित्र, ज्ञानवर्धक, पुण्यजनक प्रसाद रूप है। इन शब्दों के साथ परमाध्यक्ष जी ने सभी राम प्रेमियों को शुभाशीर्वाद दिया। ११ अगस्त को श्री काका हरिॐ जी श्री बालकराम जी हितकारी की पुण्य वर्षी में भाग लेने के निमित्त बम्बई चले गये थे। आश्रम में कुवैत निवासी बहिन शशिनन्दा पधारीं। २५ अगस्त को आश्रम में जन्माष्टमी का उत्सव बड़े धूम से सम्पन्न हुआ। इस पवित्र अवसर पर भगवान् श्रीकृष्णचन्द्र जी के आविर्भाव के समय ग्रामों के सैकड़ों निवासियों ने उत्सव के पवित्र समय पर मन्दिर में कीर्तन तथा सत्सङ्ग में भाग लिया जिसमें अनेक विद्वानों ने इस पवित्र समय के महत्त्व पर प्रकाश डाला। इस पवित्र पर्व पर परमाध्यक्ष जी ने देहरादून की अनेक संस्थाओं द्वारा आयोजित (जिनमें श्रीगीता भवन, श्री पञ्चायती मन्दिर, पैट्रोलियम इन्स्टीच्यूट प्रसिद्ध हैं) सत्सङ्गों में अपने मधुर वचन से भगवान् श्रीकृष्णचन्द्र जी के दीवानों को आत्मविभोर कर दिया।

— सम्पादक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दूरभाष– ८४२२५ राजपुर, ४२९७ देहरादून, तार का पता–(वेदान्त) देहरादून, रजि. नं. डी. एन. १५

सूचना

१– मासिक पत्रिका 'राम सन्देश' न मिलने पर अपने समीपस्थ डाकखाने (पत्रालय) से पता करने के पश्चात् हमें सूचित करें। क्योंकि कभी किसी कारणवश 'राम सन्देश' १५ ता० तक निकलता है। इसलिए शिकायत पत्र अपनी अपनी ग्राहक संख्या सहित दिनांक २० के बाद प्रेषित करने का कष्ट करें।

२– आप आश्रम में किसी भी प्रकार का धन भेजते समय यह लिखना न भूलें कि वह धन किस निमित्त भेजा जा रहा है तथा चैक स्वामी रामतीर्थ मिशन के नाम पर ही भेजें।

३– यह प्रार्थना है कि जो पाठक इस पत्रिका के आजीवन सदस्य बनना चाहते हैं वे अपना सदस्यता शुल्क सम्पादक के नाम प्रेषित करें। सदस्यों को आजीवन पुनः बिना किसी शुल्क के यह पत्रिका प्रेषित की जायेगी।

४– स्वामी रामतीर्थ मिशन, राजपुर देहरादून के आजीवन सदस्यों को कार्यकारिणी की १९७७ गोष्ठी के निर्णयानुसार यह सूचित किया जाता है कि सदस्यता शुल्क वार्षिक १२ रु० के स्थान पर २० रु० कर दिया गया है तथा उन सदस्यों को मासिक पत्रिका का प्रेषण मास जनवरी १९७८ से निःशुल्क किया जायेगा। अतः सदस्य अपना वार्षिक शुल्क भेजते समय १२ रु० के स्थान पर २० रु० प्रेषित करने का कष्ट करें।

५– 'राम सन्देश' के विदेशी ग्राहक अपना वार्षिक शुल्क १५ रु० भेजें। क्योंकि परमाध्यक्ष जी की आज्ञानुसार १२ रु० के स्थान पर ३ रु० वृद्धि का निर्णय लिया गया है।

बुक पोस्ट

ग्राहक संख्या ५३९

श्री/श्रीमती गुरुकुल पुस्तकालय

स्थान गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय

डाकखाना हरिद्वार

जिला सहारनपुर

मासिक पत्र—
"राम – सन्देश"
स्वामी रामतीर्थ मिशन
राजपुर, देहरादून (यू. पी.)
Pin– 248009 भारत.

स्वामी रामतीर्थ मिशन, राजपुर देहरादून (उ० प्र०) के लिए प्रकाशक स्वामी अमर मुनि द्वारा शहन्शाही सर्वहितकारी प्रेस, राजपुर (देहरादून) में, मुद्रित।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राम - सन्देश

पुस्तकालय
गुरुकुल कांगड़ी
7/12/78

दिसम्बर १९७८

संस्थापक—
ब्रह्मलीन स्वामी हरिॐ जी महाराज

संवर्धक—
ब्रह्मलीन स्वामी गोविन्दप्रकाश जी महाराज

व्यवस्थापक—
स्वामी अमर मुनि जी महाराज

सम्पादक—
काका हरिॐ "निर्द्वन्द्व"

आजीवन सदस्यता शुल्क—

भारत में — १०० रु०
विदेश में — ५०० रु०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

* विषय-विज्ञान *

विषय	लेखक	पृष्ठ
चेतावनी !	... सूरदास जी	१
मृत्यु के बाद	... स्वामी राम	२
ईश्वर प्रेम और विश्वास	... ब्रह्मलीन स्वामी हरिॐ जी महाराज	४
राम-परिचय	... रायबहादुर लाला बैजनाथ जी जज	७
सत्सङ्ग-महिमा	... संकलित	१०
आश्चर्य क्या है !	... श्री धर्मानन्द जी शास्त्री	१२
सन्त-वाणी	... मलूक दास जी	१३
दर्शन की इच्छा	.... श्री विद्यावाचस्पति डा० आर० वी० त्रिवेदी	१४
मन और जीवन	... श्री गुणानन्द जी थपलियाल	१७
कृतज्ञता	... श्री अगरचन्द जी नाइटा	१८
जीवन दुःखपूर्ण क्यों ?	.... (उपनिषद्)	२२
आश्रम समाचार	... सम्पादक	२३

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

❀ ॐ ❀

'राष्ट्र के हित के लिए प्रयत्न करना ही विश्व की शक्तियों अर्थात् देवताओं की आराधना है'–स्वामी राम

वेदान्त, अध्यात्म, संस्कृति, धर्म एवं भक्ति का सजग सन्देशवाहक तथा
स्वामी राम के आदर्शों का एकमात्र लोकप्रिय मासिक—

राम सन्देश

वेदोपनिषदां तत्त्वम् सत्यं नित्यं सनातनम् ।
तत्सर्वं "रामसन्देशे" पत्रेऽस्मिन्नवलोक्यताम् ॥

वर्ष २७
अंक १२

राजपुर– देहरादून— दिसम्बर १९७८.

वार्षिक भेंट १०)
एक प्रति ८५ पैसे

चेतावनी !

भजन बिनु बैल बिराने ह्वैहौ ।
पाउँ चारि, सिर सींग; गूँग मुख, तब कैसें गुन गैहौ ॥
चारि पहर दिन चरत - फिरत बन, तऊ न पेट अघैहौ ।
टूटे कंध अरु फूटी नाकनि, कौ लौं धौं भुस खैहौ ॥
लादत - जोतत लकुट बाजिहैं, तब कहँ मूंड दुरैहौ ।
सीत-घाम-घन विपति बहुत विधि, भार तरैं मरि जैहौ ॥
हरि - संतन कौ कह्यौ न मानत, कियौ आपनौ पैहौ ।
'सूरदास' भगवंत भजन बिनु, मिथ्या जनम गँवैहौ ॥

— सूरदास

—❀—❀—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मृत्यु के बाद

१५ जनवरी, १९०३ को स्वामी रामतीर्थ जी द्वारा अमेरिका में दिया गया प्रवचन

माताओं तथा भाइयों के रूप में धर्मों के अवलम्बी अमरात्माओ !

इस हाल में अभी तक जो प्रवचन दिये गये हैं उनका विषय जटिल एवं असामान्य था। आज का प्रवचन अपेक्षाकृत सरल होगा।

कई वर्ष हुए जब राम भारत के पूर्वी भाग में विचरता था, उसे "मृत्यु के बाद' शीषक से अमेरिका के एक प्रतिष्ठित डाक्टर द्वारा लिखित पुस्तक पढ़ने को मिली। लेखक उस भाग में स्थापित एक विश्वविद्यालय के प्राध्यापक थे। उस पुस्तक में बड़ी सुन्दरता से इस बात का प्रतिपादन किया गया था कि यह संसार एक स्टेशन है जहाँ से संसारी टिकट खरीद कर दूसरे स्टेशन के लिये जाते हैं जो समुद्रों, अन्तर्द्वीपों, खाड़ियों आदि के वार पार दूसरे छोर पर स्थित हैं। जो यात्री बिना टिकट यात्रा करते हुए पकड़े जाते हैं, उन्हें मार्ग में उठा कर बाहर समुद्र में फेंक दिया जाता है और जो यात्री 'सही' टिकट लेकर सवार होते हैं वे वेखटके दूसरे स्टेशन पर जा उतरते हैं, जो उनका निर्धारित स्थान है। यात्रा के लिये सभी श्रेणियों के लिये टिकट होते हैं— प्रथमा, द्वितीया, तृतीया आदि। इन टिकटों में भी श्वेत, काले, पीले, हरे आदि रंगों के नकली टिकट होते हैं, जो यात्रा में उपयोगी नहीं होते। लेखक का दावा है कि केवल लाल रंग के टिकटधारी (जो ईसा मसीह के रक्त से सने होने के प्रतीक हैं) अपनी यात्रा सफलतापूर्वक सम्पन्न करते हैं, जब कि अन्य रंगों वाले टिकटधारी वहाँ तक नहीं पहुँच पाते।

लेखक ने जिन दूसरे रंगों (जैसे श्वेत, काले, पीले, हरे आदि) के टिकटों का उल्लेख किया है, वे अन्य धर्मों के प्रतीक हैं। इससे यह पता चला कि सही रंग के टिकट (लाल) केवलमात्र ईसाइयों को प्राप्त होते हैं। माननीय लेखक ने उस पुस्तक को लिखने में अपनी सर्वस्व शक्ति खर्च कर दी।

इस प्रकार की धारणा ईसाई मतावलम्बियों की ही नहीं है वरन् कतिपय अन्य धर्मों के अनुयायियों द्वारा भी व्यक्त की जाती है। इस्लाम धर्म के अनुसार मृत्यु के बाद व्यक्तियों को वहाँ का स्टेशन मास्टर, जो उनके कर्मों का लेखाजोखा करता है, उन्हें स्वर्ग (वहिश्त) या नरक (दोज़ख) में भेज देता है। ये हैं हज़रत मुहम्मद। कुछ अन्य धर्मों में भी ऐसा ही विश्वास पाया जाता है। उनके मतानुसार है कि सभी व्यक्ति (वे किसी भी महाद्वीप, देशादि से सम्बन्ध क्यों न रखते हों) मरने के बाद अपने अपने शुभ व अशुभ कर्मों के अनुसार किसी न किसी दैवी शक्ति (जैसे ईसा मसीह, हज़रत मुहम्मद, भगवान् बुद्ध, जॉरस्तर, भगवान् श्रीकृष्ण आदि) द्वारा उनके कर्मों के अनुसार स्वर्ग अथवा नरक में भेजे जाते हैं। भिन्न धर्मों एवं मत-मतान्तरों में जो पारस्परिक वादविवाद देखा जाता है, उसका मुख्य कारण इन धारणाओं में विविधता का होना है। इस संघर्ष के कारण ही संसार में एक दूसरे का खून बहाया गया है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस प्रसंग में आपके सामने वेदान्त का मत रखा जायेगा, जो इन सभी धर्मों की धारणाओं का समुचित ढंग से समाधान करता है। वेदान्त इन धर्मों की धारणाओं को सही मानता है, परन्तु उसके द्वारा इस तथ्य की पुष्टि की जाती है कि किसी धर्म-विशेष को यह कहने का अधिकार प्राप्त नहीं है कि दूसरे धर्मों की ऐसी ही धारणायें मिथ्या हैं और खेलमात्र उसका दावा सही है।

संसार की समूची प्रगति सनातन सौन्दर्य में निहित है। विश्वव्यापी विकास एवं प्रगति लय (समस्वरता) से घटित होती है। जगत का प्रकम्पन भी समस्वरता में होता है। हम नियमित रूप से उत्थान-पतन, उत्कर्ष-अपकर्ष आदि की अनुभूति करते हैं। गणित शास्त्र में एक ओर अधिकतम बिन्दु तथा दूसरी ओर न्यूनतम बिन्दु रहता है; ये दोनों क्रमशः एक दूसरे का स्थान लेते रहते हैं। वर्ष में ऋतुएँ क्रमानुसार आती-जाती रहती हैं। इसे हम 'आवधिक' गति की संज्ञा देते हैं। यह गति संसार के चक्र में भी दृष्टिगोचर होती रहती है, हम प्रतिदिन सोने के बाद जागते तथा जागने के बाद सोते हैं। वेदान्त का मत है कि जागने-सोने की क्रिया के अनुसार जीवन-मृत्यु तथा मृत्यु-जीवन का क्रम भी गतिमान होता रहता है। संसार की किसी भी प्राकृतिक प्रक्रिया के आकस्मिक रुक जाने की हमें अनुभूति नहीं होती। क्या कभी समय रुक जाता है ? कभी नहीं। क्या हम जानते हैं कि काल का प्रारम्भ कब हुआ ? क्या कभी अन्तरिक्ष स्थिर हो जाता है। कदापि नहीं। क्या नदियों का प्रवाह रुक जाता है ? इसका उत्तर भी 'नकारात्मक' है। समुद्र में जाकर गिरने वाली नदियाँ वाष्प के रूप में बदल कर पुनः पर्वत पर लौटती रहती हैं और प्रवाहित होकर समुद्र से मिलने के लिये गतिमान होती हैं। यह क्रम अनवरत रूप से चलता रहता है। जल रही एक मोमबत्ती घंटे-डेढ़ घंटे के बाद जल जाती है और तब हम कहने लगते हैं कि बत्ती बुझ गयी। यह कथन सत्य नहीं है। वह बत्ती वस्तुतः दूसरे रूप में बदल गयी और उससे जिस कार्बनडायोक्साइड तथा जल की सृष्टि हुई वह सब्जियों में पुनः प्रकट होती है; वह किसी प्रकार समाप्त नहीं हुई। संसार में जो भी प्रगति होती है वह गोलाकार (अण्डाकार) में गतिमान होती है। तुम जगत में जीवित रहने के बाद मृत्यु को प्राप्त होते हो और उसके बाद जन्म लेते तथा गतिमान होते हो। अतः धर्मों अथवा मत-मतान्तरों को ऐसी उक्तियों का प्रचलन करने का कोई अधिकार नहीं है, क्योंकि यह कहना अथवा मानना प्रकृति के नियमों के सर्वथा प्रतिकूल है कि मृत्यु के उपरान्त सदा के लिये भयावनी स्थिति बनी रहती है और फिर जीवन की प्राप्ति नहीं होती है। यदि कोई प्राणी मृत्यु के बाद ईश्वर द्वारा तिरस्कृत किया जाता है तो वह ईश्वर प्रतिकार (बदले) की भावना से प्रेरित होगा। कल्पना कीजिये कि कोई व्यक्ति सत्तर वर्ष की आयु व्यतीत करके देह त्याग करता है। मान लीजिए कि इतने वर्ष के जीवन में वह परिस्थितिवश निर्धन माता-पिता के द्वारा यथोचित शिक्षित न किया जा सका। इस प्रकार वह गिरजाघर भी न जाकर आत्मोत्थान के लिये किसी उपाय को न अपना पाया। उसके पास ईसामसीह के रक्त से रंजित 'टिकट' भी नहीं है, तो क्या उसे मरने के बाद सदा के लिये 'नरक' की यातनायें सहन करनी होंगी ? क्या ऐसा निर्दयी गॉड (ईश्वर) निर्दयी और बदले की भावना वाला न होगा ? न्याय की दृष्टि से आपको ऐसी उक्तियों का प्रचार करने का कोई भी अधिकार प्राप्त नहीं है।

(क्रमशः)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ईश्वर प्रेम और विश्वास

ब्रह्मलीन स्वामी हरि ॐ जी महाराज

[व्यावहारिक जीवन में हम देखते हैं कि प्रेम का स्वरूप तभी स्थायी रह पाता है जबकि प्रेमियों में परस्पर दृढ़ विश्वास हो। यही धारणा ईश्वर-प्रेम के विषय में है। बिना विश्वास के ईश्वर से अपने प्रेम का प्रतिफल पाने की इच्छा कोरी मृग-तृष्णा है। विश्वास उत्पन्न होने के पश्चात् भी उसका लाभ हाथों हाथ नहीं प्राप्त होता। क्योंकि पूर्व जन्म के पापों का ऋण भी पहले चुकाना पड़ता है। इन्हीं विचारों की विस्तृत रूप-रेखा स्वामी जी के निम्नलिखित प्रवचन में पढ़िये ! —सम्पादक]

जिस स्थिति में भी हम हैं। हमें परमात्मा के नाम का लाभ प्राप्त करना चाहिये। जैसे छोटे घरों में भी हम आकाश की छत को उसी तरह देखते हैं और जब हम उसकी छोटी छत को तोड़ देते हैं तब हम आकाश की उस बड़ी भारी छत के नीचे आ जाते हैं। इसी तरह मनुष्य चाहे जिस स्थिति में हो उसे अध्यात्म-विचार करना ही चाहिये। धीरे-धीरे विश्वास बढ़ता जायगा।

कई व्यक्ति कहते हैं कि सत्संग से कुछ लाभ नहीं। किन्तु ऐसा नहीं। प्रत्येक कर्म अपना फल देता है। यह तथ्य है। जैसे हमने किसी को पांच हजार रुपया देना है और वह हमें २५० रुपये पर नौकर रख लेता है तो जब तक हमारा पाँच हजार रुपये का कर्जा नहीं उतरता तब तक वह हमें कुछ नहीं देगा। जब कर्जा उतर जाता है, तब २५० रुपये मिलने लगते हैं। इसी प्रकार जब हम शुभ कर्म करते हैं तो हमें प्रारम्भ में कोई लाभ नहीं दीखता। परन्तु कुछ समय पश्चात् वह हमारे पूर्व-जन्म के तथा इस जन्म के पापों को नष्ट करके अन्तःकरण को साफ कर देता है।

योगी को अपने योग पर गौरव होता है। इसकी कोई बुनियाद नहीं। ईश्वर पर हमारा जितना दृढ़ विश्वास होगा उतना ही हमारा मार्ग सुगम हो जायगा। जितना एक स्त्री को अपने पति पर विश्वास होता है उतना ही विश्वास यदि भगवान् पर हो जाय तो बेड़ा ही पार है। परन्तु होता नहीं।

कुछ लड़कियाँ देहात से दूध लाकर शहर में बेचा करती थीं। जिस बाजार से होकर वे जाती थीं वहाँ एक मन्दिर था, जहाँ पंडित जी कथा किया करते थे। कथा में एक दिन प्रसंग आया कि—'राम नाम एक जहाज है, चढ़े सो उतरे पार' अर्थात् राम का नाम एक ऐसी नौका के समान है जिस पर चढ़कर मनुष्य भव-सागर पार हो जाता है। यद्यपि वे लड़कियाँ अनपढ़ थीं, किन्तु उन्हें इस पर दृढ़ विश्वास हो गया। जिस मार्ग से वे जाती थीं उसमें नर्वदा नदी भी पड़ती थी। उन्होंने सोचा यदि राम नाम की नौका भव-सागर से पार कर देती है तो हमें भी इस नदी से अवश्य पार करा देगी। वास्तव में विश्वास ही परमात्मा है। सचमुच ही वे राम नाम कहती हुई नदी से पार हो जाती हैं।

एक दिन वे कहती हैं कि— पंडित जी ने हमें कितना सुन्दर मार्ग बताया है, चलो उनको भोजन के लिये कहेंगी। दूसरे ही दिन लड़कियाँ भोजन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का तैयार सामान घर पर रखकर उन्हें बुलाने आईं। पंडित जी उनके साथ हो लिये। लड़कियाँ तो राम-नाम लेकर पार हो जाती हैं, पर पंडितजी वहीं खड़े रह जाते हैं। लड़कियाँ बुलाती हैं कि पंडित जी आइये ! वे कहने लगे कि—ऐसे तो मैं डूब जाऊँगा, तुम पार होने के लिये एक रस्सा लाओ और तब रस्सा आने पर उसे बाँध कर पंडित जी पार उतरते हैं। कहने का तात्पर्य यही है कि पंडित जी को विश्वास नहीं था।

हम विचार करते हैं कि इसमें क्या रखा है ? यदि हमारा निश्चय नहीं तो हममें शक्ति नहीं। स्वामी विवेकानन्द जी ने कहा है–जीव ! तेरा यदि भगवान् पर एक पैसा भर भी विश्वास हो तो तू भव से पार है। नारद जी कहते हैं कि हे प्रभु ! आपके प्रेम की कुछ सीमा भी है ? भगवान्ने उत्तर दिया—हे नारद ! यदि जीव अपने पुत्र जितना भी मुझे प्रेम करे तो मैं तत्काल ही उस पर प्रसन्न हो जाता हूँ। यदि पड़ोसी का लड़का हो तो हम उसे पुत्र कह देते हैं। परन्तु उसके साथ पुत्र जैसा वर्ताव नहीं करते। इसी तरह यद्यपि हम मुख से कह देते तो हैं कि हे प्रभो ! हम तेरे हैं, परन्तु कर्तव्य में ऐसा नहीं लाते।

मैं तो कहता हूँ कि हम तो भंगी जितना भी प्रभु से प्रेम नहीं करते। यदि भंगी एक दिन न आये तो हम उसकी खुशामद करते हैं। और कहते हैं कि भाई पांच रुपये की बजाय सात रुपये ले लो पर दोनों वक्त साफ कर जाया करो। हम भंगी को तो महीने बाद सात रुपये देने को तैयार हैं लेकिन भगवान् को तो सात पैसे भी महीने बाद देने को तैयार नहीं हैं। इसका तात्पर्य यह है कि परमात्मा की जरूरत हमारे लिये थोड़ी है। जबकि परमात्मा की प्राप्ति में जीव दीवाने हो जाते हैं। जितना प्रेम पुत्र से है उतना यदि भगवान् से हो तो नैया ही पार हो जाय।

नारद जी मृत्यु-लोक में आते हैं। एक बूढ़ा बाबा बैठा रो रहा था। नारदजी ने उससे रोने का कारण पूछा। वह कहने लगा—मेरे पास लाखों रुपये थे जि हें मैंने अपने पांचों पुत्रों को बाँट दिये। वे कहने लगे कि हमारे रहते हुए तुम कारोबार न करो, हम करेंगे, अब आप भजन करिये। मैंने सब कुछ उन्हें दे दिया। उन्होंने मुझे एक ऊपर का कमरा दे दिया और वे खुद नीचे रहते थे। जब मेरे पास कुछ न रहा तो मुझे आवाजें देनी पड़ीं।

एक दिन उन्होंने विचार किया कि मुझे आवाज देने की तकलीफ है, इसलिये एक एक घंटी लगवा दी। लेकिन मेरे घंटी बजाने पर भी कोई मेरे पास नहीं आया, हार कर जब नीचे उतरा तो किसी ने बात तक भी नहीं पूँछी।

इसी तरह जब बाबा खाँसा, तो बलगम वहीं पड़ा रह गया। जब पोता कालिज से आया तो पोते ने दो-चार जूते बाबा के लगा दिये। तब नारद जी कहने लगे—'चलो मैं तुम्हें वैकुण्ठ ले चलूँ।' बाबा ने उत्तर दिया—'जरा सोच लूँ।' मुझे अपने ने ही तो मारा है, किसी विराने ने तो नहीं। नारद जी के सारे मृत्युलोक में तलाश करने पर भी कोई वैकुण्ठ जाने वाला नहीं मिला। वही बूढ़ा बैठा था। नारद जी ने फिर पूछा—'चलोगे वैकुण्ठ ?' बूढ़ा कहने लगा—'मैं ही वैकुण्ठ जाने वाला रह गया हूँ ?'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नारद जी चले गये और भगवान् से कहने लगे कि कोई भी जीव सुख प्राप्त करने को तैयार नहीं। इसी तरह यह जीव सुख की ओर आना ही नहीं चाहता। अन्तकाल में जब सम्बन्धी उसे उठाते हैं तो कहते हैं कि राम-नाम सत्य है।

कबीर के घर में कोई पुरुष आते हैं तो लोई कहती है कि वह तो घर में नहीं हैं। किसी के मरने पर श्मशान गये हैं। आप वहाँ जाकर उनसे मिल लें। आगन्तुक ने पूछा—'उनकी पहचान क्या है ?' लोई ने उत्तर दिया कि जब श्मशान के अन्दर सब जायेंगे तब तो सबके सिर पर कलगी होगी, लेकिन जब बाहर निकलेंगे तो एक ही आदमी के सिर पर कलगी होगी। वही कबीर होगा।

इसका तात्पर्य यह है कि श्मशान में खड़े हुए सबको याद था कि हमने भी यहीं आना है, परन्तु बाहर आकर भूल जाते हैं। कबीर जी कहते हैं कि मैं नहीं भूला।

यह संसार असार है, जिस पेट के लिये हम रात-दिन पाप करते हैं यही अज्ञान है। आप हिन्दू-कुल के हैं इसलिये हिन्दूधर्म को अपनाना आपका कर्तव्य है। आपको सद्ग्रन्थ पढ़ने चाहिये। यदि किसी को सुख नहीं दे सकते, तो अपने लिये ही करें। जो वस्तु जहाँ उत्पन्न होती है वहाँ ही आकर लय हो जाती है।

आप जब परोपकार करते हैं तो जो भावनायें बाहर जाती हैं फिर आप में ही आ जाती हैं। पहले राजा लोग राज्य का त्याग करके सन्तों की सेवा करते थे। एक राजा को मालिन के वचन सुनकर ही वैराग्य हो गया था। मालिन राजा के महल के नीचे से जाती थी और कहती थी—

"समय बड़ो थोरो, जाना बड़ी दूर।"

यह सुनकर राजा को ध्यान आया कि उसका बचपने भी गया, जवानी भी गई। क्या इस जंजीर में मैं अपना समय व्यतीत कर रहा हूँ ? परन्तु मनुष्य प्रयत्न करे, प्रभु से प्रार्थना करे कि हे प्रभो ! इस मोह-ममता की जंजीर से मैं कब छूटूँगा ?

सत्संग में सब विघ्न दूर होते हैं। जो हजारों वर्ष तप करने से भी बात समझ में नहीं आती वह सत्संग में थोड़े से ही समय में आ जाती है।

ओ३म्।

—०—

हम वास्तव में जो कुछ हैं उसी तरह हमें अपने को प्रकट करना चाहिये। जो हम नहीं हैं उसे हमें नहीं दिखाना चाहिये। यदि हम में महात्माओं के गुण नहीं हैं तो महात्मा बनने का ढोंग नहीं करना चाहिये। पाखंडी समझता है कि मैं संसार को और ईश्वर को धोखा दे सकता हूँ, किन्तु ऐसा होता नहीं। हाँ, वह अपने को अवश्य धोखा दे रहा है और इस कपट के लिये ईश्वर की ओर से उसे उचित दण्ड भी भोगना पड़ता है।

— स्वामी विवेकानन्द

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राम-परिचय

रायबहादुर लाला बैजनाथ जी जज

... तीसरे महापुरुष, जिनसे मेरा घनिष्ठ परिचय था और जिनके साथ मैंने काम किया था, पंजाब के स्वामी रामतीर्थ एम० ए० थे। आप उन उत्तम और उत्कृष्ट आत्माओं में से थे, जो आत्मा की उच्चतम आकांक्षाओं की प्राप्ति का आदर्श उपस्थित करने के लिए कभी-कभी मानव जाति के मध्य में आया करती हैं। स्वामी जी ने पंजाब गुजरानवाला जिले के एक धर्म परायण ब्राह्मण वंश में जन्म लेकर और कोई पूँजी पास न होते हुए भी २०-२१ वर्ष की अवस्था में, पंजाब युनिवर्सिटी में गणित में एम० ए० पास करके नाम पैदा किया। इसके बाद वे लाहौर के फोरमैन किश्चियन कॉलेज के प्रोफेसर बनाये गये। परन्तु उपनिषदों के महान् सिद्धान्त 'तत्वमसि' (वह तू है) की सत्यता का प्रत्यक्ष अनुभव करने के लिए वे शीघ्र ही अपने इस पद तथा कुटुम्बियों और मित्रों से सारा सम्बन्ध त्याग कर हिमालय की ओर चल दिये। बगल में उपनिषद् की एक पोथी दबी हुई है, साथी है जंगल के पशु-पक्षी और पहाड़ी गंगा का स्वच्छ जल। गरमी, सर्दी और बन की सभी मुसीबतों को झेलता हुआ, जीवन की समस्याओं पर गम्भीर विचार में रत, यह नवयुवक बरसों तक लगातार भटकता रहा। कभी वह कैलाश-शिखर पर चढ़ता है, तो कभी काश्मीर में अमरनाथ की यात्रा कर रहा है। यदि आज यमुना के मूल-स्थान-यमुनोत्तरी के दर्शन करने गया है। तो कल गंगा के मूलस्रोत गंगोत्री जायगा। नित्य नदी के तट पर विचार में बराबर दिन पर दिन बिता रहा है। इतने पर भी जब वह अनुसन्धान की वस्तु को प्राप्त न कर सका, तो संसार का अस्तित्व भूल कर उसने अपने शरीर को गंगा में डाल दिया और लो, गंगा ने उसे उठाकर एक चट्टान पर बिठा दिया। अन्त को २५ वर्ष की अवस्था में ही १८९८ में उसे उस वस्तु की प्राप्ति हुई, जिसे वह ढूंढ़ रहा था।

अब वह अपने आपको भारत की सेवा में लगाने के लिए पहाड़ों से नीचे उतर कर जन-समाज में आता है, और अनेक सम्प्रदायों तथा राष्ट्रों के हजारों मनुष्यों को उपदेश देता है।

केवल अपनी ज्ञान-पिपासा और मनोहर व्यक्तित्व के बल पर ही वह लोगों को अपना अनुयायी बना लेता है। वह शारीरिक आराम-चैन से बेपरवाह है, जो कुछ सादा से सादा भोजन उसे मिल जाता है! वह कर लेता है और जीवन की अनिवार्य आवश्यकताओं की वस्तुओं के सिवा कोई भी चीज कभी अपने साथ नहीं रखता (रुपया पैसा या वस्त्र अथवा दूसरी चीजें ज्यों ही उसे भेंट की जाती हैं) वह दूसरों को दे देता है। इस सन्यासी द्वारा प्रेमी भक्तों के दिये हुए स्वादिष्ट भोजन इस प्रकार त्याग दिये जाते हैं कि जो लोग सत्य का जीवन व्यतीत करने की आकांक्षा रखते हैं कि उनके भाग्य में रहता है केवल उच्च विचार और सादा रहन-सहन। न अपनी श्रेष्ठता का व्याख्यान, न आचरणों का अभिमान और न अपनी बड़ाई का मान। जिस किसी का इस स्वामी से संसर्ग हो जाता है, वही उसकी मुस्कराहटों से मोहित हो जाता है, और उसे जान पड़ने लगता है मानो उसके सब संकट और दुःख उस समय दूर हो गये। उन्हें अध्ययन का अनुराग इतना अधिक था कि थोड़े ही समय में पाश्चात्य धार्मिक और तात्विक पुस्तकों का पूरा पुस्तकालय ही पढ़ डाला। उपनिषदों के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ऋषियों, व्यास, कृष्ण, शंकर, बुद्ध के वाक्य उतने ही उनकी जिह्वा के अग्र भाग पर थे, जितने कि शम्स तबरेज और मौलाना रूम के। कान्ट शोपेनहार, फिचटे और हिगेल उनके उतने ही परिचित थे, जितने कबीर और नानक। परन्तु उर्दू काव्य स्वामी जी का विशेष विषय था और लक्षणों से प्रतीत होता है। उनके पद्य भारतियों में वेदान्त के अन्य अनेक प्रमाणभूत श्लोकों की तरह प्रचलित हो जायेंगे।

सन् १९०२ में हम उन्हें जापान होकर अमेरिका जाता हुआ पाते हैं। वहाँ उन्होंने दो वर्ष के काल में अनेक विद्वान् और अग्रणी जनों को अपनी ओर आकृष्ट कर लिया। अमेरिका की ग्रेट पैसिफिक रेलरोड कम्पनी के प्रबन्धकर्ता ने उन्हें 'पुल मैनकार' में स्थान देते हुए कहा था—"उनकी मुस्कराहट दुर्निवार है।"

अमेरिका में अपने भक्तों की पूजा-अर्चा से ही उन्हें सन्तोष नहीं हुआ, वहाँ वे भारत का हित संधान करने के लिये प्रयत्न करते रहे। कार्य करना, निरन्तर कार्य करना, उनका मूल मंत्र था। वे कहते थे—"हमारे सामने ठीक तरह का यज्ञ (बलिदान) अर्थात् दीनों की सेवा और रक्षा करने और इस यज्ञ को इस प्रकार करने का प्रश्न है कि कार्य अपने उद्देश्य को ही नष्ट न कर सके। प्रत्येक भारतवासी को अपने से छोटों को, चाहे वे पद धन, विद्या या शक्ति किसी में छोटे हों, अपने बच्चों की तरह मनाना और उनकी सहायता करनी चाहिए और बिना किसी पुरुस्कार की इच्छा से माता के उस आनन्द को, जो उत्साह और प्रेमरूपी आत्मिक भोजन के देने से मिलता है। प्राप्त करना चाहिए। वही वास्तविक निष्काम यज्ञ है। जैसा कि उन्होंने अपने निराले ढंग से कहा था—

"आवश्यकता है, सुधारकों की
उनकी नहीं, जो औरों को सुधारते हैं।
किन्तु उनकी जो अपने आपको सुधारना चाहते हैं।
उनकी नहीं, जिन्होंने विश्व विद्यालय की डिग्रियाँ प्राप्त की हैं।
किन्तु उनकी जिन्होंने अपने आप पर विजय पाई है।
अवस्था-ब्रह्मानन्द की जवानी।
वेतन-ईश्वरत्व।
शीघ्र प्रार्थना पत्र भेजो—
जिसमें भिखमंगों की सी दीन याचना न हो,
किन्तु हो जिसमें आदेशपूर्ण निश्चय
विश्व के संचालक, अर्थात् अपने आपको।"

पश्चिम में दो वर्ष रह कर स्वामी जी भारत लौटे, परन्तु इतने ही समय में वहाँ की असली जिन्दगी का जो ज्ञान उन्होंने प्राप्त किया, वह किसी दूसरे मनुष्य को बीसों वर्षों में भी नहीं हो सकता था। इस ज्ञान को उन्होंने उदारतापूर्वक अपने लेखों और व्याख्यानों द्वारा अपने देश वासियों के चरणों में रखा है। उनके समस्त लेख और व्याख्यान पूर्व के पाण्डित्य और पश्चिम के व्यावहारिक जीवन की छाप से अंकित होते थे। भारत के लिये हल करने योग्य जो प्रश्न हैं उन्हीं के शब्दों में सुनिये—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व्यावहारिक बुद्धि की दरिद्रता के साथ-साथ यहाँ पर जन संख्या की अधिकता है। शारीरिक श्रम से घृणा, जाति-पाँति के अस्वाभाविक विभाग, विदेश यात्रा का विरोध, बाल विवाह और स्त्रियों के व्यापक शारीरिक और बौद्धिक अन्धकार में रहने को विवश करना आदि सब बातें इस व्यावहारिक बुद्धि के अभाव के ही अन्तर्गत हैं। पूर्व पुरुषों से दाय (बरसा) मिले बिना हमारा काम नहीं चल सकता। जो समाज इस बरसे का त्याग करता है। वह अवश्य बाहर से नष्ट हो जायगा। उन बड़े आदमियों से जिनके विचार छोटे हैं, देश बलवान् नहीं होता परन्तु उन छोटे आदमियों से जिनके विचार बड़े हैं देश बलिष्ट होता है। एक भारतीय घर समग्र राष्ट्र की अवस्था का प्रतिनिधि है। दरिद्रता का हेतु केवल आमदानी की कमी और खाने वालों की हर वर्ष वृद्धि नहीं है, परन्तु निरर्थक और निष्ठुर रीतियों में अनुचित खर्च करने की गुलामी भी है। यदि आबादी की समस्या बिना हल किये छोड़ दी गई, तो राष्ट्रीय एकता और राष्ट्रीय मैत्री की सभी चर्चा निष्फल होगी। विदेश यात्रा से जाति या धर्म के नष्ट होने का विचार दूर करना भी इसकी एक औषध है। यह धारणा त्यागी जानी चाहिए कि बच्चों के होने पर ही स्वर्ग में प्रवेश निर्भर करता है। विवाह को पूर्ववत् मधुर सम्बन्ध बनाना चाहिए। बिना शुद्धता न वीरता है न एकता और न शान्ति। शिक्षा के क्षेत्र में प्रधान कर्तव्य हमारे सामने गरीबों और स्त्रियों को शिक्षा देना और अधिक उन्नत देशों में जाकर कृषि विद्या और कला कौशल सीखना तथा उन उपयोगी विद्याओं को भारत में खूब फैलाना है। यदि विश्वास की लौ प्रज्वलित ज्ञान की मशाल तुम्हारे हृदय में सजीव नहीं है, तो तुम एक कदम भी नहीं बढ़ सकते। जवानी जमा खर्च की अपेक्षा, प्रकृति की गहराई में रहना, अपने अस्तित्व की गहराइयों को नापना तुममें जो आन्तरिक वास्तविकता है, जो प्रकृति में भी आन्तरिक वास्तविकता है, उसे अनुभव करना और प्राप्त करना, "तत्वमसि की जीती-जागती मूर्ति होना, यही जीवन है। यही अमरता है।"

किसी धर्मोपदेशक और किसी समाज-सुधारक ने इस प्रश्न को महामना स्वामी जी से बढ़कर न तो अधिक स्पष्टता से वर्णन किया है और न गुत्थी को सुलझाया है। खेद इसी बात का है कि भारत में उनके कथनों की सत्यता का अनुभव करने वाले बहुत थोड़े लोग हैं।

अस्तु, थोड़े दिनों तक मैदानों में काम करने के बाद वे अपने साधारण अध्ययन और ध्यान करने के लिए हिमालय में एकान्तवास को चले गए और ३३ वर्ष की अवस्था में टिहरी के निकट, स्नान करते समय गंगा में डूब जाने के कारण उन्होंने यह शरीर त्याग दिया।

उनके उपदेश का उद्देश्य सारे पूर्व की दार्शनिक बुद्धिमता से मेल कराना था।

न आत्म-अपकर्ष, न जान-बूझकर सिसक-सिसक कर आत्महत्या, न संसार से बिलकुल विलगता, संयम शून्य और विवेक रहित वंश-वृद्धि, न अज्ञानता और समता में तृप्ति, न भूतकाल का विचारहीन और निर्बलकारी संकीर्तन और न वर्तमान न भविष्य का विस्मरण परन्तु पुराने आडम्बरों का त्याग और अन्धविश्वास का दूरी करण यही उस महान् ऋषि का संदेश है। उनके प्रभाव का अन्त उन्हीं के साथ नहीं हो गया वरन् हर साल वह धीरे-धीरे और तत्परता से केवल हमारे नव युवकों में ही नहीं, प्रत्युत साधु समाज में भी, जो पहले उनकी उपेक्षा करता और उन्हें शंकालु दृष्टि से देखता था प्रवेश करता जाता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सत्सङ्ग-महिमा

महात्मा अनाथ दास जी सत्संग-महिमा दर्शाते हुए शिष्य की शंकाओं की निवृत्ति करते हैं। शिष्य ने प्रश्न किया— "हे भगवन् ! सत्संग की प्राप्ति निमित्त जो क्रिया है उसका भी कुछ फल होता है या नहीं ?" गुरुदेव इसका स्पष्टीकरण इन शब्दों में करते हैं—

विधिवत् यज्ञ करत सदा, जे द्विज उत्तम गोत।
साधु निकट चलि जात ही, सो फल पग-पग होत॥

पौलस्त्यादि गोत्र वाले उत्तम ब्राह्मण जिनका यज्ञोपवीत-संस्कार आठ वर्ष की आयु से पहले हो चुका है, ऐसे ब्राह्मण जो वेद भगवान् की आज्ञानुसार सदा-सर्वदा नित्य अग्निहोत्र रूप यज्ञ करते हैं इस यज्ञ कर्म का जो फल शास्त्र में लिखा है, वही फल उस जिज्ञासु को सच्चे साधु पुरुष के समीप उनके शुभ दर्शन निमित्त जाने से एक-एक पग धरती पर रखने से सहज ही मिल जाता है। इतनी अधिक सन्त संग की महिमा है।

दया आदि ले धर्म सब, जप तप संयम दान।
जो प्राप्त इन सबन ते, सो सत्संग प्रमान॥

दया आदि सम्पूर्ण धर्म और गायत्री मंत्र का जाप तथा प्रणव आदि का विधिपूर्वक बार-बार उच्चारण रूप तप सब धर्म का अनुष्ठान, संयम, कर्मेन्द्रियों का निरोध और प्रतिदिन धन तथा भोजन इत्यादि का दान—इन सभी धर्मों के करने से ज फल प्राप्त होता है, वह सम्पूर्ण फल सत्संग की प्राप्ति से सहज में ही मिल जाता है। दया आदि सब धर्मों की प्राप्ति सत्संग से ही होती है।

अगले दोहे में शिष्य ने अपनी यह जिज्ञासा प्रकट की—"हे भगवन् ! अन्तःकरण की शुद्धि के लिए सत्संग तथा भिन्न-भिन्न तीर्थों का सेवन अर्थात् तीर्थयात्रा का कर्त्तव्य जो शास्त्रों ने दर्शाया है, इस विषय में मेरा मार्गदर्शन कीजिए।

तीरथ गंगादि सबै, करि निश्चय सेवै जु।
सो केवल सत्संग में, प्रानी फल लेवै जु॥

गुरुदेव फरमाते हैं कि अन्तःकरण की शुद्धि की इच्छा लेकर जो गंगा आदि तीर्थों की यात्रा करते हैं और उन्हें जो फल मिलता है, वही अन्तःकरण की शुद्धि रूप फल सत्संग करने मात्र से पुरुष को मिल जाता है। गोस्वामी तुलसीदास जी ने भी सत्संग-महिमा इन शब्दों में दर्शाई है—

सत्संगति मुद मंगल मूला।
सोइ फल सिद्धि सब साधन फूला॥

शिष्य ने पुनः प्रार्थना की— "गुरुदेव ! चित्त की एकाग्रता के लिए हिरण्यगर्भ आदि देवों की उपासना बताई गई है। इस विषय में आपका क्या आदेश है ?"

ब्रह्मादिक देवन सकल, तीन भजि जो फल होत।
सत्संगत में सहज ही, वेगिहि होत उदेत॥

हिरण्यगर्भ आदि देवों की उपासना से जो फल मिलता है, वह चित्त की एकाग्रता रूप फल सत्सङ्ग में अनायास ही प्राप्त हो जाता है। शिष्य ने पुनः प्रार्थना की— "ब्रह्मात्मा के अभेद अर्थ बहु-विद्या का अध्ययन रूप जो कर्तव्य बताया गया है, उस विषय में मुझे क्या करना चाहिए ?" गुरुदेव फरमाते हैं—

वेदादिक विद्या सबै, पावै पढ़े जु कोय।
सत्संगति छिन एक में, होयसु अनुभव लोय॥

ऋग्, यजु, साम, अथर्व, चार उपवेद व्याकरण आदि षट् वेद के अङ्ग ब्रह्मा आदि अट्ठारह पुराण, न्याय, मीमांसा और धर्मशास्त्र— इन सबका

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अवलोकन करने से जो ब्रह्मात्मा का अभेद निश्चय रूप फल होता है, वही फल एक क्षण में उस व्यक्ति को सत्सङ्ग में प्राप्त हो जाता है। महर्षि अष्टावक्र तथा विदेहराज जनक के इस सम्वाद में भी सत्सङ्ग-महिमा स्पष्ट है—

श्लोकार्धेन प्रवक्ष्यामि यदुक्तं ग्रन्थ कोटिभिः।
ब्रह्म सत्यं जगन्मिथ्या जीवो ब्रह्मैव केवलम्॥

अर्थात्— कोटि ग्रन्थों में जो परमात्मा तथा ब्रह्मात्मा का अभेद रूप अर्थ कहा है, सो अर्थ आधे श्लोक में कहता हूँ— "ब्रह्म सत्य है, जगत् मिथ्या है और जीव केवल ब्रह्म रूप है।"

किं सुमेरु कैलास किं, तव तरु तरै रहन्त।
सत्सङ्गति गिरि मलयसम, सब तरु मलय करन्त॥

जैसे मलयगिरि अर्थात् सुगन्धि वाला पर्वत अपने में स्थित वृक्षों को सुगन्धि वाले कर देता है, इसी प्रकार सन्त भी अपने समीपवर्ती पुरुषों को मलयगिरि के समान श्रेष्ठ गुण प्रदान करते हैं। सत्सङ्ग को सुमेरु पर्वत अर्थात् स्वर्णमय पहाड़ और रजत रूप कैलाश पर्वत जहाँ भगवान् शिव सहित सर्व देव निवास करते हैं, उन्हें सन्त के समान उपमा क्यों नहीं दी जाती, तो इसका कारण यह है— यद्यपि सुमेरु स्वर्णमय है और कैलाश रजतमय है, तथापि अपने में स्थित वृक्षों को न ही स्वर्णमय और न ही रजतमय बनाने में समर्थ है, इसलिए ये दोनों सन्तों की तुलना के योग्य नहीं। इसलिये सन्तों की मलयगिरि से उपमा दी है। भगवान् राम के गुरुदेव श्री वशिष्ठ मुनि ने भी अपनी 'वशिष्ठ-संहिता' में सत्सङ्ग की महिमा बखानी है—

मोक्षद्वारे द्वारपालाश्चत्वारः परिकीर्त्तिता।
शमो विचारः सन्तोषश्चतुर्थः साधुसंगमः॥

मुक्ति द्वार पालक चतुर, शम सन्तोष विचार।
चौथो सत्सङ्गति धरम, महापूज्य निरधार॥

जैसे राजमन्दिर में द्वारपाल की अनुमति से ही कोई व्यक्ति प्रवेश कर सकता है, तैसे मुक्तिरूप मन्दिर में प्रवेश कराने वाले शम, सन्तोष, विचार और सत्सङ्ग ये चार द्वारपाल हैं, किन्तु विद्वानों ने चौथे साधन अथवा द्वारपाल सत्सङ्ग को महापूज्य माना है।

मुक्तिकरन बंधन हरन, बहुत यतन जग भव्य।
पै यह कोटि उपाय करि, सत्सङ्गति कर्त्तव्य॥

यद्यपि मुक्तिकारक और बंधन हरने वाले बहुत से यत्न शास्त्रों ने वर्णन किये हैं, तथापि विद्वानों ने यह निर्णय किया है कि उन अनेक उपायों में से मुमुक्षु को सत्सङ्ग ही श्रेष्ठ है।

और धर्म जेतिक जगत, आहि सकाम स्वरूप।
साधन ज्ञान-उदोत को, है सत्सङ्ग अनूप॥

संसार में जितने भी धर्म हैं वे सभी इस लोक और परलोक का विषयजन्य सुख ही देने वाले हैं, इसलिए वे सकाम रूप हैं, किन्तु ज्ञान को प्रकट करने वाला उपमा से रहित एक मात्र साधन और धर्म सत्सङ्ग ही है।

श्रुति स्मृति श्रीमुख कह्यो, सत्सङ्गति जग सार।
'अनाथ' मिटावै विषमता, दरशावै सुविचार॥

श्रुति, स्मृति और श्रीमद्भागवत में भगवान् श्रीकृष्ण देव ने भी यही कहा है कि इस संसार में सत्सङ्ग ही सार है, जोकि ब्रह्म-विचार उत्पन्न करके भेद बुद्धि दूर करता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आश्चर्य क्या है !

श्री धर्मानन्द जी शास्त्री

दुनिया क्या है ? एक चला-चली का मेला है। क्योंकि एक चला गया है, दूसरा जा रहा है, तीसरा कर्मफल की गठरी सिर पर लादकर जाने को तैयार हो रहा है और चौथा उस ओर आँखें लगाये हुए है कि मेरा नम्बर भी आने वाला है। प्रतिदिन अपने सामने इस तरह की घटनाएँ घटित होने पर भी पाँचवाँ वह व्यक्ति है जो संसार की नश्वरता जानता हुआ भी अपने को भूला हुआ है। बस, यही तो आश्चर्य है।

आज के मानव की भी वही स्थिति है जो उपरोक्त पाँचवें व्यक्ति की। वह जानता है कि मुझे भी एक न एक दिन घर-बार आदि छोड़कर जाना ही पड़ेगा। परन्तु बुद्धि अज्ञान के आवरण से आच्छादित है। इसलिये राम-नाम रूपी बहुमूल्य रत्न को छोड़कर उन धन-दौलत रूपी कौड़ियों के संचय करने में ही जीवन बरबाद कर रहा है जो उसके अन्तकाल में कुछ भी काम नहीं आयेंगी।

इससे बढ़कर आश्चर्य और क्या हो सकता है कि एक तो संचित भोग्य सामग्रियों को छोड़कर जा रहा है और दूसरा उन्हें अपने कब्जे में कर रहा है। मानो उसे यहाँ से जाना ही नहीं है। इसे आश्चर्य नहीं, अपितु महान् आश्चर्य कहा जाय तो अत्युक्ति न होगी।

मृतक भीमादि चारों भाइयों को जीवित अवस्था में लाने के लिये धर्मराज युधिष्ठिर से यक्ष ने यही प्रश्न पूछा कि—"संसार में सबसे बड़ा आश्चर्य क्या है ?"

धर्मराज ने उत्तर दिया :—

अहनि अहनि भूतानि गच्छन्ति यम मन्दिरम् ।
शेषाः स्थिरत्वमिच्छन्ति किमाश्चर्यं अतःपरम् ।।

अर्थात्— प्रत्येक रोज देहधारी मरते ही रहते हैं, इन्हें देखते हुए भी अन्य लोग यहीं रहने की इच्छा करते हैं। इससे बढ़कर और आश्चर्य क्या हो सकता है।

अस्तु, मानव वही है जो अपनी वास्तविकता को न भूलें। जब संसार से जाना ही है, तो राम-नाम रूपी रत्न को चुगो और उसी की पोटली सर पर रखो। ताकि जब जाने का समय आवे तो यमराज के दूतों से न झकोरे जाओ, अपितु धर्मराज के रथ में बैठकर स्वर्गपुरी के सुखों का उपयोग हो। इसके विपरीत आचरणशील होने से अहित ही है।

इसलिये मानव का धर्म है कि अपने जीवन को ऐसा आदर्श बनावे कि उन कारनामों से विचारशील व्यक्तियों को आश्चर्य की अनुभूति न हो।

इति शम्।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

❋ सन्त-वाणी ❋

सुमिरन ऐसा कीजिये, दूजा लखै न कोय।
ओंठ न फरकत देखिये, प्रेम राखिये गोय॥

माला जपों न कर जपों, जिम्या कहों न राम।
सुमिरन मेरा हरि करै, मैं पाया बिसराम॥

❋ ❋ ❋ ❋

जहाँ जहाँ बच्छा फिरै, तहाँ तहाँ फिरै गाय।
कहै मलूम जहँ सन्त जन, तहाँ रमैया जाय॥

भेष फकीरी जे करै, मन नहिं आवै हाथ।
दिल फकीर जे हो रहै, साहिब तिन के साथ॥

❋ ❋ ❋ ❋

जब लगि थो अँधियार घर, मूस थके सब चोर।
जब मंदिर दीपक बर्‌यो, वही चोर धन मोर॥

मन मिरगा बिन मूड़ का, चहुँ दिसि चरने जाय।
हाँक ले आया ज्ञान तव, बाँधा ताँत लगाय॥

❋ ❋ ❋ ❋

दया धर्म हिरदे बसै, बोलै अमृत बैन।
तेई ऊँचे जानिये, जिनके नीचे नैन॥

सब पानी की चूपरी, एक दया जग सार।
जिन पर-आतम चीन्हिया, तेही उतरे पार॥

❋ ❋ ❋ ❋

कोई जीति सकै नहीं, यह मन जैसे देव।
या के जीते जीत है, अब मैं पायो भेव॥

तैं मत जान मन मुवा, तन करि डारा खेह।
ता का क्या इतबार है, जिन मारे सकल विदेह॥

— मलूक दास

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दर्शन की इच्छा

श्री विद्यावाचस्पति डा० आर० बी० त्रिवेदी

हे दर्शन के इच्छुक ! यदि तुझे दर्शन ही करना है, तो तू दृश्य के समीप क्यों नहीं चला जाता ! इस प्रकार इच्छा मात्र करके किंकर्तव्य विमूढ क्यों बना हुआ है ?

मानस में विचार खड़े होते हैं और उथल-पुथल कर डालते हैं तथा मन स्वयं ही भ्रमित होता है। बड़ा ही पेचीदा है यह अन्तर्द्वन्द्व। क्योंकि नये-नये विचार उठ खड़े होते हैं, विचार हाँ, ना में चलता है, लेकिन कोई पक्ष हार नहीं रहा।

इस हाँ, ना के चक्कर में किसी का कुछ भी मत हो, मेरा हियरा तो बस निश्चय कर चुका है; बस, वह एक ही निश्चय है कि मैं तो वृन्दाविपिन तथा कुञ्ज-करीलों में जाकर ही उस कुञ्ज-बिहारी श्याम के अनवरत दर्शन करूँ।

वहाँ रात को शरद की पूर्णिमा में खिली चाँदनी होगी और उस रूपहले प्रकाश में रासक्रीडारत श्याम बिहारी मुरली बजाते ब्रजबालाओं के साथ दृष्टिगत होंगे, तो मैं उस रासक्रीडा को छिपकर ही देखूंगा। कैसा ही मनोहर दृश्य होगा वह !

जब गायों के झुण्डों के पीछे उस काली कमली वाले मुरलीधर को देखूँगा तो पैर ही पकड़ लूंगा, चाहे वह कुछ भी कैसे भी कहे, फिर तो छोड़ूंगा नहीं। यदि वह मुझे इस प्रकार भी भुलावे में डालेंगे, तो मैं ग्वालबालों में मिलकर पीछे-पीछे चलूंगा। नन्दबाबा से बाबा कहने का तथा माँ यशोदा से मैया कहने का सुअवसर मुझे भी मिलेगा। रात हो जायगी तो कहीं सो रहूँगा। प्रातः होते ही पुनः ग्वालबाल मण्डली के साथ उस मोरपंख वाले पीतपटधारी का अनुसरण करता हुआ किसी गोपी के घर पहुँचूंगा। श्याम दही चुरावेगा, माखन लुटावेगा, तो मैं भी सभी के साथ नन्हें करकमलों से दिये चोरी के माल "दधि-माखन" को ग्वालों के साथ खाऊँगा और जब गोपी आकर श्याम को पकड़ेंगी चोरी करते, तो मैं भी हाथों से हाथ पीटकर ताली बजाता हुआ ग्वालों के साथ हँसूंगा। अब तक ग्वाल दधि की मटकी को लेकर भागेगा और गोपी श्याम को छोड़कर, उस ग्वाले का आनन्द भी मुझे मिलेगा, फिर तो श्याम से उसके बदले में पिटते हुए मेरी जान-पहचान और परिचय हो जायेगा। श्याम मेरी पीठ ठोकेंगे, तब मुझसा धन्य कौन होगा ?

बहुत अच्छी प्रकार से मेरा परिचय हो जायगा, तब साथ-साथ उसके महल में जाऊँगा और नन्द बाबा से बाबा, यशोदा माँ से मैया, बलदाऊ को भैया तो मैं ही कहूँगा और उसी जान-पहचान में कान्हा ने यदि मुझे बाँसुरी बजाना सिखा दिया, तो फिर एक विशेष कला ही सीखने पर और क्या शेष बचेगा ?

हैं, अरे ये गोपियों की करुण पुकार क्यों आ रही है और इस करुण क्रन्दन का कारण क्या है ? अरे, इस सुख-मदिरा का प्याला अभी होठों से लग भी नहीं पाया था कि इस क्रन्दन के धक्के से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गिरकर चूर चूर हो गया। तो क्या कान्हा के चले जाने पर यह विरह विलाप हो रहा है? क्या सच है, श्यामसुन्दर वृन्दावन और ब्रजधाम को छोड़कर चले गये? अरे, तब क्या करूँ मैं! नहीं, श्याम नहीं जायेंगे, ब्रज को बिलखते छोड़कर वे नहीं जायेंगे। माँ यशोदा, बाबा नन्द कैसे जीवेंगे? कैसे रहेंगी वह गोपी और गायें तथा सखा, जो सदैव उन्हें निहारकर और क्रीड़ा करके ही अपना सर्वस्व उन पर न्योछावर करते थे? हैं, क्या सचमुच श्याम चले गये? और द्वारिका ही पहुँच गये, तो मैं अब कैसे जीवित रहूँगा? कैसे उनके दर्शन कर पाऊँगा? अरे, अब तो मैं सचमुच ही पागल हो जाऊँगा। मुझ से यह सब कुछ न देखा जायगा और न सहन होगा। कुछ भी हो, यदि उस कान्हा के विरह में मैं पागल हो जाऊँगा तो भी श्रेष्ठ रहेगा; क्योंकि लोक में श्याम नाम का दिवाना भी तो मैं ही कहलाऊँगा।

श्याम! अरे, ओ निर्दयी श्याम! क्या तुम मुझे छोड़कर सचमुच ही चले गये? हा श्याम! तुम्हारे बिना यह प्राण शरीर को त्यागना ही श्रेष्ठ समझते हैं। मुझे नहीं तो इन प्राणों को ही अपने पास बुलाओ। अब क्या होगा जीवित रहने से? सब अब तो व्यर्थ व निःसार प्रतीत होता है। अरे, तुम तो सर्व व्यापी हो। अब ध्यान आया, अवश्य मेरी दशा को देखकर मुस्करा रहे होंगे और अवश्य तुम्हें आनन्द मिल रहा होगा। यह भी ठीक है तुम्हारे आनन्द का माध्यम मैं बनूंगा, तो भी मेरा सौभाग्य होगा।

तुम्हें आनन्द मिले और मैं उससे वंचित रहूँ, यह नहीं हो सकता। मैं भी कम चतुर नहीं हूँ। तुम तो छलिया हो ही, मुझे भी तुम्हारे विरह में साड़ी-अँगिया पहन नारी रूप बनाते देर नहीं लगेगी। यह तुम्हीं ने तो सिखाया है। जब तुम लीला गोदन तथा चूड़ी पहनाने वाली बने थे नर से नारि।

इस नारी रूप को धारण करके मैं गोपियों के साथ रोता हुआ आँसू बहाऊँगा। तुम्हारे सच्चे प्रेम की अनुभूति भी तो तभी होगी। तभी जान पाऊँगा कि प्रिय के वियोग में कितनी कसक है। मुझे उस विरह वेदना में एक विशेष आत्म-शान्ति होगी और उस विरह की सीमा इतनी होगी कि शरीर सूखकर प्राणान्त ही हो जायगा।

फिर मुझे चाहिये ही क्या? कितना अच्छा अवसर मिलेगा। शीघ्र ही द्वारिका में आकर जन्म लूंगा, चाहे सृष्टि-स्रष्टा से झगड़ना ही पड़े। फिर तो द्वारिकावासी राजा कृष्ण के दरबार का सिपाही पहरेदार बन ही जाऊँगा। फिर तो ड्योढ़ीवान कहलाऊँगा। जो भी आवेगा आपसे मिलने, उसके प्रवेश की अनुमति लेने आपके पास मैं ही जाऊँगा और ऐसा आने जाने का अवसर दिन में कई बार आवेगा और आपके दर्शन दिन में कई बार अनायास हुआ करेंगे।

वह दिन भी अवश्य आयेगा जब सुदामा जी आपसे मिलने आवेंगे और मुझ द्वारपाल से ही आपका पता पूछेंगे। तब मैं ही आपके पास जाकर कहूँगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सीस पगा न झगा तन में, प्रभु जानै को आय बसौ केहि ग्रामा।
धोती फटी सी लटी दुपटी और, पाँय उपानहु की नहिं सामा॥
द्वार खड़ौ द्विज दुर्बल देखि रह्यौ, चकि सों वसुधा अभिरामा।
पूछत दीनदयाल कौ धाम, बतावत आपनौ नाम सुदामा॥

जब आप सुदामा का नाम सुनकर राजकाज छोड़कर दौड़ेंगे, तो उस दृश्य को देखकर मैं हँसूँगा। यदि हो सका तो उस दृश्य को देखने के लिए विधना से और आँखें माँगने का अनुरोध करूँगा। जब सुदामा की बगल से आप चावल की पोटली छीनेंगे तथा कपड़ा दुर्बल जीर्ण होने से फटकर चावल वहीं बिखरेंगे और आप मुट्ठी भर भरकर दो बार खा जायेंगे, तीसरी मुट्ठी लेते ही लक्ष्मी आकर आपका हाथ पकड़कर रोकेंगी, तब तो मैं आश्चर्यानन्द में लोटपोट ही हो जाऊँगा।

जब आप सुदामा विप्र के कंटक तथा बिवाईयुक्त चरणों को प्राक्षालित करते हुए बिना जल के ही अपने नेत्र-बिन्दु से अनवरत अश्रु-झड़ी लगाते हुए धोवेंगे, तो उस चरणामृत को मैं छीनकर पी लूँगा। कैसी आत्म-शान्ति मिलेगी उस समय, क्योंकि आपका प्रिय सखा व विप्र ही तो है वह सुदामा।

अरे, यह करुण पुकार कहाँ से आई ? यह तो श्याम की बहन श्यामा का दीर्घस्वर है। दुष्ट नराधम दुःशासन ! उसकी साड़ी खींच रहा है। वह बेचारी द्रौपदी द्वारिकानाथ ! द्वारिकानाथ ! की रट लगा रही है। तब तो आप विह्वल होकर नंगे पैर ही दौड़ेंगे, तब आपको मैं गरुड़ की तरह कन्धे पर बिठाकर वहाँ पल भर में पहुँचूँगा। मैं आपके हाथों साड़ी बन जाऊँगा और आपका स्पर्श करते हुए श्यामा का शरीर ढकूँगा। तब भारतीय नारी की लज्जा बचेगी। वह नीच नराधम दुःशासन थक जायगा। तब मैं आपकी उस अदृश्य शक्ति का दर्शन करूँगा।

समय चलता जायगा। भगवान् भास्कर अरुण अपने लँगड़े सारथी को लेकर रथ पर सवार हुए नभ मण्डल को पार करने चलेंगे और अपनी सहस्र प्रचण्डांशुओं से वातावरण को तप्त करते हुए नभ मध्य आवेंगे। मध्याह्न होगा तब आप अपनी सब सांसारिक लीलाओं को समाप्त करके एक वृक्ष के नीचे सुप्तावस्था में पड़े होंगे और स्वप्न देखेंगे, तो उस स्वप्न का विषय मैं ही बनूँगा, आप मुझे देख रहे होंगे। उसी समय बहेलिया आवेगा, अपने तीर को कान तक तानेगा और मृग के धोखे में आप पर तीर चलायेगा, तीर ठीक आपके हृदयस्थल पर लगेगा और आप उस समय इस लीला को समाप्त करके चल देंगे और साथ ही आपके हृदय में विचरने वाला मैं भी आपके प्राणों के साथ चला जाऊँगा। आत्मा एकाकार हो जायगी। न दृष्टा रहेगा, न दर्शक। यहाँ आकर ही होगा मेरी दर्शन की इच्छा का सौम्य अन्त। कैसा विचित्र ··· ··· ···।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

❀ मन और जीवन ❀

श्री गुणानन्द जी थपलियाल

चंचल है मन - जीवन दोनों, पल - पल रंग बदलते रहते।
पल में दुख से व्याकुल होते, पल में सुख से दोनों हँसते।
पल में सुख - दुख की राहों में, एकाकी - एकाकी चलते।
दो पथ के दो साथी कैसे, किसको रोकूँ, किसे बढ़ाऊँ ?
कैसे मैं यह भेद मिटाऊँ ?

मन चाहता अपनी मनमानी, जीवन की कुछ और कहानी।
वह नभ में उड़ता स्वप्निल खग, यह भू पर चलने वाला प्राणी।
मन रूपी पंछी के कर में, जीवन की सब खींचातानी।
उसने तो सीखा है उड़ना, पंख कहाँ से इसको लाऊँ ?
कैसे मैं यह भेद मिटाऊँ ?

मन तो चाहता है जीवन को, सुन्दर से सुन्दरतम करना।
मन तो चाहता है निशि-वासर प्रासादों में सुख से बसना।
मन का घट इच्छा जल द्वारा, बहुत कठिन होता है भरना।
मन का चाहा इस जीवन में, कैसे पूर्ण कर दिखलाऊँ ?
कैसे मैं यह भेद मिटाऊँ ?

मन के चाहे इस जीवन ने, अनचाहा जीवन में पाया।
उसने जब - जब जिसे सँजोया, इसने बरबस उसे लुटाया।
उसने रिमझिम नैन बहाये, इसने दीपक राग सुनाया।
यह दीवार विषमता की मैं, ढाऊँ लेकिन कैसे ढाऊँ ?
कैसे मैं यह भेद मिटाऊँ ?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कृतज्ञता

श्री अगरचन्द जी नाइटा

'तत्वार्थसूत्र' का एक वाक्य है–'परस्परोपग्रहो जीवानाम्', अर्थात् जगत् के जीव एक-दूसरे से उपकृत होते रहते है। संसार का प्रवाह अनादि काल से चला आ रहा है। अतः पता नहीं, हमारी आत्मा ने कितने जीवों को किस-किस तरह एवं कब-कब उपकृत किया है या किन-किन जीवों से हम स्वयं उपकृत होते रहे हैं। अनेक जन्मों की बात एक बार छोड़ भी दें और केवल इस जन्म पर ही विचार करें तो भी हमें ऐसा प्रतीत होगा कि जन्म से लेकर अब तक सैकड़ों-हजारों व्यक्तियों से हमने सहायता ली है एवं सहयोग प्राप्त किया है। हमारा वर्तमान जीवन बहुत कुछ दूसरों के सहयोग-सहायता एवं उपकार से ही गतिमान् है। परन्तु हम दूसरों के उपकारों को बहुत कम याद रखते हैं। उनके द्वारा हुई बहुत सी बातों को हम साधारण सी मान लेते हैं और दूसरे के उपकारों की उपेक्षा कर देते हैं। इसलिए हमारे प्राचीन महर्षियों एवं विद्वानों ने इस बात पर बहुत जोर दिया है कि किसी के छोटे से या थोड़े से उपकार को भी हमें सदा स्मरण रखना चाहिये, उसे कभी नहीं भूलना चाहिये।

मर्यादा पुरुषोत्तम श्री राम हनुमान् - जैसे निस्स्पृह एकनिष्ठ सेवक के द्वारा की गयी सेवाओं के प्रति अपने को कृतज्ञ अनुभव करते और कहते हैं—'हे हनुमान् ! तुम्हारे समान मेरा उपकारी देवता, मनुष्य अथवा मुनि—कोई भी शरीर धारी नहीं है। मैं बदले में तुम्हारा उपकार तो क्या करूँ, मेरा मन भी तुम्हारे सामने नहीं हो सकता। हे पुत्र ! मैंने मन में खूब विचार करके देख लिया कि मैं तुमसे उऋण नहीं हो सकता '—

सुनु कपि तोहि समान उपकारी।
नहिं कोउ सुर नर मुनि तनुधारी॥
प्रति उपकार करौं का तोरा।
सनमुख होइ न सकत मन मोरा॥
सुनु सुत तोहि उरिन मैं नाहीं।
देखेउँ करि विचार मन माहीं॥

ऐसे ही अनेक आदर्श हमारे शास्त्रों में उपलब्ध होते हैं। दूसरों के दोषों को तथा अपने किये हुए उपकारों को भूल जाना अच्छा है, पर दूसरों के किये हुए उपकारों को सदा स्मरण रख कर उनका कृतज्ञ होना चाहिये। मनुष्य पर प्रभु और प्रकृति के भी अनन्त उपकार तो हैं ही; अतः हम परमात्मा के कृतज्ञ हों, यह सदा-सर्वदा परम आवश्यक है। दूसरे के किये हुए उपकार को भूल जाने वाले को 'कृतघ्न' की संज्ञा दी जाती है और स्मरण रखने वाले को 'कृतज्ञ' कहा जाता है।

आज तो कृतज्ञता का दुष्काल ही दिखायी देता है। कृतघ्न व्यक्तियों की ही अधिकता है। अतः पाठकों से कृतज्ञता अपनाने का अनुरोध है; यही हम सब का कर्तव्य भी है। 'कृतज्ञता' बहुत बड़ा गुण है। मनुष्य में ही नहीं, वह पशु-पक्षियों में भी पाया जाता है। वे भी उपकारों का बदला चुकाने के लिये अपने प्राणों तक की बली दे देते हैं। जब पशुओं की ऐसी स्थिति है, तब मनुष्य तो उनकी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपेक्षा विशेष विवेकशील प्राणी है; उसे तो कृतज्ञ होना चाहिये; क्योंकि कृतघ्नता को सबसे बड़ा पाप बतलाया गया है।

अनेक अवसरों पर किया हुआ थोड़ा-सा भी उपकार बहुत बड़ा काम कर जाता है। यदि उस समय कोई सहयोग-सहायता देने वाला न मिले तो भारी हानि उठानी पड़ती है। सम्पूर्ण जीवन के लिये भी खतरा पैदा हो जाता है। ऐसे अवसर बार-बार नहीं आते। इसलिये उपकारी के उपकार को भूल जाना कदापि उचित नहीं है। जहाँ तक हो सके, हृदय में तो उसके प्रति सद्भाव रखें ही; साथ ही प्रकट रूप में भी और दूसरों के सामने भी उसका उपकार मानना चाहिये। इतना ही नहीं, यथाशक्ति उस उपकार का बदला चुकाने का भी पूरा प्रयत्न करना चाहिये। पर आज 'कृतज्ञता' का भाव अत्यधिक शिथिल हो गया है। आवश्यकता है—पुनः उस आदर्श को जीवन में अपनाने की।

सबसे पहला महान् उपकार होता है—माता का, जिसके द्वारा यह शरीर प्राप्त होता है, बढ़ता है, पुष्ट होता है और कार्यक्षम बनता है। माता को साढ़े नौ महीने तक गर्भस्थ शिशु को कितने कष्ट से उदर में रखना पड़ता है, उसके रक्षण और पोषण के लिये कितना सतर्क रहना पड़ता है, यह भुक्त भोगी माता ही जानती है। बच्चे के जन्म के समय की प्रसववेदना कितने भयंकर रूप में भोगनी पड़ती है। उस विषम अवसर पर कई मातायें तो अपने प्राणों की बलि तक भी चढ़ा देती हैं, यह सभी अच्छी तरह से जानते हैं। जन्म के बाद भी बच्चे के पालन-पोषण में भी माता को कितना कष्ट उठाना पड़ता है। रात-रात भर जागना पड़ता है। उसके मल-मूत्र को साफ करने में घृणा और देरी नहीं की जा सकती। जननी स्वयं गर्मी-सर्दी सहन करती है, पर बच्चे को तनिक भी गर्मी-सर्दी न लग जाय, इसका पूरा-पूरा ध्यान रखती है। उसे अपने खाने-पीने में भी पूरा ध्यान रखना पड़ता है, इच्छाओं पर रोक लगानी पड़ती है। शिशु कहीं गिर न जाय, उसे कोई दुःख दर्द न हो, इसकी भी वह पूरी सावधानी रखती है। ऐसी जन्मदात्री एवं लालन पोषण करने वाली माँ के उपकार को भी बड़े होने पर भूल जाते हैं। यह सबसे बड़ी कृतघ्नता है। आजकल आधुनिक शिक्षा के प्रवाह में बहने वाले युवक तो यहाँ तक कह देते हैं कि 'इसमें उपकार की क्या बात हुई, अपने मोह के कारण ही वह सब काम करती है।'

माँ के बाद दूसरा स्थान पिता का है। घर का सारा खर्च दिनभर परिश्रम करके और खोटे-खरे काम करके पिता किसी तरह चलाते हैं। बच्चों को अच्छा खाना-कपड़ा मिले, वे अच्छी तरह पढ़ाई-लिखाई करके होशियार बनें, इसलिये पिता को अत्यधिक प्रयत्न करना पड़ता है। पर बच्चा जब अपने पैरों पर खड़ा होने योग्य बन जाता है, उसका विवाह हो जाता है, तब वह माता-पिता की अवहेलना करना प्रारम्भ कर देता है। कुछ लोग तो अपने माता-पिता को मारते-पीटते तक हैं। उनको समय पर अच्छा खाना नहीं देते, रोगी होने पर न ठीक से इलाज करवाते हैं और न सेवा-शुश्रूषा करते हैं। माता-पिता ने उनको इतने वर्षों तक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पालन-पोषण कर योग्य बनाया, इस बात को भूलकर बहुत से नवयुवक अपनी पत्नी के इतने वशीभूत हो जाते हैं कि माता-पिता को अनेक प्रकार से कष्ट देने में भी वे नहीं हिचकिचाते। पिता की सम्पत्ति के वे मालिक तो बन जाते हैं, पर उनकी उचित सार-सँभाल से मुख मोड़ लेते हैं। चाहे वे सेवा न करें, पर उनका अपमान तो नहीं ही करना चाहिये। संतान माता-पिता के उपकारों को मानती रहे और उसे प्रकट करती रहे—यह भी आज के युग में बहुत बड़ी बात समझी जाती है।

प्राचीन काल में प्रातः उठते ही माता-पिता को नमस्कार करना, उनकी आज्ञा का पालन करना, उनको हर तरह से सुख पहुँचाना, उनका आशीर्वाद प्राप्त करना प्रत्येक व्यक्ति अपना आवश्यक कर्तव्य समझता था। आज के अनेक युवक तो उच्च पदाधिकारी हो जाने पर अपने साधारण वेष-भूषा वाले और मामूली पढ़े-लिखे माता-पिता को दूसरों के सामने नमस्कार करने तथा उनका समादर करने में संकोच का अनुभव करते हैं। ऐसे 'सपूतों' से क्या आशा रखी जाय ?

तीसरा उपकार पारिवारिक जनों या गुरुजनों का होता है, जो बच्चों को हर तरह की सुविधा एवं शिक्षा देकर उनके जीवन को सुसंस्कृत एवं सफल बनाने में सहयोग देते हैं। जीवन-निर्माणकारी उन शिक्षाओं को भूल कर जो व्यक्ति गुरुजनों के प्रति आदर का भाव नहीं रखते, ऐसे युवकों की कहानियाँ तो आज सर्वत्र चर्चा का विषय बनी हुई हैं। आज तो स्थिति इतनी विषम हो चुकी है कि विद्यार्थी अध्यापकों और सर्वोच्च शिक्षा-अधिकारियों तक को मार-पीट देते हैं और कुलपतियों तक का घेराव कर बैठते हैं। उनके वचनों का निरादर करने और प्रतिवाद करने में ही अपनी शान समझते हैं, शेखी बघारते हैं। वे विद्यालयों को नुकशान पहुँचाने में भी कमी नहीं रखते। उत्तेजना और आवेश में न करने योग्य हत्याएँ तक कर बैठते हैं। यह स्थिति बड़ी ही भयानक एवं लज्जाजनक है। विद्यार्थी समुदाय हमारे ही बच्चे हैं; हम उनकी त्रुटियाँ नहीं बता रहे हैं, केवल वस्तु स्थिति पर विचार कर रहे हैं।

धर्म गुरुओं का भी जीवन में महान् उपकार होता है, जो हमें बुराइयों से बचाते हुए सद्गुणों के विकास और नैतिक उत्थान की निरन्तर प्रेरणा देते रहते हैं। जिससे मानव अनेक दुःखों और पापों से बचते हुए इहलोक और परलोक का महान् हित-साधन करने में समर्थ होता है, ऐसे धर्म गुरुओं के प्रति भी आदर और श्रद्धा की कमी बहुत ही खटकने वाली है।

इसी तरह जीवन में न जाने कितने लोगों ने हमारे कितने उपकार किये हैं ? किसी ने आर्थिक सहयोग दिया, किसी ने सत्परामर्श दिया, सद्बुद्धि दी तथा किसी ने रुग्णावस्था और कष्ट के समय सेवा सहायता की। इस प्रकार हम पर हुए उपकारों का सही लेखा-जोखा लगाना सम्भव नहीं; क्योंकि यह सारा जीवन ही दूसरों के सहयोग पर आधारित एवं निर्भर है। अतः प्रत्येक व्यक्ति को अपने में कृतज्ञता के सद्गुण का भण्डार उत्तरोत्तर विकसित करते जाना चाहिये; अन्यथा कृतज्ञता सर्वत्र व्याप्त हो जायगी और इससे बड़ा कोई भी पाप नहीं है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रत्युपकार की कामना सबके मन में होती है, पर आश्चर्य यह है कि वे ही व्यक्ति दूसरों के उपकार को स्वयं भूल जाते हैं; फिर अकृतज्ञता के प्रवाह में उनके उपकार को कौन याद रखेगा ? आप दूसरों को सम्मान देंगे, तो आपको भी सम्मान प्राप्त होगा। आप दूसरों के कृतज्ञ रहेंगे तो दूसरे भी आपके प्रति सद्भाव रखेंगे। यदि दूसरे व्यक्ति कृतघ्न हो जाते हैं तो भी सत्पुरुषों को तो उसकी ओर से उदासीन रहते हुए अपने भावों में और व्यवहार में परोपकार, सेवा, सहायता एवं कृतज्ञता को कम नहीं होने देना चाहिए।

कृतज्ञता के सम्बन्ध में हमारे परमश्रद्धेय भाई जी श्री हनुमान प्रसाद जी पोद्दार के ये विचार विशेषरूप से माननीय हैं—

"दूसरे के द्वारा तुम्हारा तनिक-सा भी उपकार या भला हो अथवा तुम्हें सुख पहुँचे तो उसका हृदय से उपकार मानो, उसके प्रति कृतज्ञ बनो; यह मत समझो कि 'यह काम मेरे प्रारब्ध से हुआ है, इसमें उसका मेरे ऊपर क्या उपकार है; वह तो निमित्त मात्र है।' बल्कि यह समझो कि उसने निमित्त बनकर तुम पर बड़ी ही दया की है। उसके उपकार को जीवनभर स्मरण रखो, स्थिति बदल जाने पर उसे भूल न जाओ और सदा उसकी सेवा करने और उसे सुख पहुँचाने की चेष्टा करो, काम पड़ने पर हजारों आदमियों के सामने भी उसका उपकार स्वीकार करने में संकोच न करो। ऐसा करने से परस्पर प्रेम बढ़ेगा, आनन्द और शान्ति की वृद्धि होगी, लोगों में दूसरों को सुख पहुँचाने की प्रवृत्ति और इच्छा अधिकाधिक उत्पन्न होगी, सहानुभूति और सेवा के भाव बढ़ेंगे।

याद रखो— उपकार या सेवा करने वाले के प्रति कृतज्ञ होकर मनुष्य जगत् की एक बड़ी सेवा करता है; क्योंकि इससे उपकार करने वाले के चित्त को सुख पहुँचता है, उसका उत्साह बढ़ जाता है और उसके मन में उपकार या सेवा करने की भावना और भी प्रबल हो उठती है। कृतज्ञ के प्रति परमात्मा की प्रसन्नता और कृतघ्न के प्रति कोप होता है। इससे कृतज्ञ बनो और उपकारी के उपकारों को कभी न भूलो।"

—❀ ० ❀—

पाठक— कृपया ध्यान दें !

(१) अपना शुल्क शीघ्रातिशीघ्र भेजें।

(२) पत्रिका-सम्बन्धी विचारों को भेजकर अनुगृहीत करें।

(३) पत्रिका-सम्बन्धी शिकायत सम्पादक के नाम पर ही प्रेषित करें।

(४) निवास परिवर्तन पर, नये निवास के पते से सूचित करना न भूलें।

(५) किसी भी प्रकार का पत्रिका-सम्बन्धी पत्र लिखते समय व शुल्कराशि भेजते समय अपनी ग्राहक संख्या अवश्य लिखें।

— सम्पादक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जीवन दुःखपूर्ण क्यों ?

इस क्रम में बहुत से उदाहरण निष्फल परिश्रम के बिना कुछ न होगा। सर्व-सिद्ध सत्य द्वारा ही समान परिस्थितियों में एक जैसे पदार्थों से विभिन्न अनुभव प्राप्त होते रहते हैं। ऐसा प्रत्येक अनुभव उस व्यक्ति की परिवर्तनशील मानसिक स्थिति के तात्कालिक क्षण पर ही निर्भर होता है।

इस संसार में रहने वाला अशान्त मनुष्य प्रतिक्षण बदल रही निज मानसिक स्थिति तथा बाह्य-पदार्थों के कपट-जाल में सन्तुलन लाकर आनन्द प्राप्त करने का असफल प्रयास करता हुआ हताश होकर बैठ जाता है। दो अशिक्षित तथा स्वतन्त्र घोड़ों पर सवारी करके बैठने और अपना सन्तुलन बनाये रखने में एक अति निपुण सवार भी असमर्थ होता है। बदलने वाले कर्ता और कर्म से सम्बन्धित पहेली को हल करने के लिए निरन्तर प्रयत्न करते रहना एक ऐसा गुह्य घाव है जिससे सांसारिक व्यक्ति असह्य व्यथा को सहन करने पर मजबूर हो जाता है। संसार की इस भीषण अन्तर्व्यथा का एकमात्र निदान आध्यात्मिक जीवन को ग्रहण करना है।

इस समस्या को स्थायी रूप से सुलझाने का एक ही साधन है— "अनुभवी" अथवा "अनुभूत" पक्षों में से किसी एक में समता लाना। आध्यात्मिक जीवन का ठीक यही संदेश है। अभ्यास के प्रारम्भिक काल में ही 'साधक' निज विवेक बुद्धि द्वारा यह रहस्य जान लेता है कि उसके भीतर उत्कर्ष-अपकर्ष को अनुभव करता हुआ प्रतीत होने वाला कर्त्ता वास्तविक नहीं है और न ही उनके सामने निरुद्देश्य रूप से गतिमान होने वाले पदार्थ ही कोई यथार्थता रखते हैं।

अवास्तविक कर्त्ता किसी विशेष नाम से जाना जाता है। निज व्यक्तित्व को महत्व देने वाला यह 'अहम्' विचार-समूह के बिना कुछ नहीं है; जिसे हम 'मन' कहते हैं। सम्भव है आप इस विचार से सहमत न होकर इसका घोर विरोध करें। लेखक आपसे पूरी सहानुभूति रखता है। आपका तीव्र विरोध एक स्वाभाविक प्रतिक्रिया है। फिर भी यह बात न भूलिए कि हम वास्तविक तथा शाश्वत 'सुख' को खोज कर रहे हैं जिसे प्राप्त करने के लिए हम अपनी अमूल्य वस्तुओं को भी न्योछावर करने को तत्पर रहते हैं। यह ज्ञान रखते हुए भी आपको प्रसन्नतापूर्वक बड़े से बड़ा त्याग करना चाहिए कि आपका नाम-रूप वाला व्यक्तित्व झूठा है। ज्ञान का यह अमोघ यन्त्र हर सम्भव मूल्य पर प्राप्त करना चाहिए क्योंकि इसके होने पर हमें कोई दुःख अथवा शोक नहीं सता सकता।

(उपनिषद)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आश्रम समाचार

"एक भूल को सुधारने का प्रयत्न हम दूसरी भूल से करना चाहते हैं सामान्य जीवन में; लेकिन जब इसका (सिद्धान्त का) प्रयोग आध्यात्मिक व साधक जीवन में भी करने लग जाते हैं, तब जीवन में बहुत बड़ी क्षति उठानी पड़ती है। हम यहाँ सत्सङ्ग में आते हैं महापुरुषों के प्रवचनों को सुनने, जिनके माध्यम से हमें जीवन की समस्याओं को समझने के स्रोत मिलें; लेकिन फँस कर रह जाते हैं हँसी-मजाक की बातों में, शब्दों की उठा-पटक में अर्थात् जहाँ मन को साधने का प्रयास करना हमारा उद्देश्य था, वहाँ मन को उसको प्रिय लगने वाली बातों से रंजित करने लग जाते हैं हम। सम्भवतया यही कारण है कि अध्यात्म भी आज मनोरंजन के साधनों के रूप में प्रयुक्त होने लगा है। पर, यह याद रखना चाहिये कि हमारा लक्ष्य यह नहीं है। स्वामी राम का जीवन इस बात का कि श्रेय स्वीकार करने योग्य है न कि प्रेय, साक्षात्प्रमाण है।"

यह वक्तव्य था महाराज श्री परमाध्यक्ष स्वामी अमरमुनि जी महाराज का दिल्ली, अजमलखां पार्क में हुए स्वामी रामतीर्थ आध्यात्मिक विराट् सम्मेलन के अन्तिम दिन, ५ नवम्बर की रात्रि को। यह सम्मेलन आपके ही संरक्षण में २८–१०–७८ से आरम्भ हुआ था। इसमें दिल्ली शाखा के मन्त्री श्री भारतबन्धु जी शर्मा के मंच-संचालन में परम श्रद्धेय म० मं० स्वामी कृष्णानन्द गोविन्दानन्द जी महाराज, योगिराज नानकचन्द जी, युगपुरुष श्री स्वामी परमानन्द जी महाराज, मुनि श्री हरिमिलापी जी, स्वामी दिव्यानन्द जी, स्वामी हंसप्रकाश जी आदि विद्वान् सन्त-महात्माओं ने अपने सुस्पष्ट संस्कृतिपरक विचारों के माध्यम से उपस्थित श्रोता समूह के मार्ग को प्रशस्त करने का प्रयास किया। दिल्ली निवासी रामप्रेमियों की कर्मठता के फलस्वरूप यह उत्सव सफलतापूर्वक सम्पन्न हुआ।

दिनांक ७–११–७८ को भारत-साधु-समाज के अध्यक्ष व तपोनिष्ठ वयोवृद्ध म० मं० स्वामी गुरुचरणदास जी महाराज की अध्यक्षता में म० मं० स्वामी लक्ष्मणयति जी महाराज द्वारा बाबा ब्रह्मदास जी महाराज की पुण्यस्मृति में आयोजित यज्ञ में सम्मिलित होने के लिये आचार्यप्रवर ने श्री सत्यप्रकाश जी को साथ लेकर रोहतक प्रस्थान किया तथा वहाँ अपनी श्रद्धाञ्जलि पूज्य सन्त बाबा ब्रह्मदास जी के चरणों में समर्पित कर आप दिनांक ८ को पुनः दिल्ली वापस चले आये। दिनांक ९ को स्वामी गोपालानन्द जी महाराज द्वारा आयोजित रामायण-भक्ति-वेदान्त-सम्मेलन में, जिसका आयोजन सरोजनी नगर में स्वामी वासुदेवानन्द जी महाराज की अध्यक्षता में हुआ था, उपस्थित होकर मर्यादापुरुषोत्तम राम के सौन्दर्य का वर्णन करते हुए संकेत किया कि उनके सौन्दर्य के प्रति शत्रुओं द्वारा भी द्वेष का परित्याग कर आकृष्ट होना यह सिद्ध करता है कि राम का सौन्दर्य शरीर तक ही सीमित नहीं है, यह तो अचल सौन्दर्य की उस रूप में अभिव्यक्ति है जिसे देखकर सबमें अपनत्व की भावना जागृत हो जाती है, जिसका प्रतिबिम्बरूप है विश्वमें प्रतीत होने वाले समस्त सौन्दर्य।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस प्रकार आपने विभिन्न कार्यक्रमों में भाग लेते हुए स्वामी रामतीर्थ प्रतिष्ठान, जहाँ से स्वामी राम के समस्त साहित्य का प्रकाशन होता है, लखनऊ में सम्पन्न होने वाले सम्मेलन में भाग लेने के लिए दिनांक १० की प्रातः प्रस्थान किया, परन्तु वहाँ पहुँचते ही प्राप्त शोक समाचार के कारण, जिसमें म० मं० श्रद्धेय विद्वत्प्रवर भारत-साधु-समाज के अध्यक्ष स्वामी गुरुचरणदास जी महाराज के ब्रह्मीभूत होने का समाचार था, वापस हरिद्वार की ओर प्रस्थान किया।

"वैसे तो महापुरुष सन्तों के जन्मस्थान, माता-पिता का नाम आदि सीमित परिचयों को ज्ञात करने की परम्परा भारतवर्ष में नहीं रही है, परन्तु फिर भी स्वामी गुरुचरणदास जी महाराज का जन्म काश्मीर की रियासत पुन्छ में झेलम के किनारे बसे हुए एक ब्राह्मण परिवार में हुआ था। ८ वर्ष की अत्यल्प आयु में ही आपने "वसुधैव कुटुम्बकम्" की भावना से अभिप्रेरित होकर सीमित परिवार का परित्याग कर समस्त विश्व को परिवार बनाने के लिये काशी की ओर प्रस्थान किया तथा वहाँ भारतीयसंस्कृति की आधारभूता संस्कृतभाषा का अध्ययन कर, भारतीयदर्शन का स्वाध्याय व चिन्तन करने के पश्चात् अपनी निर्भीक व सरस वाणी से सनातनधर्म के प्रचार एवं प्रसार में एक सच्चे परिव्राजक की भाँति गाँव गाँव घूमकर संलग्न हो गये। अपनी त्यागपूर्णभावना के फलस्वरूप जहाँ आपने अनेकों सनातनधर्म सभाओं व मन्दिरों की स्थापना की, वहीं संस्कृति व संस्कृत के प्रचारार्थ हरिद्वार में—"भगवानदास संस्कृत महाविद्यालय" की स्थापना की। ऐसे महान् तपस्वी के अपने बीच से विलग हो जाने की सूचना प्रसारित होते ही रोहतक में, जहाँ कि इन्होंने अपने पञ्चभौतिक शरीर का परित्याग किया था; अपार जनसमूह इनके दर्शन के लिये उमड़ पड़ा।"

रोहतक से पन्तनगर, दिल्ली और तदनन्तर पार्थिव शरीर को दर्शनार्थ हरिद्वार, अवधूत-मण्डलाश्रम में लाया गया। नाम संकीर्तन व स्नेहसिक्त नेत्रकोरों से युक्त वातावरण में दिनांक १२ को शोभायात्रा के अनन्तर उस महान् तपस्वी के पार्थिव शरीर को माँ पतितपावनी भागीरथी गंगा की पवित्र जलरूपी गोद में जल समाधि दे दी गयी।

"इस महानात्मा, निर्भीक महापुरुष, सनातनधर्म के महान् स्तम्भ, अध्यात्म जगत पर चमकते ज्ञानसूर्य के जाने से भारतीय ही नहीं अपितु समस्त विश्व में फैले हुए अध्यात्म जगत की जो क्षति हुई है उसे पूरा करना यदि असम्भव नहीं, तो कठिन अवश्य है। अब आवश्यकता इस बात की है कि उस द्वारा दिखाये गये मार्ग पर चलकर हम अपनी निष्ठा का परिचय दें।" इस प्रकार के भावों से परिपूर्ण सारे भारत में शोक-सभायें हुईं, जिनमें शोक-प्रस्ताव पारित किये गये।

स्वामी रामतीर्थ मिशन की समस्त दिल्ली, इलाहाबाद, अलीगढ़ आदि शाखाओं ने शोक-प्रस्ताव पारित किये व रविवारीय सत्संगों में भी मौन रूप में अपनी श्रद्धाञ्जलि समर्पित की। ❀

❀ "पत्रिका" प्रयास करेगी कि म० मं० ब्रह्मलीन स्वामी गुरुचरणदास जी महाराज का संक्षिप्त जीवन-चरित्र पाठकों की सेवा में शीघ्रातिशीघ्र प्रकाशित कर प्रेषित करें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस प्रकार लखनऊ से हरिद्वार पधार कर शोभायात्रा में सम्मिलित हो दिनांक १५ की रात्रि को परमाध्यक्ष जी महाराज स्वामी कृष्णानन्द गोविन्दानन्द जी की अध्यक्षता में सम्पन्न हो रहे सम्मेलन में सम्मिलित होने मुखर्जी नगर, दिल्ली पहुँचे। वहाँ (दिल्ली) से देहरादून आश्रम पर पधार, आश्रम-व्यवस्था का अवलोकन करने के बाद दिनांक १७ को दिल्ली होते हुए इलाहाबाद की ओर आपने प्रस्थान किया।

इलाहाबाद से होते हुए आप दिनांक २५ की प्रातः राजपुर रोड स्थित अग्रवाल परिवार वृन्दावन एण्ड सन्स की प्रिय पुत्री रेणु के निर्विघ्न विवाह-संस्कार की पूर्ति के उद्देश्य से रखे गये "अखण्ड रामायण पाठ" में सम्मिलित हुए व सीता के चरित्र को समक्ष रख रामायण के पारिवारिक व व्यावहारिक पक्ष पर बल देते हुए रामायण के पढ़ने का प्रत्येक पारिवारिक सदस्य को आग्रह किया, तथा नव-जीवन में प्रवेश पाने वाली पुत्री के सफल जीवन की कामना की।

दिनांक २५ की सायं ही श्रद्धेय ब्रह्मलीन स्वामी गुरुचरणदास जी महाराज के १७वें में सम्मिलित होने के लिये आपने हरिद्वार प्रस्थान किया।

वहाँ सम्मिलित हो, अपने श्रद्धा-सुमन उस विराट् पुरुष रूप सन्त के श्रीचरणों में समर्पित कर, दिल्ली होते हुए जयपुर सम्मेलन में अपने विचारों से सभ्य-समाज को अवगत कराने के लिए आपने प्रस्थान किया।

१-१२-७८ से ६-१२-७८ तक महाराज श्री आश्रम पर ही निवास करेंगे।

म० मं० परम श्रद्धेय स्वामी गुरुचरणदास जी महाराज के श्रीचरणों में "पत्रिका" अपनी श्रद्धाञ्जलि समर्पित करती है।

— सम्पादक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दूरभाष– ८४२२५ राजपुर, ४२९७ देहरादून, तार का पता–(वेदान्त) देहरादून, रजि. नं. डी. एन. १५

* प्रेम *

प्रेम अन्तःप्रेरक होता है, मस्तिष्क उसकी व्याख्या करता है। जिस प्रकार वस्त्रों से पहले शरीर है, उसी प्रकार सोचने विचारने से पहले सदैव भावना क उदय होता है।

... ...

आधि-व्याधि क्या है ? प्रेम के अभाव में संकोचन या संकीर्ण वृत्ति; केवल पर-छाँई के हिलने डुलने से पर फड़फड़ाना और दिन के झूठे स्वप्नों के भय से चिल्लाना।

... ...

'प्रेम' इस हद तक ग़लत समझा गया है कि प्रेम शब्द के उच्चारण मात्र ही से प्यारे लोगों के हृदयों में दिव्य ईश्वरीय ज्योति की जगह कामुकता और मूर्खता के भावों का उद्रेक होने लगता है।

... ...

प्रेम अथवा अभेदता की भावना जब दो प्राणियों में संचरित होने लगती है, तब द्वैत का भ्रम मिट जाता है।

... ...

जिस मनुष्य ने कभी प्रेम नहीं किया, वह कदापि ईश्वरानुभव नहीं कर सकता। यह एक तथ्य है।

— स्वामी राम

बुक पोस्ट

ग्राहक संख्या ५३२

श्री/श्रीमती ... डॉ. कुलदीप प्रसाद कालरा

स्थान ... डॉ. कुलदीप प्रसाद कालरा

डाकखाना ... [illegible]

ज़िला ... [illegible]

मासिक पत्र—
"राम–सन्देश"
स्वामी रामतीर्थ मिशन
राजपुर, देहरादून (उ. प्र.)
Pin–248009 भारत.

स्वामी रामतीर्थ मिशन, राजपुर देहरादून (उ० प्र०) के लिए प्रकाशक स्वामी अमर मुनि द्वारा शहन्शाही सर्वहितकारी प्रेस, राजपुर (देहरादून) में, मुद्रित।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राम - सन्देश

आजीवन सदस्यता शुल्क : भारत में — १००/-, विदेश में — ५००/-

—संस्थापक—

ब्रह्मलीन स्वामी हरिॐ जी महाराज

—व्यवस्थापक—

स्वामी अमर मुनि जी महाराज

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विषय-सूची

विश्रान्ति	—	१
सम्पादकीय	—	२
व्यावहारिक वेदान्त	—	३
मैंने दुख की बगिया में	—	५
मां की पुकार	—	६
भूखे पेट का भगवान रोटी	—	७
मानव सर्वोत्कृष्ट रचना व	—	१०
भगवद् चिन्तन	—	
गीत	—	११
सञ्चित धन	—	१२
जीवन की सार्थकता	—	१३
दर्शन शास्त्र	—	१६
स्वामी राम का एक मिलाप	—	१७
लाला दुर्गादास जी की कोटी पर दिया गया प्रवचन	—	१८

मुख्य सम्पादक—
स्वामी हंस प्रकाश वेदान्ताचार्य, एम०ए० (दर्शन)

सह सम्पादक—
"निर्द्वन्द्व"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आश्रम के प्रागंण में निर्मित भव्य भवन में सपरिवार सदाशिव का आगमन

२०-४-७८ तदनुसार वृहपतिवार को प्रात ९.३० बजे सपरिवार सदाशिव का आगमन आश्रम प्रांगण में निर्मित भव्य भवन में हो रहा है। जिसमें काशी से वेदविद ब्राह्मण, महामण्डलेश्वर, विख्यात प्रवक्ता पधार रहे हैं। मूर्तिपूजन व रुद्री पाठ दिनांक १८-४-७८ से प्रारम्भ हो जायेगा।

अतः सपरिवार सदाशिव की अगवानी में सपरिवार, इष्टमित्रों सहित सम्मिलित होकर आप भी अपने कर्तव्य का पालन करें।

जगद्गुरू श्री शंकराचार्य जी महाराज की व श्री श्री माँ आनन्दमयी की उपस्थिति की पूर्ण आशा है।

परमाध्यक्ष
स्वामी अमर मुनि जी
स्वामी रामतीर्थ मिशन
राजपुर, देहरादून

भवदीय
शिवचरनदास सभ्रवाल
जितेन्द्र नैय्यर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'राष्ट्र के हित के लिए प्रयत्न करना ही विश्व की शक्तियों अर्थात् देवताओं की आराधना है'
—स्वामी राम

वेदान्त, अध्यात्म, संस्कृति, धर्म एवं भक्ति का सजग सन्देशवाहक तथा
स्वामी राम के आदर्शों का उपस्थापक एकमात्र लोकप्रिय मासिक—

राम-सन्देश

वेदोपनिषदां तत्त्वम् सत्यं नित्यं सनातनम् ।
तत्सर्वं "रामसन्देशे" पत्रेऽस्मिन्नवलोक्यताम् ।।

वर्ष २७
अंक ४

वार्षिक शुल्क : १० रु०,
एक प्रति-८५ पै०,

विश्रान्ति

प्रियतम ! एक क्षण मुझे अपने पास बैठने का अवकाश दे दे !
अपने हाथ के काम मैं बाद में निपटा लूंगा ।

जब तू आंखों से ओझल हो जाता है, मुझे न शान्ति मिलती है
न विश्राम मिलता है ।

मेरा समस्त कार्य–भार तटहीन सागर की तरह विशाल और
दुरूह बन जाता है ।

आज मेरे आँगन में अपने गर्म उच्छ्वासों के साथ वसन्त आया
है । आज मधुमक्खियां कलियों के कानों में मधुर
स्वर से गुनगुना रही हैं ।

जी चाहता है—तेरे सामने चुपचाप बैठा रहूं, और निर्बाध
अवकाश के साथ जीवन के पूर्ण समर्पण का गीत गाता
रहूं !

— टैगोर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

★ सम्पादकीय ★

उन पाठकों का, जिन्होंने अपनी कृपा रूपा सहयोग परिचायिका पत्रिका सम्बन्धिनी प्रतिक्रियाओं से हमें स्व प्रेषित स्नेहकरांकित पत्रों द्वारा विज्ञ कराया हम बहुत-२ धन्यवाद करते हैं।

अब आशा सी बंधी है कि पत्रिका के स्वरूप को परिष्कृत किया जा सकेगा, क्योंकि जागृत पाठकों का सहयोग हमारे साथ है।

यहां हम उन पाठकों से असहमत हैं जो केवल 'वेदान्त' इस शास्त्रीय जीवन के उच्चतम शब्द की आड़ लेकर पत्रिका को सामान्य जीवन से अलग हटा मात्र बुद्धि के क्षेत्र तक सीमित रखते हुए शास्त्रीय रूप देने के इच्छुक हैं। इन्हीं जीवन से हटे आध्यात्मिक विचारों को उस महापुरुष ने, जिन्हें हम स्वामी रामतीर्थ के नाम से जानते हैं, व्यावहारिक रूप देने का प्रयास किया था। सम्भवतया "पाण्डैरवरी शब्द झरी भुक्तये न तु मुक्तये - द्वारा शंकराचार्य ने भी इसी बात की ओर संकेत किया था कि शास्त्रीय विवेचना तक ही सीमित रहना अपना उद्देश्य नहीं है। लक्ष्य तो हो सकता है यह परन्तु चरम नहीं क्योंकि-मोक्ष एवं परम पुरुषार्थः।

हमारा प्रत्येक अंक में यही प्रयास होता है कि क्रमशः चल रहे लेखों से अतिरिक्त ऐसे लेखों का चयन किया जाये जो व्यावहारिक पक्ष की उदाहरण के द्वारा या लघु कथा के रूप में व्याख्या करने में सक्षम हो।

जैसे पूर्व संकेत किया गया है कि 'पत्रिका' जीवन के प्रत्येक पक्ष की मर्यादित भाषा शैली द्वारा व्याख्या का प्रस्तुतीकरण करने की इच्छा रखती है। इन्हीं सामाजिक, दार्शनिक, शिक्षासम्बन्धिनी किसी भी प्रकार की समस्याओं को-राजनैतिक क्षेत्र को छोड़कर-समाधान सहित यदि लेखक प्रेषित करें या आलोचक संग्रहीत कर उनका प्रेषण करें तो विषय सामिग्री का व्यावहारिक पक्ष अधिक मजबूत हो सकता है।

उपरोक्त आशय का अंकन यहां इस बात को समक्ष रख किया जा रहा कि उर्वर-क्षेत्र को कृषि योग्य ठोकरों से नहीं बल्कि कठोर परिश्रम व उसमें आन्तरिक परिवर्तन कर और स्नेह की आद्रिता से युक्त कर ही बनाया जा सकता है!

हम आपकी प्रतिक्रियाओं को सादर आमन्त्रित तो करते ही हैं पर साथ यह भी आशा करते हैं कि आप उसका सम्भावित समाधान भी मौलिक रूप में सर्वांगीण दृष्टि को समक्ष रख प्रेषित करेंगे।

प्रस्तुत है आपके करकमलों में मास अप्रैल का अंक
आमन्त्रित है इस पर आपकी प्रतिक्रियाएं
सादर और सस्नेह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गतांक से आगे:—

जनवरी १९०२ में भारत-धर्म-महामण्डल भवन मथुरा में स्वामी राम का व्याख्यान,

श्रीनारायण स्वामी द्वारा लिखित नोटों से –

व्यावहारिक वेदान्त

कर्म

अगर देर भी लग जाय, तो भी एक सप्ताह के भीतर - भीतर निर्णीत होता है, अर्थात् मुकदमें बहुत छोटे और थोड़े होने के कारण बहुत शीघ्र निर्णीत होते हैं। ऐसे ही मनुष्य भी दो प्रकार के मन वाले होते हैं- एक ऐसा मन रखते हैं कि जिसके भीतर बड़े-बड़े भारी और असंख्य संकल्प – कामनाएं उत्पन्न होती रहती हैं, और अधिक एवं भारी होने के कारण चीफकोर्ट की भाँति जहाँ मुकदमे शीघ्र निर्णीत नहीं होने पाते और जहाँ यह संभव है कि मुकदमे (संकल्प, कामना आदि) निर्णीत होने के लिए अगर उस जज साहब (ऐसे मनवाले मनुष्य) की दो - तीन पेशियां (दो - तीन जन्म) भी ले लें, तो बड़ी बात नहीं है। इसलिए ऐसे मन रखने वाले महाशयों को जो लगभग सब संसारी होते हैं, चीफकोर्ट अर्थात् बड़ी अदालत के जजों की पंक्ति में गिनना चाहिए। और दूसरे लोग ऐसा मन रखते हैं, जिनके भीतर कामनाएं बहुत कम और बहुत छोटी – छोटी उठती हैं, अर्थात् जहाँ मुकदमें बहुत थोड़े और छोटे - छोटे होते है, इस हेतु वे पहले तो एकदम में हो, नहीं तो एक दो घंटे या दिनों के भीतर – भीतर पूरे निर्णय हो जाते है। ऐसे मन रखने वाले महाशय, जो प्रायः ज्ञानी या ऋषि लोग होते हैं, हिन्दुओं के यहाँ अदालत खलीफा के जज माने जाते हैं। यद्यपि नाम या अदालत के विचार से ये छोटे दिखाई देते हैं, परन्तु पद में इनको हमारे शास्त्र औलिया या पैगम्बर (सिद्ध या अवतार) की श्रेणी में गिनते हैं। मगर यह याद रहे कि कामनाएं अर्थात् मुकदमे इन दोनों महाशयों द्वारा निर्णीत अवश्य होंगे-अर्थात् वास्तव में ये दोनों महाशय सत्यकाम और सत्यसंकल्प अवश्य कहे जायंगे। केवल अन्तर इतना रहेगा कि एक के मुकदमे (कामनायें) बहुत देर में मुद्दत के बाद निर्णीत होंगे, और कामनाओं के देर में पूरी होने के कारण ये महाशय सत्यकाम और सत्यसंकल्प देखने में नहीं मालूम होंगे, और दूसरों के मुकदमे (संकल्प) बड़ी जल्दी बल्कि तत्काल पूर्ण होते दिखाई देंगे,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और कामनाओं शीघ्र पूरा होने के कारण वे सत्यकाम और सत्य संकल्प दिखाई देंगे। मगर इन दोनों व्यक्तियों के संकल्पों अर्थात् मुकदमों के पूरा होने में तनिक भी संशय नहीं है। अतएव ऐसे महाशय जो इस बात की शिकायत करते हैं कि हमारी कामनाएं पूरी होती नहीं दिखायी देतीं, इसमें केवल उनकी अपनी कमी है। यदि अपनी कामनाओं को पूरी होते देखना चाहते है, तो अदालत खलीफा के जज (ज्ञानी, सिद्ध, अवतार) की भाँति अपनी अवस्था बनायें—अर्थात् उनकी भांति मन में कामनांए (संकल्प – मुकदमें) छोटी - छोटी और बहुत थोड़ी होने दें. स्वयं उनका अपना अनुभव अपने आप उनको साक्षी देगा, वरन् उनको फिर कहने की भी आवश्यकता न रहेगी।

शंका - यदि स्वयं हमारी ही कामनाएं पूरी होती हैं, तो फिर भाग्य के, जिसकी चर्चा शास्त्रों में प्राय आती हैं, क्या अर्थ हैं ?

उत्तर—केवल जो कामनायें असख्य होने के कारण एक जन्म में मरण-पर्यन्त पूरी नहीं हुई, उनका अवशिष्ट समुदाय, पूरी होने के लिए, न अपनी शक्ति के अनुसार, दुबारा जन्म दिलाता है और वे ही, न पूरी हुई कामनाएं जिन्होंने मरने के पश्चात् अपना-अपना फल देने के लिए दुबारा जन्म दिलाया है, अब (दूसरे जन्म में) भाग्य कहलाती हैं, और इसीलिए हमारे शास्त्रों में लिखा है कि संकल्पों या कामनाओं के अनुसार लोगों का दूसरा जन्म होता है।

शंका—हिन्दुओं के यहाँ यह कहावत प्रसिद्ध है कि 'अंत मति सोई गति, अर्थात् जैसी मरते समय कामनाएं होती हैं, उन्हीं के अनुसार दूसरा जन्म होता है। मगर आप बतला रहे हैं कि जो कामनाएं पूरी हुए बिना पहले जन्म से बची रहती हैं, उनका फल जन्म होता है। इसमें फर्क क्या है ?

क्रमशः

समय के साथ

हम समय के साथ जुड़कर
चल रहे हैं
शीत लहरें छू गई तो
बन गये हिम
आज,
सूरज की तपन ये
गल रहे हैं।
कल,
बनेंगे मेघ
बरसेंगे धरा पर,
वाष्प बन उड़ने लगे हैं।
फिर समय के साथ
हम जुड़ने लगें हैं।

—सलोम अश्क

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मैंने दुख की बगिया में

भुवनेश्वर सिंह नेगी

मैंने दुख की बगिया में
कुछ सुख के फूल उगाये हैं।
खुशबू के धोखे में, कुछ
थोड़े शूल उगाये हैं।।

मदिर गंध है उनमें इतनी
जब तब चुभ चुभ जाते हैं।
प्रीत है उनसे इतनी
मीठी पीड़ा दे जाते हैं।।

छूने का मोह छोड़ न पाऊं
करपाश बढ़ते रहते है।
प्रहरी हैं इतने बैठे
सदा जगते ही रहते हैं।।

यौवन मिला है बगिया को
फूलों में हंसती रहती है
हवा के थपेड़ों में भी
मदिर मदिर इठलाती रहती है।।

मैं भी हंसता रहता हूं
हंस के ही तो रोना है।
गिरेगा फूल जिस दिन
बगिया को भी तो रोना है।।

मुरझायेगा फूल तो इक दिन
सुरभि अपनी बिखरा कर।
दुलार डाली का छोड़ कर
आंगन को अपने महका कर।।

पी लूँगा आंसू पलकों में
देखकर नियति का खेल।
और कुछ नहीं है यहां
शूलों से मन का मेल।।

सावधान रहूँ कितना ही
मन में कुछ डर सा रहता है।
स्वयं के पहरे से यही!!
तन यों ही सिहरता रहता है।।

मैंने .....

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मां की पुकार

बोला बालक "ममता न तोड़
जननी ! मुझसे मुँह यों न मोड़
तेरी आज्ञा का पालन कर
वह स्नेह सदा करता लालन
मैं मरूं जिऊं पर छुटे न प्रन
वरदान बने मेरा जीवन !
जो मुझको तू यों चली छोड़
तो मुझे मिले फिर यही क्रोड़ !"

हे सौम्य ! इड़ा का शुचि दुलार
हर लेगा तेरा व्यथा भार
यह तर्कमयी तू श्रद्धामय
तू मननशील कर कर्म अभय
इसका तू सब संताप निचय,
हर ले, हो मानव भाग्य उदय,
सबकी समरसता कर प्रचार,
मेरे सुत ! सुन मां की पुकार।"

— प्रसाद

★ आवर्त्तन ★

शान्ति डबराल 'बावड़ी'

चक्र चल रहा है निशि-दिन अस्तोदय की गति में
घूम रहा है जड़ चेतन किस अनन्त की मति से
यों तो मानव जीवन ही कुछ क्षण का होता है
उस क्षण के भी शतांश में बहता यौवन सोता है
हलचल होती है तन मन में पाता कुछ खोता है
अन्त सर में बरबस विकसित प्रणय पुण्य होता है
काल चक्र की सत्य अराओं के हम भी कुछ कण हैं
जीवन के अस्तोदय में भी क्यों न रहें हम संग में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

" भूखे पेट का भगवान रोटी "

श्री चन्द्र

मन की हविस मन को गुनाहगार बना देती है,
बाग के बाग को वीरान बना देती है,
भूखे पेट को देश भक्ति सिखाने वालो,
भूख इन्सान को गद्दार बना देती है।

'कल्याण' भारतीय संस्कृति का मूलभूत आधार रहा है हमारे ऋषि-मुनियों एवं ज्ञानी पुरुषों ने तो समस्त संसार के सुख एवं कल्याण के लिए ईश-स्तुति तक की है प्राचीन। भारत अपने ही प्रकार का एक भारत था। सोने की चिड़िया कह कर इसे पुकारा जाता था। यही कारण भी था कि विदेशी सदैव इस चिड़िया को कैद करने के लिए कुचक्र अथवा षड्यन्त्रों का जाल फैलाये तत्पर रहते थे। उनके ये कुचक्र सफल हुए तथा हमको परतन्त्रता की बेड़िया पहननी पड़ी। हमारे प्राकृतिक साधनों, ऐतिहासिक साधनों एवं सांस्कृतिक साधनों का अनुचित रूप से प्रयोग ही नहीं वरन् उन्हें समूल नष्ट भी किया जाने लगा। हमारी यह सोने की चिड़िया – भारत, मात्र अस्थि पंजरों का एक ढाँचा सा रह गयी। भारतीय सम्पदा की चमक इंग्लैण्ड में जाकर सुरक्षित सी हो गयी। अंग्रेजों ने हमें आपस में टकराकर अपनी शक्ति और संगठन को अत्यन्त सुदृढ़ कर लिया। हमारी संस्कृति का सूर्य लगभग अस्त हो लगा था और 'भारतीयता' पूर्णतः खतरे में आ गयी प्रसिद्ध समाजशास्त्री हाबिल ने कहा है कि– "मनुष्य के पास से यदि उसकी संस्कृति छीन ली जाये तो वह मानव नहीं, निश्चय ही नर-वानर होगा" वास्तव में जब हमारे साहित्य को नष्ट किया जाने लगा और बुद्धिजीवियों के प्रति उपेक्षा एवं कठोरता अपनायी जाने लगी–तब भारतीय मानव, मानव नहीं रहा। मात्र पेट भरना ही उसका भगवान हो गया। क्योंकि सभी प्रगति के साधन उससे छीन लिए गये थे।

कठोर एवं सतत प्रयत्नों के पश्चात् हमें स्वतन्त्रता प्राप्त हुई और विश्व के मानचित्र में भारत एक 'गणतन्त्र' के रूप उभरा। आज कुछ-एक क्षेत्रों में निःसन्देह आशातत प्रगति की है। किसी भी राष्ट्र की प्रगति के तीन प्रमुख स्तम्भ होते हैं:- (१) कृषक वर्ग (२) शिक्षक वर्ग (३) सैनिक वर्ग। इन तीनों के अन्त में 'क' आता है जो 'कर्त्ता' की ओर ध्यान आकृष्ट करता है अथवा जिसका अर्थ है 'करने वाला'। केवल सैनिक वर्ग को छोड़कर साधारणतः कुछ समस्याएं हमारे इन दो कर्ताओं के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सम्मुख मुंह फैलाये खड़ी ही रहती हैं। कृषक जिसके हाथों में 'उत्पादन' है, शिक्षक जिसके हाथों में ज्ञान का 'उपभोग' कराना है, वही यदि असंतोष हो तो कोई भी समाज प्रगति नहीं कर सकता। आज मानव आवश्यकतायें असीमित हैं तथा आधुनिक युग 'द्रव्य' द्वारा 'क्रय-विक्रय' का युग है। कृषक तथा शिक्षक ये समाज के ऐसे दो प्रमुख हैं जिनकी मात्र उदासीनता से दुर्भिक्ष तक का काल-गरल पीना पड़ सकता है। कृषक तो उपज अथवा उत्पादन बढ़ाता है दूसरी ओर शिक्षक उत्पादन के उपभोग हेतु लोकाचारों, नैतिक-नियमों, कार्य प्रविधियों एवं कर्तव्यों के प्रति समाज को सचेत करता है। अतः हम निःसन्देह यह कह सकते हैं कि कृषक से कहो अधिक समाज की प्रगति शिक्षक पर ही निर्भर करती है।

भारत आज भी 'आध्यात्मिकता' का केन्द्र माना जाता है यही कारण है कि आज भी विदेशी लोग आत्मशान्ति हेतु भारत के दुर्गम स्थानों पर शान्ति की खोज में भटकते देखे जाते हैं। हमारे देश की पिछड़ी जातियों के उत्थान हेतु आज हमारी सरकार का ध्यान प्रचुर है, बड़े ही सौभाग्य की बात है यह। यही कदम हमारी अनुपम संस्कृति का रक्षक सिद्ध हो सकता है। 'धार्मिक निरपेक्षता' हमारे शासन का आधार है। पिछड़ी जातियां तो सोचनीय हैं ही इनकी आड़ में अन्य गरीब जनता की स्थिति भी दयनीय है। ऐसे अवसरों का लाभ उठाकर ही विदेशी लोग चन्द सिक्कों की झलक दिखाकर धर्म तक बदलवा लेते हैं। जहां हमारा धर्म बदला समझ लो हमारा भगवान ही बदल गया, हमारी संस्कृति तक बदल गयी। स्पष्ट है कि धर्म क्यों बदला गया— महज आवश्यकताओं की संपूर्ति हेतु। यह तथ्य स्पष्ट करता है कि सिर्फ पेट भरना अथवा 'रोटी' ही आज भारत की १९ प्रतिशत जनता का भगवान है। भूखे पेट रहकर, यदि हम चाहें कि हमारी संस्कृति सुदृढ़ हो, नैतिक नियम दृढ़ हों, लोकाचारों का विकास हो, मात्र कपोल-कल्पित है। जब तक मनुष्य भूखा है, मनुष्यता अधूरी है। जब हमारी आत्मा रोटी की ही इच्छा करेगी, कैसे उसका परमात्मा में मिलन हो सकेगा।

धर्म पर चलकर ही मनुष्य ईश्वर की ओर ध्यान लगाना है। भूख के कारण जब वह धर्म बदलने पर विवश होता रहेगा तब क्या उसकी आध्यात्मिक उन्नति सम्भव है? कौन सा भगवान उसे मिल सकता है?

महात्मा गांधी का कथन है कि— "कर्म करते हुए भी जो उसका फल छोड़ता है, वह चढ़ता है किन्तु जो धर्म छोड़ता है वह गिरता है" आज हमसे इतना कार्य तो होता नहीं है जितनी कि हमारी आवश्यकताएं हैं। सदैव भौतिक वस्तुओं का अभाव हमें वेदनायें देता रहता है। फलतः इस कारण ईश्वर हमें रोटी के रूप में अथवा 'आवश्यकता' के रूप में ही दिखाई देता रहता है।

भूखे मनुष्य की तो मात्र एक हीं आकांक्षा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भगवान नजर आती है। क्योंकि कहा भी है– 'भूखे भजन न होय गोपाला'। फलतः रोटी के कारण ही मनुष्य संस्कृति तक का दास भी बन बैठता है। उसका लक्ष्य रोटी होने के कारण भगवान उसका केन्द्र-बिन्दु नहीं होता। वह पूर्णतः रोटी का गुलाम होता है तथा 'रोटी' की राह में जो कुछ भी प्रलोभन उसे दीखते हैं सहर्ष अपना लेता है। उपर्युक्त कथन की पुष्टि लक्ष्य के आधार पर जाँदला ब्रुयेर के शब्दों में कितनी सार्थक सी लगती है उनका कथन है कि "खरीदे हुए गुलाम का तो एक ही मालिक होता है किन्तु भूखे इन्सान को तो उन सबका गुलाम बनना पड़ता है जो उसकी 'रोटी' में काम आ सकें।"

ईश-स्तुति हेतु भक्त-जन मन्दिर में जाते हैं किन्तु इनमें कुछ ऐसे भी होते जो अपनी अनजानी सी दृष्टि जूतों पर ही केन्द्रित रखते हैं, सोचते हैं कि कोई उनके जूते अथवा चप्पल लेकर चम्पत न हो जाये। पाठक गण अब स्वयं ही अनुमान लगा सकते हैं कि जो मनुष्य मन्दिर में जूते उठाने के जायेगा उसका मुख्य लक्ष्य या तो उनको स्वयं ही पहनना होगा अथवा उन्हें बेचना। फलतः जूते चुराने वाले के लिए तो वे जूते ही भगवान हैं क्योंकि वे ही उसके अन्नदाता सिद्ध हो सकते हैं क्योंकि उसे तो पेट की आग बुझानी है। भले ही पकड़ा जाये, भले ही उसे हथकड़ियां पहना दी जाये। किसी ने ठीक ही है—

भूख में लुटते हैं दीन-और-इमान
बड़ा तीर मारा कि पहना दी बेड़ियाँ।

भारत की खाद्य समस्या बड़ी ही विकट है। यहां तक कि हमें मात्र भूख के कारण प्रजातन्त्र को भी गंवाना पड़ सकता है। डॉ० सरमन ई० जानसन ने तो यहां तक कहा है कि — "भारत का अन्न संकट केवल खाद्यान्न की समस्या ही नहीं वरन् भारत के भविष्य के निर्माण की भी समस्या है। पर्याप्त भोजन के अभाव में भारत वर्ष के कल्याण का प्रश्न, उसके लिए सामाजिक न्याय प्राप्त करना एवं प्रजातन्त्र का विकास करना सर्वथा असम्भव है।"

ये खाद्य संकट भूखे पेट का और ज्यादा भगवान बनता जा रहा है। एक भीख माँगने वाला व्यक्ति किसी भी व्यक्ति को 'अन्नदाता' अथवा माई-बाप' कहते हुए नहीं झिझकता। उसे तो पेट की भूख मिटानी है जो भी उसको सहायता देगा अथवा जो भी उसकी 'रोटी' जुटवाने में आगे बढ़ेगा वही उसका भगवान होगा।

एक मजदूर दिन भर परिश्रम करने के पश्चात् जब रूखा-सूखा खाकर रात को बीड़ी का कश खींचकर खाट पर लेटता है तो उस समय उसके दिमाग में अगले दिन की चिन्ता निरन्तर बनी रहती है वह इसी सोच डूबकर 'भगवान तेरा ही आसरा है' कहकर सो जाता है। स्पष्ट है कि उसका वह भगवान अगले दिन की 'रोटी' है। वह भयभीत रहता है कि कल मैं भूखा न रह जाउं, मेरे बच्चे भूखे न रह जायें। निःसन्देह वह ब्राह्ममूर्त में

(आगे पृष्ट १४ पर)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"मानव सर्वोत्कृष्ट रचना व भगवद् चिन्तन"

-ज्ञानप्रकाश

प्रकृति में भगवान ने चौरासी लाख योनियों का एक राजा मानव शरीर बनाया अथवा बनवाया। अर्थात् भगवान के हुक्म से यह मानव शरीर ब्रह्मा जी ने अपनी पूरी कारीगिरी से तैयार किया, उसने इसमें कोई भी कमी बाकी नहीं रक्खी प्रकृति में कुछ जीव ऐसे हैं जिनमें केवल अन्नमय कोष हीं होता है, कुछ में प्राणमय कोष की ही प्रधानता होती है, परन्तु पूर्णतम कोषों का विकास केवल मानव शरीर में ही होता है, इसमें पांचों कोष अन्नमय, प्राणमय, मनोमय, विज्ञानमय, आनन्दमय बड़ी खूबी से ब्रह्मा जी ने फिट किये हैं। कहने का तात्पर्य यह है कि मानव शरीर प्रकृति की सर्वोत्कृष्ट रचना है, अन्य जीवों की अपेक्षा परमात्मा को पाने का अधिकार केवल इस मानव शरीर को ही है।

बड़े भाग्य मानुष तन पावा, सुर दुर्लभ सद्ग्रन्थन गावा।
साधन धाम मोक्ष कर द्वारा, पाय न जो परलोक सुधारा॥

सभी ग्रन्थों वेद, पुराण, गीता, रामायण और उपनिषदों में मानव शरीर की बहुत महिमा गायी गयी है। ८४ लाख योनियों में जीव भटकता हुआ अन्त में मानव शरीर को धारण करता है। यह मानव शरीर अति दुर्लभ है, बड़ी कठिनता के बाद जीव इस चोले को पाता है। यह चोला जीव को दुरुयोग करने के लिये नहीं दिया गया, यह चोला जीव को सांसारिक भोगों के लिये नहीं दिया गया, यह चोला केवल खाने-पीने, ओढ़ने पहनने के लिये ही नहीं दिया गया है, यह चोला (मानव शरीर) ईश्वर के भजन के लिये, ईश्वर की प्राप्ति के लिये ही दिया जाता है यदि यह मानव शरीर सांसारिक भोगों में ही भटकता रहा, यदि यह सुन्दर दुर्लभ मानव शरीर भगवान को जाने बिना भगवान का भजन किये बिना, भगवान की प्राप्ति के बिना ही मर जाता है तो फिर इसे वही चौरासी लाख के चक्कर में भटकते रहना पड़ेगा। इस लिए ऐ! लाख चौरासी मन्जिलों के मुसाफिर सावधान!!!

इस अनमोल हीरे (मानव शरीर) को व्यर्थ ही न गवां देना, यह शरीर इस समय और इस युग को ऐसे ही न बिता देना। यह मौका बार-२ नहीं आएगा। आज के युग में भगवान केवल नाम स्मरण और भगवद् चिन्तन से ही सन्तुष्ट हो जाते हैं इसलिए ऐ! मुढ़ प्राणी भगवद् चिन्तन ही तुझे इस चौरासी लाख के बन्धन से छुटकारा दिला सकता है। भगवद् चिन्तन भी दो प्रकार से कर सकते हैं? "एक तो इन्द्रियों को

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपने-अपने विषयों से हटाकर तथा मन को एकाग्र करके, योगाभ्यास द्वारा अपने श्वास को मस्तक में चढ़ा करके, "ॐ" इस ईश्वर-स्वरूप नाम के शुद्ध-स्वरूप का स्मरण करना।" २- "दूसरा प्रत्येक कार्य में, प्रत्येक समय में और अवस्था में अनन्य भक्ति से, अनन्य चित्त से शुद्ध स्वरूप का स्मरण करना।" पहला उपाय सर्व साधारण के लिए कठिन है तथा आचरण करना भी असम्भव है। दूसरा उपाय सरल, सर्व साधारण के लिए उपयोगी व भगवद् प्राप्ति के लिए सुलभ है।

अनन्य चेताः सततं यो मां स्मरति नित्यशः।
तस्याहं सुलभः पार्थ नित्य युक्तस्य योगिनः॥

॥ गीता अ० ८ श्लोक १४॥

गीत

शास्त्री बलदेव राज 'शान्त'

वो तुम न थे, वो मैं न था, थी गन्ध प्यार-फूल की।
आरती पढ़ी जहां, कारवां की धूल की॥
डाल डाल थी हरी।
पात पात था हरा।
ओस मोती सी झरी।
था प्रात प्रीत से भरा।
वो तुम न थे, वो मैं न था, थी क्षमा वह भूल की।
यातना मिली जहाँ, पांव नीचे शूल की॥ ४॥
हर निशा में नाश था।
हर दिशा निराश थी।
देख करके दुर्दशा।
हर नज़र हताश थी।
वो तुम न थे, वो मैं न था, थी वृक्षमूल कूल की।
बढ़ी जहां कि चिन्तना, इस विरह-त्रिशूल की॥ २॥
व्यपथा-कथा अथाह थी।
कण्टकों की राह थी।
प्रलय-प्रवाह-तरंग में,
मधुर-मिलन की चाह थी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वो तुम न थे, वो मैं न था, चोट थी वह फूल की।
जहां हुई थी अर्चना, अश्रु की, बबूल की ॥ ३ ॥

मगन गगन में राग था।
उदय नया विहाग था।
तेरे प्यार का वचन,
रात का चिराग था।

वो तुम न थे, वो मैं न था, उपासना थी धूल की।
वर समझ के प्यार का, जो स्वयं बबूल की ॥ ४ ॥

समय सुखद निकल गया।
समय दुःखद यह मिल गया।
रीत—प्रीत गीत की।
कब कहो, पुनीत की?

वो तुम न थे, वो मैं न था, वेदना थी शूल की।
जिसे हमारे दो उरों ने, फूल कह के धूल की ॥ ५ ॥

सञ्चित धन

दिन ढलते समय मृत्यु जब तेरे द्वार पर आएगी, तू उसे कौन सी भेंट देगा?

मेरे प्राणों का सागर रत्नों से भरपूर है, वे सब रत्न उसके आगे रख दूंगा?

जिस दिन मृत्यु के दूत मेरे द्वार पर आएंगे उस दिन उन्हें खाली हाथ वापिस नहीं भेजूँगा

शरत् वसंत, संध्या, प्रभात, दिवस, रात्रि-रूपी वाटिका के पुष्पों से संचित रसों का भंडार मेरे जीवन-पात्र में भरा है,

सुख – दुःख, छाया — प्रकाश के विविध पात्र-पुष्पों से मेरा अन्तःकरण सज्जित है,

जितना संचित धन मेरे पास है, जो कुछ भी मैंने इतने दिनों संग्रह किया है- वह सब संचित धन सजाकर अपनी जीवन - यात्रा के अन्तिम दिन जब मृत्यु मेरे द्वार पर आएगी तो मैं उसके आगे रख दूंगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जीवन की सार्थकता

स्वामी श्री सत्य देव जी महाराज

जब तक ज्ञान प्राप्ति न हो, तब तक अज्ञान की निवृत्ति नहीं होती, एवं अज्ञान की निवृत्ति हुए बिना भ्रम का निवारण भी नहीं होता। किन्तु इस ज्ञान प्राप्ति के प्रसंग में ज्ञानों के भेद भी जान लेना आवश्यक है।

मानव जीवन की सार्थकता किसमें है? जीवात्मा अनादि काल प्रवृत्ति के प्रवाह में सिवार के समान अणु रूप में नाना विध शरीर धारण करते हुए काल की गति से बह रहा है न जाने किस जगह पहुंचने पर अविरल प्रवाह से छुटकारा प्राप्त होगा एवं सागर संगम में पहुंचकर जैसे नदी कृतार्थ होती है, वैसे हीं मनुष्य की आत्मा अपनीं परम काम्य वस्तु को प्राप्त कर चिरकाल के लिए शान्ति प्राप्त करेगा। विभिन्न सम्प्रदायों में विभिन्न प्रकार से लक्षणों एवं भावों द्वारा इस लक्ष्य से निर्धारण के लिए प्रयत्न हुए हैं। इन प्रयत्नों द्वारा दार्शनिक साहित्य में विविध प्रकार के मतवादों की सृष्टि हुई, विचार करने पर प्रतीत होगा कि इन सभी सिद्धान्तों में कोई भी सिद्धान्त भ्रान्त नहीं हैं। तो भी यह सत्य है कि चरम सिद्धान्त कभीं एक के सिवाय दो नहीं होते।

जो ज्ञान बुद्धि का धर्म है, उससे हम लोगों का थोड़ा आँशिक रूप में परिचय है, उसी ज्ञान के प्रभाव से बुद्धि के धर्म अज्ञान की निवृत्ति होती है, किन्तु उस अज्ञान निवृत्ति होने पर भी मूल में एक ऐसा अज्ञान रह जाता है जिसके निवृत्त हुए बिना जीवन का यथार्थ लक्ष्य प्रकट नहीं हो सकता। आकाश में बादल रहने पर बादलों के मध्य में स्थित सूर्य बिम्ब दिखाई नहीं देता। किन्तु मेघ के हटने के साथ ही सूर्य के दर्शन होते हैं, एवं उसकी किरण तथा धूप की प्राप्ति भी होती है। परन्तु अर्धरात्रि में जब आकाश में सूर्य का प्रकाश नहीं रहता तब आकाश में बादलों के रहने पर तथा उन बादलों के हटने पर सूर्य बिम्ब दृष्टिगोचर होगा यह कहना सम्भव नहीं, ठीक उसी प्रकार बौद्धिक ज्ञान अथवा वैचारिक चिन्तन द्वारा बौद्धिक अज्ञान के मिट जाने पर भी हृदय में अन्धकार रहता है। यदि उसके पहले साधना के द्वारा हृदय से मूल अज्ञान की निवृत्ति न हुई हो। इसलिए बौद्धिक अज्ञान के निवृत्ति का उतना मूल्य नहीं है, जितना कि पौरुष अज्ञान की निवृत्ति का अर्थात जब तक पुरुष के स्वरूप गत अज्ञा की निवृत्ति न हो जाए तब तक बौद्धिक अज्ञान की निवृत्ति का प्रश्न ही नहीं उठता,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आत्मा के पूर्व जन्म के कर्मों से देह ग्रहणकरने पर उस देह का अबलम्बन कर उसमें एक कृत्रिम अहम् प्रतीति का उदय होता है, इस अहम् प्रतीति का आधार है, बुद्धि, इस बुद्धि में जो अज्ञान धर्म रूप भासता है, वही बौद्धिक अज्ञान है, एवं उसमें जो ज्ञान का उदय होता है वह बौद्धिक ज्ञान है। किन्तु इसका मूल्य कितना है? जिस अज्ञान के प्रभाव से आत्मा माया के आधीन होकर देह ग्रहण करने के लिए बाध्य होता है, उस अज्ञान की निवृत्ति न होने तक आत्मा का नैसर्गिक शिवत्व अभिव्यक्त नहीं हो सकता, उस मूल अज्ञान को पौरुष अज्ञान कहा जा सकता है। इस अज्ञान की निवृत्ति के लिए जो अत्यन्त आवश्यक उपाय है, वह कर्म नहीं है, ज्ञान नहीं है, यहां तक कि भक्ति भी नहीं है। इन सबकी उपाय रूप में गणना होने पर भी ये बुद्धि के ही व्यापार हैं, बुद्धि के हहले जो हो चुका उसे दूर करने की क्षमता इनमें से किसी में भी नहीं है। इसलिए जब तक मनुष्य की आत्मा से वह मूल अज्ञान न हट जाय तब तक मनुष्य जीवन का यथार्थ सत्य हमें नहीं मिल सकता। वह मूल अज्ञान आत्मा द्वारा स्वेच्छा से ही गृहीत आत्मसंकोच के सिवाय और कुछ नहीं है। वास्तव में आत्मा सब प्रकार से संकोच रहित है। उसमें काल का संकोच न होने से वह नित्य है। देश का संकोच न होने से वह विभु है। क्रिया का संकोच न होने से वह सर्वकर्त्ता है, ज्ञान का संकोच न होने से वह सर्वज्ञ है। यही आत्मा की पूर्णता है। किन्तु जब लीला के बहाने स्वेच्छा से आत्मा अपने को संकुचित करती है और अभिनय के लिए जीव भाव स्वीकार करती है। तब उसके सभी स्वाभाविक धर्म संकुचित होने को बाध्य होते हैं। तब यह परिच्छिन्न शक्ति वाले क्षुद्र आत्मा माया के अधीन होकर कर्त्ता का स्वाँग धारण करते हैं। अर्थात कर्म जगत में प्रवेश करते हैं। एवं कर्म करना और किए हुए कर्मों का फल भोग करना इन दो व्यापारों में लिप्त होकर एक योनि में भिन्न-भिन्न शरीर धारण और त्याग करते हैं। आत्मा के संसार चक्र से परिभ्रमण का यही संक्षिप्त इतिहास है। देह सम्पन्न आत्मा की अभिमान सामग्री में बुद्धि एक प्रधान अंग है। ज्ञान एवं अज्ञान दोनों ही उसके धर्म हैं।

भूखे पेट का भगवान रोटी

(पृष्ट ९ से आगे)

ही उठकर तैयार होने लगता है। ईश्वर स्तुति के लिये नहीं बल्कि रोटी के लिए।

उपर्युक्त समस्त विवेचन के आधार पर इस तथ्य पर पहुंचा जा सकता है कि "भूखे पेट का भगवान मात्र रोटी ही है। जब हमारी 'रोटी' की समस्या का निदान हो जायेगा, निःसन्देह हमारा आध्यात्मिक क्षेत्र विकसित हो सकेगा और हमारी संस्कृति में स्थायित्व एवं अटूट संगठन आ पायेगा।

— लेखक 'श्रीचन्द'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बौद्धिक ज्ञान से बौद्धिक अज्ञान नष्ट हो जाता है, यह सत्य है, किन्तु यह तो बहुत नीचे की बात है, इससे मूल अज्ञान के नष्ट होने की कोई संभावना नहीं है। इसलिए सबसे पहले जिससे मूल अज्ञान मिट जाय, उसी पर विचार करना चाहिए। पहले हीं में कह चुका हूँ इस अज्ञान को मिटाने के मार्ग में कर्म, ज्ञान, भक्ति किसी की भी वैसी उपयोगिता नहीं है; क्योंकि वे सब मूल का स्पर्श ही नहीं करते, एक मात्र भगवान की कृपा—शक्ति के द्वारा ही इस मूल अज्ञान की निवृत्ति हो सकती है, अन्य उपायों से नहीं। भगवत्कृपा स्वभावसिद्ध है एवं वह अहैतुक होने पर भी आधार की योग्यता के अनुसार उसमें कार्य क्षमता प्रतिबिम्बित होती है। कृपा नित्य होने पर भी जब तक जीवात्मा का मूल आवरण—रूप मल परिपक्व नहीं हो जाता, तब तक कृपा उसमें संचारित नहीं हो सकती। किन्तु मूल परिपक्व होने पर मलपाक के तारतम्य के अनुसार कृपा संचारित हुए बिना नहीं रहती है। जिसे लौकिक जगत में दीक्षा कहते हैं वह उसी का फल है। यह दीक्षा स्थूल भी हो सकती है, सूक्ष्म भी, किन्तु यह है अत्यन्त आवश्यक। इसके न होने तक साधना का असर उतना अधिक नहीं होता, जितना होना चाहिए, क्योंकि साधना बुद्धि का व्यापार है। साधना अथवा उपासना आदि से बौद्धिक ज्ञान का उदय होता है। तथा बौद्धिक अज्ञान की निवृत्ति होती है। तब उस मुक्त हृदय में गुरु कृपा का अथवा परमेश्वर के अनुग्रह का फल प्रत्यक्ष अनुभूत होता है। इस अनुभव का रूप है स्वयं को शिव रूप में जानना। यह अनुभव अमूलक नहीं है, क्योंकि शिवत्व के आवरण रूपी मल की निवृत्ति होने के साथ ही जिस स्वरूप का प्रकाश होता है वह बौद्ध ज्ञान जनित बौद्धिक अज्ञान की निवृत्ति के बाद हृदय में प्रकाशित हो उठता है। यह जीवन्मुक्ति की सूचना और मानव—जीवन की पूर्ण सार्थकता है।

निश्चित रूप से यदि आप इस प्रक्रिया का नित्य एकान्त स्थान में रात्रि के समय अभ्यास करेंगे तो आपको अपने भीतर जो अलौकिक धर्म जगत है उसका कुछ प्रकाश मिलेगा। प्रक्रिया इस प्रकार है —

रात्रि को किसी भी समय अपने पैरों को सीधे फैलाकर सामने की दीवार से टिका दें फिर पैर के अंगूठों को हाथों से पकड़कर शरीर को झुकाये फिर नाभि में दृष्टि रखकर दीर्घ स्वर से ॐ का उच्चारण करें, इस प्रक्रिया को बार—बार दोहराते जायें श्वासों को लम्बाई से लें तथा छोड़ें। जब बीच में विश्राम का समय आ जाय तो अपने इष्ट देव का ध्यान करें। इससे आपके अन्दर प्रभु कृपा को संचारित होने में सहायता मिलेगी। यह जीवित अवस्था में कृत्रिम रूप से उग बुद्धि रूपी घड़े को फोड़ने का उपाय है।

देहान्त होने पर बुद्धि—रूपी घड़े के फूट जाने पर यह आत्मा शिवरूप में विराजमान होता है, बुद्धि का प्रश्न तब फिर नहीं रहता। यह प्राप्ति

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नूतन वस्तु की प्राप्ति नहीं है। आत्मा जो स्वयं शिवरूपी हैं, विस्मृत हो गया था, विस्मृत के हटने पर स्मृत का पुनः उदय होने से आत्मा शिवरूप में प्रतिष्ठत होता है। यही उसका परम लाभ है। इस लाभ के बिना केवल कैवल्य–अवस्था में स्थित होकर कर्म के अतीत होने पर भी पशुत्व की निवृत्ति न होने से पूर्णत्व लाभ शेष रह जाता है। कालान्तर में उस मल को हटाना अत्यन्त आवश्यक हो जाता है। तब तक आत्मा का अपना स्वरूप भूत शिवत्व अप्राप्त ही रह जाता है। अतः आत्मा में कल्पित विकारों को नष्ट करके उसे शिवत्व में पुनः प्रतिष्ठित करना ही जीवन की सार्थकता है।

★

दर्शन-शास्त्र

जो ऐसा मानते हैं कि उनका आनन्द कुछ विशेष परिस्थितियां पर अवलम्बित है, वे देखेंगे कि सुख का दिन सदा उनसे दूर ही दूर हटता जाता है। अगिया बैताल के समान निरन्तर उनसे रहता है।

— — — — —

जैसे को तैसा आकर मिलता है; आप यहीं, इसी क्षण, ईश्वर के आनन्द को अपने भीतर अनुभव करो, सफलता का आनन्द अपने आप आपकी ओर खिचता हुआ चला आयेगा।

— — — — —

महान् सुखी और धन्य है वह, जिसका जीवन निरन्तर बलिदान है।

— — — — —

सुखी है वह जो निरहंकार जीवन की श्वास को स्त्री और पुरुष की भींड़ में वैसा ही प्रेरक देखता है जैसा वह गुलाब की वाटिकाओं और शाहबलूत के बागों मैं सांस लेता है। वहीं संसार को स्वर्गीय उपवन में बदल देता है।

— — — — —

शौपनहावर, जर्मन दार्शनिक का कहना है कि आनन्द को अपने भीतर पाना कठिन है। परन्तु उसकी अन्यत्र पाना तो असम्भव ही है।

—स्वामी राम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वामी राम का एक मिलाप

इस सदी के ठीक शुरु में मैं लाहौर में पढ़ता था। स्वामी रामतीर्थ जापान और अमरीका जा चुके थे। उनके एक प्रिय शिष्य लाला हीरालाला, जिनका मुझसे नजदीकी सम्बन्ध था, शहर में रहते थे। मैं अक्सर उनसे मिलने जाया करता था। उनके पास जापान और अमेरिका से स्वामी राम के खत आया करते थे। बहुत से खत उन्होंने मेरी प्रार्थना पर मुझे दिये थे। उनमें स्वामी राम की रची हुई बहुत सी अंग्रेजी उर्दू और फारसी की नज्में भी थी। आज सोचकर दुःख होता है कि मैं उन्हें सम्हाल कर न रख सका और न ही इस समय कोई नज्म मुझे याद आ रही है।

स्वामी राम के दर्शन मुझे जिन्दगी में केवल एक बार हुए। अमेरिका से लौट आये थे, मैं कालिज की छुट्टियों में अपने गांव खतौली जिला मुजफ्फर नगर आया हुआ था। मालूम हुआ स्वामी राम मुजफ्फर नगर आ रहे हैं। मैं घर का त्योहार छोड़कर मुजफ्फर नगर पहुंचा। ठीक दिवाली का दिन था, स्वामी राम अपने परम और बूढ़े शिष्य राय बहादुर निहाल बन्द के यहां ठहरे हुए थे। हम लोग वहां पहुँचे। बीच में आराम कुर्सी रखी थी, हम लोग फर्श पर बैठ कर इन्तजार करने लगे। थोड़ी देर में स्वामी राम

—प्रह्लाद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लाला दुर्गादास जी की कोठी पर दिया गया प्रवचन

भजन

राम नाम क्यों नहीं गायो मूरख मन।
काहे को तू विषय रस चाख्यो,
शाम भजन क्यों नहीं गायो गायो
यह संसार कागज की पुड़िया,
जल लागे गल जायो जायो
चाखन लाग्यो रूई उड़ गई,
हाथ कछु नहीं आयो आयो
सूरदास जब पकड़न लागयो
सिर धुन धुन पछतायो आयो
राम शरण क्यों नहीं आयो
निशिदिन विषयन के संग राचो,
राम शरण क्यों नहीं आयो आयो
मूरख मन .....

माताओ देवियो व सज्जनो! यह सब नहीं है, शान्ति नहीं है तो उसने कुछ भी हासिल नहीं किया। परमात्मा का नाम ही तो gifts हैं, दात हैं सुरीली आवाज इत्यादि। संस्कार सब के अन्दर डालने चाहिये। प्रभु के सबसे बड़ी बात है। ऋषियों ने तो यहां तक आगे जैसी मांग होगी वैसी प्राप्ति होगी। कहा है कि यदि प्राणों की आहुति लेकर नाम साक्षी रूप से सब के अन्दर है। ईश्वर को दान दे दे तो यह सबसे बढ़कर है। चाहने वाला दान पुण्य कर रहा है पर उसके मुकाबले में दुनियांदार मिनिस्ट्री चाहता है। हक्सले, डारविन अपने समय के अद्वितीय लोग सैकड़ों रूपये इसमें लगा देता है जब वस्तु हो चुके हैं, वह भी अपने अनुभवों से बताते की payment (कीमत अदा) कर देते हैं है — इन्सान मरने के बाद कहां जाता है? तो वह मिल ही जाती है। सब से उत्तम इसका उत्तर देने हैं कि मनुष्य की reality gift (देन) उसकी भक्ति ही है। यदि peace (असलीयत) नहीं मरती, इसकी हकीकत नहीं of mind (मन की शान्ति) नहीं है, निर्भयता मरती। जैसे हकीकतराय, ध्रुव, प्रह्लाद इत्यादि।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जीवात्मा भी up down (ऊंचा नीचा) होता रहता है। कोटि कोटि लोक है। जीवात्मा की Transfer (तबदीली) होती रहती है। एक सैकेंड में दस चक्कर काटती है विश्व के अन्दर मेरी आवाज। इसी प्रकार जीवात्मा जब एक शरीर को छोड़ती है, जहाँ उसकी वासना होती है, वहीं फिर ले जाती है। "अन्त मतः सो गतः" जैसी desire होतीं हैं वैसा बनता चला जाता है शुभ अशुभ हर एक कर्म की सजा सजा है और ईश्वर इसे for better (कतई अच्छा) समझते हैं।

यह निश्चित बात है कि जो सन्त गुरू की सेवा करता है, एक दिन प्रकृति उसकी सेवा करता है, वह अपने बच्चों से अवश्य ही करवाता है। Automatically (स्वतः) हर चीज उसके आगे झुकती हैं।

इन्सान की purity of mind (मन की पवित्रता) और concentration of mind (मन की एकाग्रता) ही उसका महत्व है। विश्व क्या माता-पिता तक झुकने लग जाते हैं। डारविन ने भी कहा है इन्सान अपने ख्यालों के मुताबिक होता जाता है जब इस शरीर को त्यागता है तो। आप Medical law (मेडिकल कानून) के जानने वाले हो सकते हैं, Lawyear (वकील) आप हो सकते है इस तरह कोई जरूरी नहीं कि आप Spiritualitsm (अध्यात्मवाद) को जानने वाले हों।

स्वामी राम ने कहा यदि भाव से बनता बिगड़ता है तो क्यों न परमात्मा ही करें।

निशदिन जो मन ब्रह्म रटत है,
सो मन होत है ब्रह्म स्वरूपा।

Practice (अभ्यास) जीवन में जिस प्रकार का करता है, वैसा ही शरीर लेता है शान्त भाव वाला शान्त लोकों में जाता है। स्वामी राम कहते हैं उस omnipresent (सर्व-व्यापक), अजर, अमर, सर्वदाता का चिन्तन करना चाहिये।

"ईश्वर तो एक कल्पवृक्ष है।" प्रार्थना वाले कमरे को lock (ताला लगा) कर दो। शुभ wave viborattons (परमाणु) छोड़ी हुई होती है वहां Healthy (सात्विक) परमाणु बीमारियों के परमाणुओं को खा जाते है। संतों के आने से पापमय परमाणु शुभ परमाणुओं से खाए जाते हैं। स्वामी राम की birth place (जन्म स्थान) पर साढ़े चार सेर मिट्टी लिये foreigner (विदेशी) बैठा था। कारण पूछा तो कहा — Spiritual Science अध्यात्म विज्ञान को पढ़कर Modern Science (नवीन साईन्स) ने सिद्ध किया कि टाईफाईड के germs परमाणु २०, २१ दिन तक रहते हैं, मलेरिया के ३० दिन तक, टी. बी के सात साल तक परमाणु रहते हैं। ऐ मन! तू ज्योत स्वरूप है, अपना आप पछान। ऐसे सन्त की जन्मभूमि उस Atmosphere (वातावरण) के अन्दर १०१ साल तक परमाणु रहते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संत ज्ञानेश्वर ने ग्यारह वर्ष की आयु में गीता लिखनी शुरू कर दी। उनसे पूछा गया क्यों इतनी छोटी आयु में आकृष्ट हो गए उत्तर देते हैं — दो गठरियां है — एक लोहे को दूसरी सोने की। दोनों at a time (एक ही समय) उढीनी हैं। यदि दोनों न उठाई जा सकें तो एक एक को छोड़ना ही होगा। अब कहो सोने की छोड़नी या लोहे की ? लोहे की छोड़नी ही बेहतर होगी क्योंकि मामूली सोना गठरी से निकालने से लोहे की गठरी फिर तैय्यार हो सकती है पर इसके विपरीत नहीं हो सकता लोहे की गठरी है दुनियां, उसका त्याग कर दिया है। मैंने भगवान नाम रूपी सोने की डाली को उठा लिया है दोनों एक ही समय मुझ से नही उठाई जाती। ★

इस पावन शुभ

प्रह्लाद विरत, वर से लिपटी
निज असुर भ्रात के कार्य लग्न
उस महा निशिचरी को ज्वाला में
प्रथम बिठा फिर ध्यान मग्न
वैष्णव प्रिय हरि को नतमस्तक हो नमन करो
फिर बोलो, भूलो, क्षमा करो,
अब नही करेंगे वे त्रुटियां
अब तक अन्जाने में होली
नव रंग, नया सब संग, नहीं कुछ भंग
मिलन भी जीवन का इक अंग
मिलें न क्यों मिलकर खुद से
खड़ी जब स्वागतार्थ होली।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ज़िन्दा से जावेद राम

(स्वामी रामतीर्थ जी की खिदमत में नज़राना-ए-अकीदत)

—श्री दर्शन सिंह दुग्गल २१६, लक्ष्मीबाई नगर, नई दिल्ली-२३

किस तरह मुमकिन हो स्वामी रामतीर्थ की सना।
पैकर-ए-महरो-वफा था, साहिब-ए-सबरो रजा॥

ऐसा आरिफ राजेदिल का हिन्द में पैदा हुआ।
सारा आलम जिसके हुस्न-ए-खुल्क पर शैदा हुआ॥

कृष्ण का आशिक था और अहल-ए-इरादत राम का।
नग़मा-पैरा भी था वो तौहिद के पैगाम का॥

राज-ए-हस्ती उसने सब पर आशकारा कर दिया।
उसने हर दिल को शराब-ए-मारफत से भर दिया।

फलसफे का आईना थी योग कीतनवीर भी।
जिन्दगी उसकी मुजस्सम त्याग की तस्वीर भी॥

जहन था उसका कुछ ऐसा, मरहम-ए-अहले-ए नयाज़।
उसकी महफिल में न था छोटे बड़ा का इमतयाज़॥

उसपे रोशन था ज़माने का तमाशा-ए-फसूं।
जानता था वो माआल-ए-हस्ती-ए-दुनिया-ऐ-दूं॥

नजरे दरिया होके दरिया की रवानी बन गया।
उसने यूं खुद को मिटाया जावीदानी बन गया।

गौहर-ए-पंजाब जुज़्व-ए-मौज-ए-दरया हो गया।
ऐसा पोशीदा हुआ, आरिफ के पैदा हो गया॥

किसको मिलते है भला ऐसे खुश ईकबाली के दिन।
जिन्दगी, सन्यास और देहान्त, दिवाली के दिन॥

मारफत का रास्ता दिखला गया संसार को।
बहर ने दिल में छुपाया अब्र-ए-गौहर बार को॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वासिल-ए-हक तेरा हो जाना ए-आरिफ जोर-ए-आब ।
यह सिखाता है हमें "संसार है यह एक ख्वाब" ।।

जिन्दगानी जुज़ब-ए-बहर-ए-मारफत होने का नाम ।
कायनात-ए-आब-ओ-गिल में है तग़य्यर का कयाम ।।

महरम-एनक्स-ए-अज़ायम है खिरद का हर वरक ।
तूने दुनिया को दिया 'खुद-एतमादी का सबक" ।।

दिल को होना चाहिये इश्क-ए-चमन का आईना ।
सीरत-ओ-किरदार को हुस्न-ए-वतन का आईना ।।

जज़ब-ए-हुस्न ओ ईश्क हो कर हो गया तू जाविदा ।
भूल जाये तुझको ये संसार, मुमकिन है कहां ।।

—★—

स्वामी राम की जल समाधि पर स्वर्गीय अलामा सर मुहम्मद इकबाल के उद्गार

हम बगल दरया से है ए कतराए बेताब तू
पहले गोहर था बना, अब गोहरे, नायाब तू ।
क्या :—ए ब्रह्म रुपी विस्तृत जलाशय के ।
अंश, तू जो अपने स्रोत में समा जाने की

उत्कट अभिलाषा लिये हुये था, इस समय ब्रह्म में लीन होकर, ब्रह्म रूप हो चुका है। तू पहले पार्थिव शरीर में भी अनमोल मोती था अर्थात सद्गुणों से सम्पन्न था परन्तु जल समाधि के अनन्तर जो तू एक दुर्लभ रत्न बन गया है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आह खोला किस अदा से तूने राजे रंगो बू ।
मैं अभी तक हूँ असीरे इम्तेयाजें रंगो बू ।

व्या ; किस निराली शान ले तू ने माया के अनाम्म रहस्य को संसार के सामने रखा और उसके नाम रूप का बाध किया, परन्तु कितना खेद है कि मैं (तेरा समकालीन सखा) हूं कि अभी तक नाम रूप की उधेड़ बुन में ही संसार का कंदी बना हुआ हूँ ।

मिट के गोया जिन्दगी का शोरशें महशर-बना ।
यह शरारा बुझ के आतश खानाए आज़र बना ।।

व्या :—तेरे जीवन की ध्वनि शान्त होकर प्रलय काल की ध्वनि के रूप में परिणित हो गई । तेरे जीवन की चिन्गारी शान्त क्या हुई, अविनाशी ज्योति-स्तम्ब (ब्रह्म) का सदा-सदा के लिये रूप बन गई ।

नफ़ी हस्ती इक करिश्मा है दिले आगाह का ।
"ला" के दरिया में निहां मोती है "इल् अल्लाह" का ।।

व्या :—त्यागमय जीवन का चमत्कार आत्मज्ञानी ही दिखा सकता है । त्याग के समुद्र में गोता लगाने से ही "अद्वैत ब्रह्म" रूपी छुपा हुआ मोती हाथ लगता है ।

चश्मे नाबीना से मख़फ़ी मानिये अंजाम है ।
थम गई जिस दम तड़प सीमाव खीमे खाम है ।

व्या :—मानव का चरम लक्ष्य अर्थात् "ब्रह्म" मूढ़ता की आंख से ओझल है । जिस क्षण मन से वासना समाप्त होती है उसी क्षण वह मन चांदी के शुद्ध डले की भांति स्थिर और शुद्ध हो जाता है ।

तोड़ देता है बुते हस्ती को इब्राहीमे इश्क ।
होश का दारू है गोया मस्तीए तस्मीने इश्क ।।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

112396

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व्या :—जिस प्रकार हजरत इब्राहीम ने बूतों (मूर्तियों) को तोड़ा था था उसी प्रकार का प्रभु उत्कट प्रेम अहंकारमय जीवन का नाश करने वाला होता है । सच पूछो तो प्रभु प्रेम की मस्तो में खो जाना ही वास्तविक अर्थो में होश (ज्ञान) में आना है

क्या कहूँ जिन्दों से मैं इस शाहदे मस्तूर की ।
दार को समझे हुये हैं जो सजा मनसूर की ॥

व्या :—इस छुपे हुये साक्षी अर्थात ब्रह्म के सम्बन्ध में सर्व साधारण, तथाकथित, जीवित व्यक्तियों से क्या चर्चा करू । उनसे यह चर्चा करना सर्वथा व्यर्थ है ।

क्योंकि इन लोगों की दृष्टि वास्तविक मनसूर तक कहां पहुंच पाती है । वे तो हाड मांस के मनसूर को ही मनसूर समझ बैठे हैं और यह गलत विचार लिये बैठे हैं कि मनसूर के शरीर को फांसी लगाने से मनसूर को फांसी गई । मनसूर तो अविनाशी है । आत्मा अमर है ।

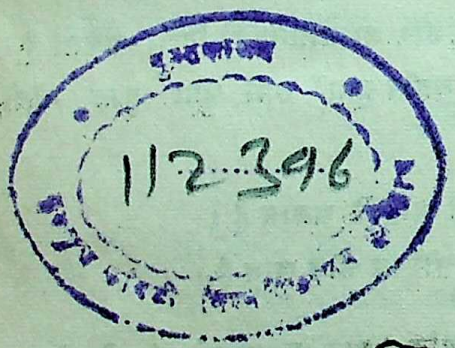

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

★ आश्रम समाचार ★

श्रद्धा, विश्वास इन दो तत्वों की व्याख्या करते हुए महाराज श्री, परमाध्यक्ष, स्वामी अमरमुनि जी महाराज ने कहा "विश्वास श्रद्धा का प्रथम चरण है, उसी श्रद्धा के साथ ही हमें आध्यात्मिक उन्नति प्राप्त होती है। विश्वास के साथ जब भावनात्मक सम्बन्ध होता है तब उसे, उस विश्वास को, श्रद्धा नाम दिया जाता है। श्रद्धा तत्व की प्रमुखता, उसके सम्बन्ध को ही समक्ष रखते हुए तार्किक विश्वास की उपेक्षा ऋषियों ने की और कहा तर्क से उस परमतत्व की प्राप्ति नहीं हो सकती"

आश्रम के प्रांगण में, राजपुर स्थित, बने शिव मन्दिर पर कलश की स्थापना हुई। इसी मन्दिर में सदाशिव का आगमन दिनांक २०-४-७८ को हो रहा है।

परमश्रद्धेय ब्रह्मलीन स्वामी गोविन्द प्रकाश जी महाराज की पुण्यस्मृति में रामप्रेमियों द्वारा रामायण अखण्ड पाठ हुआ।

महाराज श्री का दिल्ली शाखा में आगमन अन्य स्थानों पर सम्पन्न हुए सम्मेलनों में सम्मिलित होने के बाद हुआ। वहां पर आपने रामप्रेमियों को शुभाशीष दी। आप ६-४-७८ को राजपुर आश्रम पधारे यहां आपने भावी सदाशिव आगमन उत्सव के विषय में कार्यकर्ताओं को निर्देशित किया तथा दूनवासी रामप्रेमियों द्वारा हरिओ३म् सत्संग भवन में आयोजित ८-४-७६ के सत्संग में, जो संवत् प्रारम्भ निमित्त था, सम्मिलित होकर पर्व के महत्व को समक्ष रखते हुए संस्कृति के सन्दर्भ में पर्व की व्याख्या की।

अगले ही दिन रविवारीय सत्संग में भी आपने अपनी आशीष दी व संकेत किया राम के चरित्र का गुणगान तो हम करें ही साथ सच्चे राम प्रेमी बनने के लिए, उन चरित्रों को जीवन में व्यावहारिक रूप दें। यही स्वामी राम, स्वामी हरिओ३म् जी महाराज, स्वामी गोविन्द प्रकाश जी महाराज का जीवन दर्शन था। आश्रम का वातावरण पवित्र, शान्त व प्रकृतिरम्यता युक्त है।

स्वामी रामतीर्थ आध्यात्मिक विराट् सम्मेलन इस वर्ष २९ मई से प्रारम्भ हो रहा है जो ५ जून तक ५९ राजपुर रोड़ पर और ६ से १२ तक साधना सप्ताह के रूप में राजपुर आश्रम में मनाया जायेगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

-सूचना-

१-मासिक पत्रिका 'राम सन्देश' न मिलने पर अपने समपस्थ डाकखाने (पत्रालय) से पता करने के पश्चात हमें सूचित करें। क्योंकि कभी किसी कारणवश "राम सन्देश" १५ ता० तक निकलता है। इसलिए शिकायत पत्र अपनी २ ग्राहक संख्या सहित दिनांक २० के बाद प्रेषित करने का कष्ट करें।

२-आप आश्रम में किसी भी प्रकार का धन भेजते समय यह लिखना न भूलें कि वह धन किस निमित्त भेजा जा रहा है तथा चैक स्वामी रामतीर्थ मिशन के नाम पर ही भेजें।

३ यह प्रार्थना है कि जो पाठक इस पत्रिका के आजीवन सदस्य बनना चाहते हैं वे अपना सदस्यता शुल्क सम्पादक के नाम प्रेषित करें। सदस्यों को आजीवन पुनः बिना किसी शुल्क के यह पत्रिका प्रेषित की जायेगी।

४—स्वामी रामतीर्थ मिशन, राजपुर देहरादून के आजीवन सदस्यों को कार्यकारिणी की १९७७ गोष्ठी के निर्णयानुसार यह सूचित किया जाता है कि सदस्यता शुल्क वार्षिक १२ रु० के स्थान पर २० रु० कर दिया गया है तथा उन सदस्यों को मासिक पत्रिका का प्रेषण मास जनवरी १९७८ से नि:शुल्क किया जायेगा। अतः सदस्य अपना वार्षिक शुल्क भेजते समय १२ रु० के स्थान पर २० रु० प्रेषित करने का कष्ट करें।

५—'राम सन्देश' के विदेशी ग्राहक अपना वार्षिक शुल्क १५ रू० भेजें। क्योंकि परमाध्यक्ष जी की आज्ञानुसार १२ रु० के स्थान पर ३ रु० वृद्धि का निर्णय लिया गया है।

एक पोस्ट कार्ड

ग्राहक संख्या ....

श्री/श्रीमती .....

स्थान .....

डाकखाना .....

जिला .....

मासिक पत्र—

"राम - सन्देश"

स्वामी रामतीर्थ मिशन

राजपुर, देहरादून (यू. पी.)

Pin-248009 - भारत

स्वामी रामतीर्थ मिशन, राजपुर देहरादून (उ०प्र०) के लिए प्रकाशक स्वामी अमर मुनि द्वारा न्यू आईडियल प्रिंटिंग हाऊस, ४ बी, नेशविला रोड देहरादून में, मुद्रित।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Compiled
1999-2000

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri